इस्लाही ख़ुतबात

1

जस्टिस मौलाना मुहम्मद तक़ी उस्मानी

इस्लाही ख़ुतबात

(1)

जस्टिस मौलाना मुहम्मद तक़ी उस्मानी

अनुवादक
मु० इमरान क़ासमी एम०ए० (अलीग)

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा०) लिमि०
422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट जामा मस्जिद देहली 6
फोन आफ़िस 3265406,3279998, आवास 3262486

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

नाम किताब	इस्लाही खुतबात जिल्द (1)
ख़िताब	मौलाना मु० तक़ी उस्मानी
अनुवादक	मु० इमरान क़ासमी
संयोजक	मौ० नासिर ख़ान
तायदाद	1100
प्रकाशन वर्ष	मई 2001
कम्पोज़िंग	इमरान कम्प्यूटर्स मुज़फ़्फ़र नगर (0131-442408)

>>>>>>>>>>>

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा०) लिमि०

422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट जामा मस्जिद देहली 6

फ़ोन आफ़िस, 3265406,3279998, आवास, 326

अपनी बात

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

हज़रत मौलाना मुहम्मद तक़ी उस्मानी दामत बरकातुहुम की शख़्सियत भारत–पाकिस्तान के अवाम के लिये किसी तआरुफ़ (परिचय) की मोहताज नहीं, आप उर्दू की मशहूर तफ़्सीरे क़ुरआन "मआरिफ़ुल क़ुरआन" के मुसन्निफ़ और मुफ़्ती–ए–आज़म पाकिस्तान मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह० के साहिबज़ादे हैं, आपको अल्लाह तआला ने तक़रीर व तहरीर दोनों में कमाल अता फ़र्माया है।

आप पचास से ज़्यादा किताबों के मुसन्निफ़ हैं जिनको अल्लह पाक ने ज़बरदस्त मक़्बूलियत से नवाज़ा है, इसके अलावा आपकी सैंकड़ों तक़रीरें शाया होकर मक़्बूल हो चुकी हैं। आपकी तक़रीरों के मज्मूए "इस्लाही ख़ुतबात" के नाम से दस जिल्दों में शाया हो चुके हैं और अभी यह सिलसिला जारी है।

फ़रीद बुक डिपो देहली ने आपकी कई किताबों के अलावा छोटे छोटे रिसालों की शक्ल में आपकी बहुत सी तक़रीरें भी शाया करने का फ़ख़्र हासिल किया है। चूंकि हिन्दी हमारे मुल्क की सरकारी और एक बड़ी ज़बान है इसलिये हम पहली बार आपकी तक़रीरों के मज्मूए को हिन्दी ज़बान में शाया करने का शर्फ़ हासिल कर रहे हैं, ताकि हिन्दी जानने और पढ़ने वाले इस क़ीमती ज़ख़ीरे से महरूम न रहें। इन तक़रीरों की पहली जिल्द आपकी ख़िदमत में पेश है, हमें उम्मीद है कि जल्द ही हम बाक़ी की जिल्दें भी शाया करके पाठकों को मुहैया कर सकेंगे। साथ ही इन तक़रीरों को उर्दू की तरह हिन्दी में भी अलग अलग रिसालों की शक्ल में शाया किया जा रहा है। पढ़ने वालों से दुआ की दरख़्वास्त है।

मुख़्लिस

मुहम्मद नासिर ख़ां

(प्रकाशक)

मुख़्तसर फ़िह्रिस्त

तफ़्सीली फ़िहरिस्ते मज़ामीन

(2) रजब का महीना

(3) नेक काम में देर न कीजिए

(4) सिफ़ारिश

(5) रोज़ा हम से क्या मुतालबा करता है?

(7) दीन की हक़ीक़त तस्लीम व रिज़ा

अक़्ल के काम का दायरा

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

اَلۡحَمۡدُ لِلّٰہِ نَحۡمَدُہٗ وَنَسۡتَعِیۡنُہٗ وَنَسۡتَغۡفِرُہٗ وَنُؤۡمِنُ بِہٖ وَنَتَوَکَّلُ عَلَیۡہِ وَنَعُوۡذُ بِاللّٰہِ مِنۡ شُرُوۡرِ اَنۡفُسِنَا وَمِنۡ سَیِّئَاتِ اَعۡمَالِنَا مَنۡ یَّھۡدِہِ اللّٰہُ فَلَا مُضِلَّ لَہٗ وَمَنۡ یُّضۡلِلۡہُ فَلَا ھَادِیَ لَہٗ وَنَشۡھَدُ اَنۡ لَّا اِلٰہَ اِلَّا اللّٰہُ وَحۡدَہٗ لَا شَرِیۡکَ لَہٗ وَنَشۡھَدُ اَنَّ سَیِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوۡلَانَا مُحَمَّدًا عَبۡدُہٗ وَرَسُوۡلُہٗ صَلَّی اللّٰہُ تَعَالٰی عَلَیۡہِ وَعَلٰی اٰلِہٖ وَ اَصۡحَابِہٖ وَبَارَکَ وَسَلَّمَ تَسۡلِیۡمًا کَثِیۡرًا کَثِیۡرًا اَمَّا بَعۡدُ:

मेरे लिये इस अकेडमी के मुख़्तलिफ़ तर्बियती कोर्सों में हाज़री का यह पहला मौक़ा नहीं है, बल्कि इससे पहले भी जो तरबियती कोर्स आयोजित होते रहे हैं, उनसे भी ख़िताब करने का मौक़ा मिला, इस मर्तबा मुझसे यह फ़रमाइश की गयी कि मैं "इस्लामा-ईज़ेशन आफ़ लाज़"(ISLAMISATION OF LAWS) के सिलसिले में आप हज़रात से कुछ गुफ़्तगू करूं, इत्तिफ़ाक़ से"इस्लामाईज़ेशन आफ़ लाज़" का मौज़ू बड़ा लम्बा और फैला हुआ है, और मुझे इस वक़्त एक और जगह भी जाना है, इस लिये वक़्त भी मुख़्तसर है, लेकिन इस मुख़्तसर से वक़्त में "इस्लामाईज़ेशन" के सिर्फ़ एक पहलू की तरफ़ आप हज़रात की तवज्जोह मब्ज़ूल कराना चाहता हूं।

"बुनियाद परस्त" एक गाली बन चुकी है

जब यह आवज़ बुलन्द होती है कि हमारा क़ानून, हमारी मओशित, हमारी सियासत या हमारी ज़िन्दगी का हर पहलू इस्लाम के सांचे में ढलना चाहिये तो सवाल पैदा होता है कि क्यों ढलना चाहिये? इसकी क्या दलील है? यह सवाल इसलिये पैदा हुआ कि

आज हम एक ऐसे मुआशरे में ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं जिस में सैकूलर तसव्वुरात (Secular Ideas) इस दुनिया के दिल व दिमाग़ पर छाये हुए हैं और यह बात तक़रीबन सारी दुनिया में बतौर एक मुसल्लमा मान ली गयी है कि किसी रियासत को चलाने का बेहतरीन सिस्टम सैकूलर सिस्टम (SECULAR SYSTEM) है, और इसी सैकूलरिज़्म (Secularism) के दायरे में रहते हुए रियासत को कामयाबी के साथ चलाया जा सकता है, ऐसे माहौल में जहां दुनिया की ज़्यादातर रियासतें बड़ी से लेकर छोटी तक, वे न सिर्फ़ यह कि सैकूलर (Secular) होने का दावा करती हैं बल्कि उस पर फ़ख़्र भी करती हैं, ऐसे मुआशरे में यह आवाज़ बुलन्द करना कि "हमें अपने मुल्क को, अपने क़ानून को, अपनी मआशित और सियासत को, अपनी ज़िन्दगी के हर शोबे को इस्लामाईज़ (ISLAMIZE) करना चाहिए" या दूसरे लफ़्ज़ों में यह कहा जाए कि मुआशरे को चौदह सौ साल पुराने उसूलों के मातहत चलाना चाहिए तो यह आवाज़ आजकी इस दुनिया में अचंभी और अजनबी मालूम होती है, और इसको तरह तरह के तानों से नवाज़ा जाता है, बुनियाद परस्ती और फ़न्डामेंटलिज़्म (Fundamentalism) की इस्तिलाह उन लोगों की तरफ़ से एक गाली बनाकर दुनिया में मशहूर कर दी गयी है। और उनकी नज़र में हर वह शख़्स बुनियाद परस्त (Fundamentalist) है जो यह कहे कि "रियासत का निज़ाम दीन के ताबे होना चाहिये, इस्लाम के ताबे होना चाहिये" ऐसे शख़्स को बुनियाद परस्त का ख़िताब देकर बदनाम किया जा रहा है, हालांकि अगर इस लफ़्ज़ के असल मायनों पर ग़ौर किया जाये तो यह कोई बुरा लफ़्ज़ नहीं था, फ़न्डामेंटलिस्ट के मायने यह हैं कि जो बुनियादी उसूलों (Fundamental Principles) को इख़्तियार करे, लेकिन उन लोगों ने इसको गाली बना कर मशहूर

कर दिया है।

इस्लामाईज़ेशन क्यों?

आजकी मज्लिस में, मैं सिर्फ़ इस सवाल का जवाब देना चाहता हूं कि हम क्यों अपनी ज़िन्दगी को इस्लामाईज़ (ISLAMIZE) करना चाहते हैं? और हम मुल्की क़वानीन को इस्लाम के सांचे में क्यों ढालना चाहते हैं? जब्कि दीन की तालीमात चौदह सौ साल बल्कि ज़्यादा तर तो हज़ारों साल पुरानी हैं।

हमारे पास अक़्ल मौजूद है

इस सिलसिले में, मैं जिस पहलू की तरफ़ तवज्जोह दिलाना चाहता हूं वह यह है कि एक सैकूलर रियासत (SECULER STATE) जिसको लादीनी रियासत कहा जाये, वह अपने निज़ामे हुकूमत और निज़ामे ज़िन्दगी को किस तरह चलाये? उसके लिये उसके पास कोई उसूल मौजूद नहीं हैं, बल्कि यह कहा जाता है कि हमारे पास अक़्ल मौजूद है, हमारे पास मुशाहदा और तजुर्बा मौजूद है, इस अक़्ल, मुशाहदे और तजुरबे की बुनियाद पर हम यह फ़ैसला कर सकते हैं कि हमारी इस दौर की ज़रूरियात क्या हैं? इसके तक़ाज़े क्या हैं? और फिर उसके लिहाज़ से क्या चीज़ हमारी मस्लिहत के मुताबिक़ है? और फिर उसी मस्लिहत के मुताबिक़ हम अपने क़वानीन को ढाल सकते हैं, बदले हुए हालात में हम उसके अन्दर तब्दीली ला सकते हैं और तरक़्क़ी कर सकते हैं।

क्या अक़्ल आख़री मेयार (पैमाना) है

एक सैकूलरिज़म हुकूमत में अक़्ल, तजुरबे और मुशाहदात को आख़री मेयार क़रार दे दिया गया है, अब देखना यह है कि यह मेयार कितना मज़बूत है? क्या यह मेयार इस लायक़ है कि

कियामत तक आने वाली इन्सानियत की रहनुमाई कर सके? क्या यह मेयार तन्हा अक़्ल के भरोसे पर,तन्हा मुशाहदात और तजुरबे के भरोसे पर हमारे लिये काफ़ी हो सकता है?

इल्म के ज़रीए (सूत्र)

इसके जवाब के लिये हमें यह देखना होगा कि कोई भी निज़ाम जब तक अपनी पुश्त पर अपने पीछे इल्मी हक़ायक़ का सर्माया न रखता हो उस वक़्त तक वह कामयाबी से नहीं चल सकता, और किसी भी मामले में इल्म हासिल करने के लिये अल्लाह तआला ने इन्सान को कुछ ज़राये अता फ़रमाये हैं, उन ज़राये में से हर एक का मख़्सूस दायरा–ए–कार है, उस दायरा–ए–कार तक वह ज़रिया काम देता है और उससे फ़ायदा उठाया जा सकता है, लेकिन उससे आगे वह ज़रिया काम नहीं देता है उससे फ़ायदा नहीं उठाया जा सकता।

पांचों हवास का दायरा–ए–कार

मिसाल के तौर पर इन्सान को सब से पहले जो इल्म के ज़राये अता हुए वे उसके हवासे ख़म्सा (पांच हवास) हैं, आंख, कान, नाक और ज़बान वग़ैरह, आंख के ज़रिये देख कर बहुत सी चीज़ों का इल्म हासिल होता है, ज़बान के ज़रिये चख कर इल्म हासिल होता है, नाक के ज़रिये सूंघ कर इल्म हासिल होता है, हाथ के ज़रिये छू कर इल्म हासिल होता है, लेकिन इल्म के ये पांच ज़राये जो मुशाहदात की सर्हद में आते हैं, इनमें से हर एक का एक दायरा–ए–कार (Jurisdiction) है, उस दायरा–ए– कार से बाहर वह ज़रिया काम नहीं करता, आंख देख सकती है लेकिन सुन नहीं सकती, कान सुन सकता है लेकिन देख नहीं सकता, नाक सूंघ सकती है लकिन देख नहीं सकती, अगर कोई शख़्स यह

चाहे कि मैं आंख बन्द कर लूं और कान से देखना शुरू कर दूं तो उस शख़्स को सारी दुनिया अहमक़ कहेगी, इस लिये कि कान इस काम के लिये नहीं बनाया गया है, अगर कोई शख़्स उससे कहे कि तुम्हारा कान नहीं देख सकता, इसलिये कान से देखने की तुम्हारी कोशिश बिल्कुल बेकार है, जवाब में वह शख़्स कहे कि अगर कान देख नहीं सकता तो वह बेकार चीज़ है, तो उसको सारी दुनिया अहमक़ कहेगी, इसलिये कि वह इतनी बात भी नहीं जानता कि कान का एक दायरा–ए–कार है, उस हद तक वह काम करेगा, उससे अगर आंख का काम लेना चाहोगे तो वह नहीं करेगा।

इल्म का दूसरा ज़रिया "अक़्ल"

फिर जिस तरह अल्लाह तआला ने हमें इल्म के हासिल करने के लिये ये पांच हवास अ़ता फ़रमाये हैं, एक मर्हले पर जा कर इन पांचों हवास की परवाज़ ख़त्म हो जाती है, उस मर्हले पर न आंख काम देती है, न कान काम देता है, न ज़बान काम देती है, न हाथ काम देता है, यह वह मर्हला है जहां चीज़ें बराहे रास्त मुशाहदे की गिरफ़्त में नहीं आतीं, उस मौक़े पर अल्लाह तआला ने हमें और आपको इल्म का एक और ज़रिया अ़ता फ़रमाया है और वह है "अक़्ल" जहां पर हवासे ख़मसा काम करना छोड़ देते हैं वहां पर "अक़्ल" काम आती है, जैसे मेरे सामने यह मेज़ रखी है, मैं आंख से देख कर यह बता सकता हूं कि इस का रंग क्या है, हाथ से छू कर मालूम कर सकता हूं कि यह सख़्त लकड़ी है, और इस पर फ़ारमिका लगा हुआ है, लेकिन इस बात का इल्म कि यह मेज़ वजूद में कैसे आई? यह बात मैं न तो आंख से देख कर बता सकता हूं, न कान से सुन कर, न हाथ से छू कर बता सकता हूं,

इसलिये कि इसके बनने का अमल मेरे सामने नहीं हुआ, इस मौके पर मेरी अक़्ल रहनुमाई करती है कि यह चीज़ जो इतनी साफ़ सुथरी बनी हुई है, खुद बखुद वजूद में नहीं आ सकती, इसको किसी बनाने वाले ने बनाया है, और वह बनाने वाला अच्छा तजुर्बेकार माहिर बढ़ई (Carpenter) है, जिसने इसको ख़ूबसूरत शक्ल में बनाया है, इसलिये यह बात कि इसको किसी कार पेंटर ने बनाया है मुझे मेरी अक़्ल ने बताई, तो जिस जगह पर मेरे हवासे ख़म्सा ने काम करना छोड़ दिया था, वहां मेरी अक़्ल काम आई और उस ने मेरी रहनुमाई करके एक दूसरा इल्म अ़ता किया।

अक़्ल का दायरा-ए-कार

लेकिन जिस तरह इन पांच हवास का दायरा-ए-कार ला महदूद (Unlimited) नहीं था, बल्कि एक हद पर जाकर इन का दायरा-ए-कार ख़त्म हो गया था, इसी तरह अक़्ल का दायरा-ए-कार (Jurisdiction) भी ला महदूद (Unlimited) नहीं है, अक़्ल भी एक हद तक इन्सान को काम देती है, एक हद तक रहनुमाई करती है, उस हद से आगे अगर इस अक़्ल को इस्तेमाल करना चाहेंगे तो वह अक़्ल सही जवाब नहीं देगी, सही रहनुमाई नहीं करेगी।

इल्म का तीसरा ज़रिया "पैग़ाम-ए-इलाही"

जिस जगह अक़्ल की परवाज़ ख़त्म हो जाती है, वहां अल्लाह तबारक व तआ़ला ने इन्सान को एक तीसरा ज़रिया इल्म का अ़ता फ़रमाया है, और वह है "वही-ए-इलाही" यानी अल्लाह तबारक व तआ़ला की तरफ़ से पैग़ाम और आसमानी तालीम, यह इल्म का ज़रिया शुरू ही उस जगह से होता है जहां अक़्ल की परवाज़ ख़त्म हो जाती है, इसलिये जिस जगह "वही-ए-इलाही" आती है,

उस जगह पर अक़्ल का इस्तेमाल करना बिल्कुल ऐसा ही है जैसे कि आंख के काम के लिये कान को इस्तेमाल करना, कान के काम के लिये आंख को इस्तेमाल करना, इसके हरगिज़ यह मायने नहीं कि अक़्ल बेकार है, नहीं बल्कि वह कार आमद चीज़ है, शरत यह है कि आप उसको दायरा–ए–कार (Jurisdiction) में इस्तेमाल करें, अगर उसके दायरा–ए–कार से बाहर इस्तेमाल करेंगे तो यह बिल्कूल ऐसा ही होगा कि जैसे कोई शख़्स आंख और कान से सूंघने का काम ले।

इस्लाम और सैकूलर निज़ाम में फ़र्क़

इस्लाम और एक सैकूलर निज़ामे ज़िन्दगी में यही फ़र्क़ है कि सैकूलर निज़ाम में इल्म के पहले दो ज़राये (सूत्रों) को इस्तेमाल करने के बाद रुक जाते हैं, उनका कहना यह है कि इन्सान के पास इल्म के हासिल करने का कोई तीसरा ज़रिया नहीं है, बस हमारी आंख, कान, नाक है और हमारी अक़्ल है, इससे आगे कोई और ज़रिया–ए–इल्म नहीं है, और इस्लाम यह कहता है कि इन दोनों ज़राये के आगे तुम्हारे पास एक और ज़रिया–ए–इल्म भी है और वह है ''वही–ए–इलाही''।

वही–ए–इलाही की ज़रूरत

अब देखना यह है कि इस्लाम का यह दावा कि अक़्ल के ज़रिये सारी बातें मालूम नहीं की जा सकतीं, बल्कि आसमानी हिदायात की ज़रूरत है, वही–ए–इलाही की ज़रूरत है, पैग़म्बरों और रसूलों की ज़रूरत है, आसमानी किताबों की ज़रूरत है, इस्लाम का यह दावा हमारे मौजूदा मुआशरे में किस हद तक दुरुस्त है?

अक़्ल धोखा देने वाली है

आज कल अक़्ल परस्ती (Rationalism) का बड़ा ज़ोर है और कहा जाता है कि हर चीज को अक़्ल की तराज़ू पर परख कर और तोल कर इख़्तियार करेंगे, लेकिन अक़्ल के पास कोई ऐसा लगा बंधा ज़ाबता (Formula) और कोई लगा बंधा उसूल (Principle) नहीं है,जो आलमी हकीक़त (Universl- Truth) रखता हो, जिसको सारी दुनिया के इन्सान तस्लीम कर लें और उसके ज़रिये वे अपने ख़ैर व शर और अच्छाई बुराई का मेयार तजवीज़ कर सकें, कौन सी चीज अच्छी है? कौन सी चीज़ बुरी है? कौन सी चीज़ इख़्तियार करनी चाहिये? कौन सी चीज इख़्तियार नहीं करनी चाहिये? यह फ़ैसला जब हम अक़्ल के हवाले करते हैं तो आप तारीख़ उठा कर देख जाईये, उसमें आप को नज़र आयेगा कि इस अक़्ल ने इन्सान को इतने धोखे दिये हैं जिसका कोई शुमार और हिसाब मुम्किन नहीं, अगर अक़्ल को इस तरह आज़ाद छोड़ दिया तो इन्सान कहां से कहां पहुंच जाता है, इसके लिये मैं तारीख़ से चन्द (कुछ) मिसालें पेश करता हूं।

बहन से निकाह अक़्ल के ख़िलाफ़ नहीं

आज से तक़रीबन आठ सौ साल पहले इस्लामी दुनिया में एक फ़िर्क़ा पैदा हुआ था, जिसको "बातिनी फ़िर्क़ा" और "करामिता" कहते हैं, उस फ़िर्क़े का एक मशहूर लीडर गुज़रा है जिसका नाम उबैदुल्लाह बिन हसन क़ेरवानी है, उसने अपने पैरोकारों के नाम एक ख़त लिखा है वह ख़त बड़ा दिल चस्प है, जिसमें उसने अपने पैरोकारों को ज़िन्दगी गुज़ारने के लिये हिदायात दी हैं, उसमें वह लिखता है कि:

"मेरी समझ में यह बे–अक़्ली की बात नहीं आती है कि लोगों

के पास अपने घर में एक ख़ूबसूरत, सलीके वाली लड़की बहन की शक्ल में मौजूद है और भाई के मिज़ाज को भी समझती है, उसकी नफ़्सियात से भी वाक़िफ़ है, लेकिन यह बे-अक़्ल इन्सान उस बहन का हाथ अजनबी शख़्स को पकड़ा देता है, जिसके बारे में यह भी नहीं मालूम कि उसके साथ निबाह सही हो सकेगा या नहीं? वह मिज़ाज से वाक़िफ़ है या नहीं? और ख़ुद अपने लिये कभी कभी एक ऐसी लड़की ले आते हैं जो हुस्न व जमाल के ऐतबार से भी, सलीक़ा मन्दी के ऐतबार से भी, मिज़ाज शनासी के ऐतबार से भी उस बहन के हम पल्ला नहीं होती,

मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि इस बे-अक़्ली का क्या जवाज़ है कि अपने घर की दौलत तो दूसरों के हाथ में दे दे, और अपने पास एक ऐसी चीज़ ले आये जो उसको पूरी राहत व आराम न दे, यह बे-अक़्ली है, अक़्ल के ख़िलाफ़ है, मैं अपने पैरोकारों को नसीहत करता हूं कि वे इस बे-अक़्ली से परहेज़ करें और अपने घर की दौलत को अपने घर में ही रखें।

(अल फ़रकु बैनल फ़रकि लिल बग़दादी पेज २६७,)

बहन और जिन्सी तस्कीन

और दूसरी जगह उबैदुल्लाह हसन क़ेरवानी अक़्ल की बुनि-याद पर अपने पैरोकारों को यह पैग़ाम दे रहा है, वह कहता है कि:

"यह क्या वजह है कि एक बहन एक भाई के लिये खाना पका सकती है, उसकी भूख दूर कर सकती है, उसकी राहत के लिये उसके कपड़े संवार सकती है, उसका बिस्तर दुरुस्त कर सकती है, तो उसकी जिन्सी तस्कीन का सामान क्यों नहीं कर सकती? इसकी क्या वजह है? यह तो अक़्ल के ख़िलाफ़ है।

(अल फ़रकु बैनल फ़रकि लिल बग़दादी पेज २६७,)

अक़्ली जवाब ना मुम्किन है,

आप उसकी बात पर जितनी चाहें लानत भेजें, लेकिन मैं यह कहता हूं कि ख़ालिस अ़क्ल की बुनियाद पर जो वही–ए–इलाही की रहनुमाई से आज़ाद हो, जिसको वही–ए–इलाही की रोशनी मयस्सर न हो, इस अ़क्ल की बुनियाद पर आप उसके इस्तिदलाल का जवाब दें,ख़ालिस अ़क्ल की बुनियाद पर क़ियामत तक उसके इस्तिदलाल का जवाब नहीं दिया जा सकता।

अ़क्ली ऐतबार से बद अख़्लाक़ी नहीं

अगर कोई शख़्स यह कहे कि यह तो बड़ी बद अख़्लाक़ी की बात है, बड़ी घिनावनी बात है, तो उसका जवाब मौजूद है कि यह बद अख़्लाक़ी और घिनावना पन यह सब माहौल के पैदा किये हुए तसव्वुरात हैं, आप एक ऐसे माहौल में पैदा हुए हैं जहां इस बात को बुरा समझा जाता है, इसलिये आप इसको बुरा समझते हैं, वर्ना अ़क्ली ऐतबार से कोई ऐब नहीं।

नसब की हिफ़ाज़त कोई अ़क्ली उसूल नहीं

अगर आप कहते हैं कि इससे हसब व नसब का सिलसिला ख़राब हो जाता है तो इसका जवाब मौजूद है कि नसबों का सिलसिला ख़राब हो जाता है तो होने दो, इसमें क्या बुराई है? नसब का तहफ़्फ़ुज़ (हिफ़ाज़त) कौन सा ऐसा अ़क्ली उसूल है कि उसकी वजह से नसब का तहफ़्फ़ुज़ ज़रूर किया जाये।

यह भी फ़ितरी ख़्वाहिश (Human Urge) का हिस्सा है

अगर आप इस इस्तिदलाल के जवाब में यह कहें कि इस से तिब्बी तौर पर नुक़्सानात होते हैं, इसलिये कि अब यह तसव्वुरात सामने आये हैं कि इस्तिलज़ाज़ बिल अक़ारिब (क़रीबी रिश्तेदारों से

लज़्ज़त हासिल करना) (Incest) से तिब्बी नुक़्सानात भी होते हैं।

लकिन आपको मालूम है कि आज मग़रिबी दुनिया में इस मौज़ू पर किताबें आ रही हैं, कि इस्तिलज़ाज़ बिल अक़ारिब (Incest) इन्सान की फ़ितरी ख़्वाहिश (HUMAN URGE) का एक हिस्सा है, और इसके जो तिब्बी नुक़्सानात बयान किये जाते हैं, वे सही नहीं हैं। वही नारा जो आज से आठ सौ साल पहले उबैदुल्लाह बिन हसन केरवानी ने लगाया था, उसकी न सिर्फ़ सदाये बाज़ गश्त बल्कि आज मग़रिबी मुल्कों में इसपर किसी तरह अमल हो रहा है।

वही–ए–इलाही से आज़दी का नतीजा

यह सब क्यों हो रहा है? इसलिये कि अक़्ल का उस जगह इस्तेमाल किया जा रहा है जो अक़्ल के दायरा–ए–कार (Jurisdiction) में नहीं है, जहां वही–ए–इलाही की रहनुमाई की ज़रूरत है, और अक़्ल को वही–ए–इलाही की रहनुमाई से आज़ाद करने का नतीजा यह है कि इंग्लेंड की पारलियामेंट हम जिन्स परस्ती (Sexuality) के जायज़ होने का बिल तालियों की गूंज में मन्ज़ूर कर रही है।

और अब तो बा क़ायदा यह एक इल्म बन गया है, मैं एक मर्तबा इत्तिफ़ाक़ से न्यूयार्क के एक कुतुब ख़ाने में गया, वहां पर पूरा एक अलग सेक्शन था जिस पर यह उन्वान लगा हुआ था कि "गे स्टाईल आफ़ लाईफ़" (GAY STYLE OF LIFE) तो इस मौज़ू पर किताबों का एक ज़ख़ीरा आ चुका है, और बा क़ायदा उनकी अंजुमनें हैं, उनके गुरूप और जमाअतें हैं, और बड़े बड़े ओहदों पर फ़ाइज़ हैं, उस ज़माने में न्यूयार्क का मियर (Mayor) भी एक (Gay) था।

अक़्ल का फ़रेब

पिछले हफ़्ते के अमरीकी रिसाले टाईम को अगर आप उठा कर देखें तो उसमें यह ख़बर आई है कि ख़लीज की जंग में हिस्सा लेने वाले फ़ौजियों में से तक़रीबन एक हज़ार अफ़राद को सिर्फ़ इस लिये फ़ौज से निकाल दिया कि वे हम जिन्स परस्त (Homo Sexual) थे। लेकिन इस इक़दाम के ख़िलाफ़ शोर मच रहा है, मुज़ाहरे हो रहे हैं और चारों तरफ़ से ये आवाज़ें उठ रही हैं कि यह बात कि हम जिन्स परस्त होने की वजह से आपने इन लोगों को फ़ौज के ओहदों से बरख़ास्त कर दिया है, यह बात बिल्कुल अक़्ल के ख़िलाफ़ है, और उनको दोबारा बहाल करना चाहिये। और उनकी दलील यह है कि यह तो एक हियूमैन अर्ज (Human Urge) है, और आज (Human Urge) का बहाना लेकर दुनिया की हर बुरी से बुरी बात को जायज़ क़रार दिया जा रहा है, यह सब अक़्ल की बुनियाद पर हो रहा है कि बताओ अक़्ली ऐतबार से इसमें क्या ख़राबी है, और यह तो सिर्फ़ जिन्से इन्सानी की बात थी, अब तो जानवरों, कुत्तों, गधों और घोड़ों तक नौबत पहुंच गई है और इसको भी बा क़ायदा फ़ख़्रिया बयान किया जा रहा है।

अक़्ल का एक और फ़रेब

बात साफ़ करने के लिये एक और मिसाल अर्ज़ कर दूं कि यह ऐटम बम जिसकी तबाह कारियों से तमाम दुनिया आज ख़ौफ़–ज़दा और परेशान है और ऐटमी अस्लिहा में तख़्फ़ीफ़ के तरीके तलाश कर रही है, इन्साईकिलो पेडिया आफ़ बरटानीका (Encyclo- paedia of Britannica) में ऐटम बम पर जो लेख लिखा गया है उसको ज़रा खोल कर देखें, उसमें यह ज़िक्र किया

गया है कि दुनिया में ऐटम बम का तजुर्बा दो जगह पर किया गया है, एक हीरो शीमा और दूसरे नागा साकी पर, और उन दानों मक़ामात पर ऐटम बम के ज़रिये जो तबाही हुई उसका ज़िक्र तो बाद में आगे चल कर किया है, लेकिन इस मक़ाले (लेख) को शुरू यहां से किया गया है कि हीरो शीमा और नागा साकी पर जो ऐटम बरसाये गये उसके ज़रिये एक करोड़ इन्सानों की जानें बचाई गयीं और उनको मौत के मुंह से निकाला गया, और इस की मन्तिक़ ये लिखी है कि अगर हीरो शीमा और नागा साकी पर बम न गिराये जाते तो फिर जंग मुसल्सल जारी रहती और उसमें अन्दाज़ा यह था कि तक़रीबन एक करोड़ इन्सान और मर जाते। तो ऐटम बम का तआरुफ़ इस तरह कराया गया कि ऐटम बम वह चीज़ है जिससे एक कारोड़ इन्सानों की जानें बचाई गयीं, यह उसका जवाज़ (Juti- fication) पेश किया जा रहा है, जिस पर सारी दुनिया लानत भेजती है कि उन ऐटम बम के ज़रिये हीरो शीमा और नागा साकी में उन बच्चों की नस्लें तक तबाह कर दी गयीं, बे गुनाहों को मारा गया और यह जवाज़ (Justification) भी अक़्ल की बुनियाद पर है।

इसलिये कोई बुरी से बुरी बात और कोई संगीन से संगीन ख़राबी नहीं है जिसके लिये अक़्ल कोई न कोई दलील और कोई न कोई जवाज़ फ़राहम न कर दे।

आज सारी दुनिया फ़ाशिज़्म (Fascism) पर लानत भेज रही है और सियासत की दुनिया में हिटलर और मसूलीनी का नाम एक गाली बन गया है, लेकिन आप ज़रा उनका फ़ल्सफ़ा तो उठा कर देखें कि उन्हों ने अपने फ़ाशिज़्म (Fascism) को किस तरह फ़लसफ़ियाना अन्दाज़ में पेश किया है, एक मामूली समझ का

आदमी अगर फ़ाशिज़म के फ़ल्सफ़े को पढ़ेगा तो उसे ऐतराफ़ होने लगेगा कि बात तो समझ में आती है, माकूल बात है, यह क्यों है? इसलिये कि अक़्ल उनको उस तरफ़ लेजा रही है, बहर हाल! दुनिया की कोई बद से बदतर बुराई ऐसी नहीं है जिसको अक़्ल की दलील की बुनियाद पर सही तस्लीम कराने की कोशिश न की जाती हो, इसलिये कि अक़्ल को उस जगह इस्तेमाल किया जा रहा है जहां उसके इस्तेमाल की जगह नहीं है।

अक़्ल की मिसाल

अल्लामा इब्ने ख़लदून जो बहुत बड़े मोअर्रिख़ (इतिहास कार) और फ़ल्सफ़ी गुज़रे हैं, वह लिखते हैं कि अल्लाह तआ़ला ने इन्सान को जो अक़्ल दी है वह बड़ी काम की चीज़ है, लेकिन यह उसी वक़्त तक काम की चीज़ है जब तक इसको इसके दायरे में इस्तेमाल किया जाये, लेकिन अगर इसको इसके दायरे से बाहर इस्तेमाल करोगे तो यह काम नहीं देगी और फिर इस की एक बड़ी अच्छी मिसाल दी है कि अक़्ल की मिसाल ऐसी है जैसे सोना तौलने का कांटा, वह कांटा चन्द ग्राम सोना तौल लेता है और बस, इस हद तक वह काम देता है, और वह सिर्फ़ सोना तौलने के लिये बनाया गया है, अगर कोई शख़्स उस कांटे में पहाड़ तौलना चाहेगा तो उसके नतीजे में वह कांटा टूट जायेगा और जब पहाड़ तौलने के नतीजे में वह टूट जाये तो अगर कोई शख़्स कहे कि यह कांटा तो बेकार चीज़ है, इसलिये कि इससे पहाड़ तो तुलता नहीं है, उसने कांटे को तोड़ दिया तो उसे सारी दुनिया अहमक़ कहेगी।

बात दर असल यह है कि उसने कांटे का ग़लत जगह पर इस्तेमाल किया, और ग़लत काम में इस्तेमाल किया, इसलिये वह

टूट गया। (मुक़द्दमा इब्ने ख़लदून पेज ४४०)

इस्लाम और सैकूलरिज़्म में फ़र्क़

इस्लाम और सैकूलरिज़्म में बुनियादी फ़र्क़ यह है कि इस्लाम यह कहता है कि बेशक तुम अक़्ल इस्तेमाल करो, लेकिन सिर्फ़ उस हद तक जहां तक वह काम देती है, एक सर्हद ऐसी आती है जहां अक़्ल काम देना छोड़ देती है, बल्कि ग़लत जवाब देना शुरू कर देती है, जैसे कम्प्यूटर है, अगर आप उसको उस काम में इस्तेमाल करें जिसके लिये वह बनाया गया है तो वह फ़ौरन जवाब दे देगा, लेकिन जो चीज़ उस कम्प्यूटर में फ़ीड (Feed) नहीं की गयी, वह अगर उससे मालूम करना चाहें तो न सिर्फ़ यह कि वह कम्प्यूटर काम नहीं करेगा, बल्कि ग़लत जवाब देना शुरू कर देगा, इसी तरह जो चीज़ इस अक़्ल के अन्दर फ़ीड़ नहीं की गयी, जिस चीज़ के लिये अल्लाह तआला ने इन्सान को एक तीसरा ज़रिया–ए–इल्म अता फ़रमाया है, जो वही–ए–इलाही है, जब वहां अक़्ल को इस्तेमाल करोगे तो यह अक़्ल ग़लत जवाब देना शुरू कर देगी, यही वजह है जिसकी वजह से नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये, जिसके लिये कुरआन करीम उतारा गया, चुनांचे कुरआन करीम की आयत है कि:

"انا انزلنا الیك الكتاب بالحق لتحكم بين الناس" (سورہ نساء ۱۰۰)

हम ने आपके पास यह किताब भेजी जिससे वाकेअ् (हक़ीक़त) के मुवाफ़िक़ आप लोगों के दरमियान फ़ैसला करें।

यह कुरआन करीम आपको बताएगा कि हक़ क्या है और ना हक़ क्या है? यह बतायेगा कि सही क्या है और ग़लत क्या है? ये सब बातें आप को सिर्फ़ अक़्ल की बुनियाद पर मालूम नहीं हो सकतीं।

फ़िक्र की आज़ादी के अलम बर्दार इदारे का हाल

एक मशहूर बैनल अक़्वामी (अन्तर्राष्ट्रीय) इदारा है, जिसका नाम "एमेनेस्टी इन्टर नेशनल" है, उसका हेड आफ़िस पैरिस में है, आज से तक़रीबन एक महीने पहले उसके रिसर्च इस्कालर सर्वे करने के लिये पाकिस्तान आये हुए थे, ख़ुदा जाने क्यों वे मेरे पास भी इन्टरव्यू करने के लिये आ गये और उन्हों ने आकर मुझ से बात चीत शुरू की, कि हमारा मक़्सद फ़िक्र की आज़ादी और हुर्रियते फ़िक्र के लिये काम करना है, बहुत से लोग आज़ादी-ए-फ़िक्र की वजह से जेलों और क़ैदों में बन्द हैं, उनको निकालना चाहते हैं, और यह एक ऐसा ग़ैर विवादित मौज़ू है, जिस में किसी को इख़्तिलाफ़ नहीं होना चाहिये, मुझे इसलिये पाकिस्तान भेजा गया कि मैं इस मौज़ू पर मुख़्तलिफ़ तबक़ों के ख़्यालात मालूम करूं, मैंने सुना है कि आपका भी मुख़्तलिफ़ अहले दानिश से तअल्लुक़ है, इसलिये मैं आपसे भी कुछ सवालात करना चाहता हूं।

आज कल का सर्वे

मैंने उनसे पूछा कि आप यह सर्वे किस मक़्सद से करना चाहते हैं? उन्हों ने जवाब दिया कि मैं यह मालूम करना चाहता हूं कि पाकिस्तान के मुख़्तलिफ़ हलक़ों में इस सिलसिले में क्या रायें पाई जाती हैं, मैंने पुछा कि आप कराची कब तशरीफ़ लाये? जवाब दिया कि आज सुबह पहुंचा हूं, मैंने पूछा कि वापस कब तशरीफ़ ले जायेंगे? उन्हों ने जवाब दिया कि कल सुबह मैं इस्लामाबाद जा रहा हूं, (रात के वक़्त यह मुलाक़ात हो रही थी) मैं ने पूछा इस्लामाबाद में कितने दिन ठहरना होगा? फ़रमाया कि एक दिन इस्लामाबाद में रहूंगा, मैंने उनसे कहा कि पहले तो आप मुझे यह बताये कि आप पाकिस्तान के मुख़्तलिफ़ हलक़ों के सर्वे करने जा

रहे हैं और उसके बाद आप रिपोर्ट तय्यार करके पेश कर देंगे, आपका क्या ख़्याल है कि इन दो तीन शहरों में दो तीन दिन गुज़ारना आपके लिये काफ़ी होगा? कहने लगे: कि ज़ाहिर है कि तीन दिन में सबके ख़्यालात तो मालूम नहीं हो सकते, लेकिन मुख़्तलिफ़ फ़िक्र के हलक़ों से मिल रहा हूं, कुछ लोगों से मुलाक़ातें हुई हैं और इसी सिलसिले में आपके पास भी आया हूं, आप भी मेरी कुछ रहनुमाई करें, मैंने उनसे पूछा कि आज आपने कराची में कितने लोगों से मुलाक़ात की? कहने लगे कि मैंने तीन आदमियों से मुलाक़ात कर ली है, और चौथे आप हैं, मैंने कहा कि आप इन चार आदमियों के ख़्यालात मालूम कर के एक रिपोर्ट तय्यार कर देंगे कि कराची वालों के ख़्यालात यह हैं, माफ़ कीजिये मुझे आपके इस सर्वे की संजीदगी की पर शुबह है, इसलिये कि तहक़ीक़, रिसर्च और सर्वे का कोई काम इस तरह नहीं हुआ करता है, इसलिये मैं आपके किसी सवाल का जवाब देने से माज़ूर हूं, इस पर वह माज़िरत करने लगे कि मेरे पास वक़्त कम था, इसलिये सिर्फ़ चंद हज़रात से मिल सका हूं, मैंने अर्ज़ किया कि वक़्त की कमी की सूरत में सर्वे का यह काम ज़िम्मा लेना क्या ज़रूरी था? फिर उन्हों ने इसरार शुरू कर दिया कि अगरचे आपका ऐतराज़ दुरुस्त है, लेकिन मेरे चंद सवालात का जवाब तो आप दे ही दें, मैंने फिर माज़िरत की और अर्ज़ किया कि मैं इस ग़ैर संजीदा और ना तमाम सर्वे में किसी मदद से माज़ूर हूं, अलबत्ता अगर आप इजाज़त दें तो आपसे इस इदारे की बुनियादी फ़िक्र के बारे में कुछ पूछना चाहता हूं, कहने लगे कि "दर असल मैं तो आपसे सवाल करने के लिये आया था, लेकिन अगर आप जवाब नहीं देना चाहते तो बेशक आप हमारे इदारे के बारे में जो सवाल करना चाहें कर लें।

क्या फ़िक्र की आज़ादी का नज़रिया बिल्कुल मुत्लक़ (Absolute) है?

मैंने उनसे कहा कि आपने फ़रमाया कि यह इदारा जिसकी तरफ़ से आपको भेजा गया है यह आज़ादी–ए–फ़िक्र का अलम बर्दार है, बेशक यह आज़ादी–ए–फ़िक्र बड़ी अच्छी बात है, लकिन मैं यह पूछना चाहता हूं कि यह आज़ादी–ए–फ़िक्र आपकी नज़र में बिल्कुल मुत्लक़ (Absolute) है? या इस पर कोई पाबन्दी भी होनी चाहिये? कहने लगे कि मैं आपका मतलब नहीं समझा, मैंने कहा कि मेरा मतलब यह है कि आज़ादी–ए–फ़िक्र का यह तसव्वुर क्या इतना आम (Absolute) है कि जो भी इन्सान के दिल में आये वह दूसरों के सामने खुले आम कहे और उसकी तबलीग़ करे और लोगों को उसकी दावत दे? जैसे मेरी सोच यह कहती है कि सरमाया दारों ने बहुत दौलत जमा कर ली है इसलिये ग़रीबों को यह आज़ादी होनी चाहिये कि वे इन सरमाया दारों पर डाके डालें और इनका माल छीन लें और मैं अपनी सोच की तबलीग़ भी शुरू कर दूं कि ग़रीब जाकर डाका डालें और कोई उनको पकड़ने वाला न हो, इसलिये कि सरमाया दारों ने ग़रीबों का ख़ून चूस कर यह दौलत जमा की है, अब आप बतायें कि क्या आप इस आज़ादी–ए–फ़िक्र के हिमायत करने वाले होंगे या नहीं?

आपके पास कोई नपा तुला मेयार (Yardstick) नहीं

वह कहने लगे इसके तो हम हामी नहीं होंगे, मैंने कहा कि मैं यही वाज़ेह (स्पष्ट) करना चाहता हूं कि जब आज़ादी–ए–फ़िक्र का तसव्वुर बिल्कुल मुत्लक़ (Absolute) नहीं है, तो क्या आप इसको मानते हैं कि कुछ क़ैदें होनी चाहियें? उन्हों ने कहा कि हां! कुछ क़ैदें तो होनी चाहियें, जैसे मेरा ख़्याल यह है कि आज़ादी–ए–

फ़िक्र को इस शर्त का पाबन्द होना चाहिये के उसका नतीजा दूसरों पर तशद्दुद (Violance) की सूरत में ज़ाहिर न हो, मैंने अर्ज़ किया कि यह कैद तो आपने अपनी सोच के मुताबिक़ लागू कर दी, लेकिन अगर किसी शख़्स की दियानत दाराना राये यह हो कि बाज़ ऊंचे मक़ासिद तशद्दुद के बग़ैर हासिल नहीं होते, और आला मक़ासिद के हासिल करने के लिये तशद्दुद के नुक़्सानात बर्दाश्त करने चाहियें तो क्या उसकी यह आज़ादी–ए–फ़िक्र क़ाबिले एहतिराम है या नहीं? दूसरे जिस तरह आपने "आज़ादी–ए–फ़िक्र" पर एक पाबन्दी अपनी सोच से लगा दी, इसी तरह कोई दूसरा शख़्स इसी क़िस्म की कोई और पाबन्दी अपनी सोच से लागू करना चाहे तो उसको भी इसका इख़्तियार मिलना चाहिये, वर्ना कोई वजह होनी चाहिये कि आपकी सोच पर अमल किया जाये और दूसरे की सोच पर अमल न किया जाये, इसलिये असल सवाल यह है कि वे कुछ कैदें क्या होनी चहियें? और यह फ़ैसला कौन करेगा कि यह कैद होनी चाहिये? और आपके पास वह मेयार क्या है, जिसकी बुनियाद पर आप यह फ़ैसला करें कि आज़ादी–ए–फ़िक्र पर फ़लां क़िस्म की पाबन्दी लगाई जा सकती है और फ़लां क़िस्म की पाबन्दी नहीं लगाई जा सकती? आप मुझे कोई नपा तुला मेयार (Yardstick) बतायें, जिसके ज़रिये आप यह फ़ैसला कर सकें कि फ़लां क़िस्म की पाबन्दी जायज़ है और फ़लां क़िस्म की पाबन्दी ना जायज़ है।

उन्हों ने जवाब दिया कि साहिब! हमने इस पहलू पर कभी बा–क़ायदा ग़ौर नहीं किया, मैंने कहा आप इतने बड़े आलमी इदारे से जुड़े हुए है और इसी काम के सर्वे के लिये आप जा रहे हैं और इसी काम का बेड़ा उठाया है, लेकिन यह बुनियादी सवाल कि

आज़ादी–ए–फ़िक्र की हदें क्या होनी चाहियें? इसका इस्कोप (Scope) क्या होना चाहिये? अगर यह आपके ज़ेहन में नहीं है फिर आपका यह प्रोग्राम मुझे कार आमद होता नज़र नहीं आता, बराहे करम मेरे इस सवाल का जवाब आप मुझे अपने लिट्रेचर से फ़राहम (उपलब्ध) करा दें, या दूसरे हज़रात से मश्विरा करके फ़राहम कर दें।

इन्सान के पास "वही" के अलावा कोई मेयार नहीं

कहने लगे कि आपके ये ख़्यालात अपने इदारे तक पहुंचाऊंगा और इस मौज़ू पर जो हमारा लिट्रेचर है वह भी फ़राहम करूंगा, यह कह कर उन्हों ने मेरा फीका सा शुक्रिया अदा किया और जल्द रुख़सत हो गये, मैं आज तक उनके वादे के मुताबिक़ लिट्रेचर या अपने सवाल के जवाब का मुंतज़िर हूं और मुझे पूरा यक़ीन है कि वे क़ियामत तक न सवाल का जवाब फ़राहम कर सकते हैं, न कोई ऐसा मेयार पेश कर सकते हैं जो आलमगीर मक़बूलियत (Universally Applicable) का हामिल हो, इसलिये कि आप एक मेयार मुतअय्यन करेंगे दूसरा शख़्स दूसरा मेयार मुतअय्यन करेगा, आपका भी अपने ज़ेहन का सोचा हुआ मेयार होगा, उसका मेयार भी उसके ज़ेहन का सोचा हुआ होगा, दुनिया में कोई शख़्स ऐसा मेयार तजवीज़ कर दे जो सारी दुनिया के लिये मुकम्मल तौर पर क़ाबिले क़ुबूल हो, यह बात मैं किसी तरदीद के ख़ौफ़ के बग़ैर कह सकता हूं कि हक़ीक़त में इन्सान के पास वही–ए–इलाही के सिवा मेयार नहीं है जो उन मुब्हम तसव्वुरात पर जायज़ हदें क़ायम करने का कोई लाज़मी और अबदी (हमेशा रहने वाला) मेयार फ़राहम कर सके, अल्लाह तआला की हिदायत के सिवा इन्सान के पास कोई चीज़ नहीं।

सिर्फ़ मज़्हब मेयार बन सकता है

आप फ़ल्सफ़ा को उठा कर देखिये, उसमें यह मस्अला बहस में आया है कि क़ानून का अख़्लाक़ से क्या तअल्लुक़ है? क़ानून में एक मक्तबे फ़िक्र है जिसका यह कहना है कि क़ानून का अख़्लाक़ से कोई तअल्लुक़ नहीं है और अच्छे बुरे का तसव्वुर ग़लत है, न कोई चीज़ अच्छी है, न कोई चीज़ बुरी है, वह कहता है कि यह (Should) और (Should not) और (Ought) वग़ैरह के अल्फ़ाज़ हक़ीक़त में इन्सान की नफ़्स की ख़्वाहिश के पैदा किये हुए हैं, वर्ना इस किस्म का कोई तसव्वुर नहीं है, इस वासते जो मुआशरा जिस वक़्त जो चीज़ इख़्तियार करले वह उसके लिये दुरुस्त है, और हमारे पास अच्छाई और बुराई के लिये कोई मेयार नहीं है जो यह बता सके कि फ़लां चीज़ अच्छी है और फ़लां चीज़ बुरी है, और यह उसूल क़ानून पर मशहूर टेक्सट बुक (Jurisprudence) है, उसमें इस बहस के आख़िर में एक जुमला लिखा है कि:

"इन्सानियत के पास उन चीज़ों के मुतअय्यन करने के लिये एक चीज़ मेयार बन सकती थी, वह है मज़्हब (Religion) लेकिन चूंकि मज़्हब (Religion) का तअल्लुक़ इन्सान की बिलीफ़ (Belief) और अक़ीदे से है और सैकूलर निज़ाम–ए–ज़िन्दगी में इसका कोई मक़ाम नहीं है, इस वासते हम इसको एक बुनियाद के तौर पर नहीं अपना सकते।"

हमारे पास इसको रोकने की कोई दलील नहीं है

एक और मिसाल याद आ गई जैसा कि अभी मैंने अर्ज़ किया था कि जिस वक़्त बरतानिया (इंग्लैन्ड) की परलीयामेंट में हम जिनस परस्ती (Homo Sexuality) का बिल तालियों की गूंज में पास हुआ, उस बिल के पास होने से पहले काफ़ी मुख़ालफ़त भी

हुई और उस बिल पर ग़ौर करने के लिये एक कमेटी बनाई गई जो इस मस्अले पर ग़ौर करे कि आया यह बिल पास होना चाहिये या नहीं? उस कमेटी की रिपोर्ट छपी और फ़रीड मैन (Fridman) की मशहूर किताब "दि लीगल थियोरी" (The Legal Theory) मैं उस रिपोर्ट का खुलासा दिया गया है, जिस में कहा गया है कि उस कमेटी ने सारी रिपोर्ट लिखने के बाद लिखा है कि:

"अगरचे इसमें कोई शक नहीं कि यह चीज़ अच्छी नहीं लगती, लेकिन चुंकि हम एक मर्तबा यह फ़ैसला कर चुके हैं कि पराइवेट ज़िन्दगी में क़ानून को दख़ल अन्दाज़ नहीं होना चाहिये इसलिये इस उसूल की रोशनी में जब तक हम सिन (Sin) और कराईम (Crime) में तफ़रीक़ बर्क़रार रखेंगे कि सिन और चीज़ है और कराईम अलाहिदा चीज़ है, उस वक़्त तक हमारे पास इस अमल को रोकने की कोई दलील नहीं है, हां! अगर सिन और कराईम को एक तसव्वुर कर लिया जाये तो फिर बेशक इस बिल के ख़िलाफ़ राये दी जा सकती है, इस वासते हमारे पास इस बिल को रद्द करने का कोई जवाज़ नहीं है, इसलिये यह बिल पास होना चाहिये"।

जब हम यह कहते हैं कि क़ानून (Law) को इस्लामाईज़ किया जाये तो इसके मायने यही हैं कि सैकूलर निज़ाम ने इल्म हासिल करने की जो दो बुनियादें, आंख कान, नाक, ज़बान वग़ैरह और अक़्ल इख़्तियार की हुई हैं, इससे आगे एक और क़दम बढ़ा कर वही-ए-इलाही को भी हुसूले इल्म और रहनुमाई का ज़रियां क़रार देकर उसको अपना शिआर बनायें।

इस हुक्म की रीज़न (Reason) मेरी समझ में नहीं आती

और जब यह बात ज़ेहन में आ जाये कि वही-ए-इलाही शुरू

ही वहां से होती है जहां अक़्ल की परवाज़ ख़त्म हो जाती है, तो फिर वही–ए–इलाही के ज़रिये कुरआन व सुन्नत में जब कोई हुक्म आ जाये, उसके बाद इस बिना पर उस हुक्म को रद्द करना कि साहिब इस हुक्म की रीज़न (Raeson) मेरी समझ में नहीं आती अहमक़ाना फ़ेल होगा, इस वासते कि "वही" का हुक्म आया ही उस जगह पर है जहां रीज़न काम नहीं दे रही थी, अगर रीज़न काम दे चुकी होती तो फिर "वही" के आने की ज़रूरत ही नहीं थी, और उस हुक्म के पीछे जो हिक्मतें हैं अगर वे सारी हिक्मतें तुम्हारी अक़्ल समझ सकती थी तो फिर अल्लाह को वही के ज़रिये उसके हुक्म देने की बिल्कुल हाजत नहीं थी।

कुरआन व हदीस में साइंस और टेक्नालोजी

यहीं से एक और सवाल का जवाब भी हो गया, जो अक्सर हमारे पढ़े लिखे तबक़े के ज़ेहनों में पैदा होता है, वह यह कि साहिब! आज साइंस और टेक्नालोजी का दौर है, सारी दुनिया साइंस और टेक्नालोजी में तरक़्क़ी कर रही है, लेकिन हमारा कुरआन और हमारी हदीस सांइस और टेक्नालोजी के बारे में कोई फ़ारमूला हमें नहीं बताता, कि किस तरह ऐटम बम बनायें, किस तरह हाईड्रोजन बम बनायें, इसका कोई फ़ारमूला न तो कुरआन करीम में मिलता है और न हदीसे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम में मिलता है, इसकी वजह से बाज़ लोग एहसासे कम्तरी का शिकार होते हैं, कि साहिब! दुनिया चांद और मिर्रीख़ पर पहुंच रही है, और हमारा कुरआन हमें इस बारे में कुछ नहीं बताता कि चांद पर कैसे पहुंचें?

साइंस और टेक्नालोजी तजुर्बे का मैदान है

इसका जवाब यह है कि हमारा कुरआन हमें ये बातें इसलिये

नहीं बताता कि वह दायरा अक़्ल का है, वह तजुरबे का दायरा है, वह ज़ाती मेहनत और कोशिश का दायरा है, अल्लाह तआ़ला ने उसको इन्सान के ज़ाती तजुरबे, अक़्ल और कोशिश पर छोड़ा है, कि जो शख़्स जितनी कोशिश करेगा और अक़्ल को इस्तेमाल करेगा, तजुरबे को इस्तेमाल करेगा उसमें आगे बढ़ता चला जायेगा, कुरआन आया ही उस जगह पर है जहां अक़्ल का दायरा ख़त्म हो रहा था, अक़्ल उसका पूरी तरह इदराक नहीं कर सकती, इन चीज़ों का हमें कुरआन करीम ने सबक़ पढ़ाया है? इन चीज़ों के बारे में हमें मालूमात फ़राहम की (उपलब्ध कराई) हैं।

इसलिये इस्लामाईज़ेशन आफ़ लाज़ का सारा फ़ल्सफ़ा यह है कि हम अपनी पूरी ज़िन्दगी को उसके ताबे बनायें।

इस्लाम के अहकाम में लचक (Elasticity) मौजूद है

आख़िर में एक बात यह अर्ज़ कर दूं कि जब ऊपर की बात समझ में आ गई तो फिर दिल में यह इश्काल पैदा होता है कि हम चौदह सौ साल पुरानी ज़िन्दगी को कैसे लौटायें? चौदह सौ साल पुराने उसूलों को आजकी बीसवीं और इक्कीसवीं सदी पर कैसे अपलाई करें? इसलिये कि हमारी ज़रूरियात नौअ़ ब नौअ़ (क़िस्म क़िस्म की) हैं, बदलती रहती हैं, बात असल में यह है कि इस्लामी उलूम से ना वाक़फ़ियत की वजह से यह इश्काल पैदा होता है, इसलिये कि इस्लाम ने अपने अहकाम के तीन हिस्से किये हैं, एक वह है जिस में कुरआन व सुन्नत की नस्से क़तई मौजूद है, जिसमें क़ियामत आने तक आने वाले हालात की वजह से कोई तब्दीली नहीं हो सकती, यह उसूल ना क़ाबिले तबदील हैं, ज़माना कैसा ही बदल जाये, लेकिन उसमें तब्दीली नहीं आ सकती, दूसरा हिस्सा वह है जिसमें इज्तिहाद और इस्तिम्बात की गुन्जायश रखी

गई है, और उसमें इस दर्जा की नुसूस क़तइय्या नहीं हैं जो ज़माने के हाल पर अपलाई करें, उसमें इस्लामी अहकाम की लचक (Elasticity) ख़ुद मौजूद है, और अहकाम का तीसरा हिस्सा वह है जिसके बारे में क़ुरआन व सुन्नत ख़ामोश हैं, जिनके बारे में कोई हिदायत और कोई रहनुमाई नहीं की गई, जिनके बारे में क़ुरआन व सुन्नत ने कोई हुक्म नहीं दिया, हुक्म क्यों नहीं दिया? इसलिये कि उसको हमारी अक़्ल पर छोड़ दिया है, और उसका इतना वसीअ़ (लम्बा चौड़ा) दायरा है कि हर दौर में इन्सान अपनी अक़्ल और तजुर्बे को इस्तेमाल करके उस ख़ाली मैदान को (Unoccupied Area) में तरक़्क़ी कर सकता है और हर दौर की ज़रूरियात पूरी कर सकता है।

इन अहकामों में क़ियामत तक तब्दीली नहीं आयेगी

दूसरा हिस्सा, जिसमें इज्तिहाद और इस्तिंबात की गुंजाइश रखी गई है, उसके अन्दर भी हालात के लिहाज़ से सबबों के बदलने की वजह से अहकाम के अन्दर तग़य्युर व तब्दीली हो सकती है, अलबत्ता पहला हिस्सा बेशक कभी नहीं बदल सकता, क़ियामत आ जायेगी लेकिन वह नहीं बदलेगा, कि वह हक़ीक़त में इन्सान के फ़ित्रत के इदराक पर मबनी (आधारित) है, इन्सान के हालात बदल सकते हैं, लेकिन फ़ित्रत नहीं बदल सकती, और चूंकि वे फ़ित्रत के इदराक पर मबनी हैं इसलिये उनमें भी तब्दीली नहीं लाई जा सकती।

बहर हाल! जहां तक शरीअ़त ने हमें गुन्जायश दी है, गुन्जायश के दायरे में रह कर हम अपनी ज़रूरियात को पूरे तरीक़े से इस्तेमाल कर सकते हैं।

इज्तिहाद कहां से शुरू होता है?

इज्तिहाद का दायरा वहां से शुरू होता है जहां नस्से क़तई मौजूद न हो, जहां नस्स मौजूद हो वहां अक्ल को इस्तेमाल करके नुसूस के ख़िलाफ़ कोई बात कहना हक़ीक़त में अपने दायरा–ए–कार (Jurisdiction) से बाहर जाने वाली बात है और इसी के नतीजे में दीन की तहरीफ़ (कमी बेशी) का रास्ता खुलता है, जिसकी मिसाल आप हज़रात के सामने अर्ज़ करता हूं।

सुअर हलाल होना चाहिये

कुरआन करीम में सुअर को हराम क़रार दिया गया है और यह हुर्मत का हुक्म "वही" का हुक्म है, इस जगह पर अक्ल को इस्तेमाल करना कि साहिब! यह क्यों हराम है? यह अक्ल को ग़लत जगह पर इस्तेमाल करना है, इसी वजह से बाज़ लोगों ने यहां तक कह दिया कि बात असल में यह है कि कुरआन करीम ने सुअर इसलिये हराम किया था कि उस ज़माने में सुअर बड़े गन्दे थे और ग़ैर पसन्दीदा माहौल में परवरिश पाते थे, और ग़िलाज़तें (गंदगियां) खाते थे, अब तो सुअर के लिये बड़े हाई जेनिक फ़ार्म (Hygenic Farm) तय्यार किये गये हैं, और बड़े सेहत मन्दाना तरीक़े से परवरिश होती है, इसलिये यह हुक्म अब ख़त्म होना चाहिये, यह उस जगह पर अक्ल का इस्तेमाल करना है जहां वह काम देने से इन्कार कर रही है।

सूद और तिजारत में क्या फ़र्क़ है?

इसी तरह रिबा और सूद को जब कुरआन ने हराम क़रार दे दिया, बस वह हराम हो गया, अक्ल में चाहे आये या न आये, देखिये कुरआन करीम में मुशरिकीने अरब का क़ौल नक़ल करते हुए फ़रमाया गया है।

"انما البيع مثل الربوا" (سورة البقرة ٢٧٥)

कि बैअ् (तिजारत) भी रिबा (सूद) जैसी चीज़ है, तिजारत और बैअ् व शिरा (ख़रीद व बेच) से भी इन्सान नफ़ा कमाता है और रिबा से भी नफ़ा कमाता है, लेकिन कुरआन करीम ने इसके जवाब में फ़र्क़ बयान नहीं किया कि बैअ् और रिबा में यह फ़र्क़ है बल्कि यह जवाब दिया कि:

" واحل الله البيع وحرم الربوا"

बस! अल्लाह तआ़ला ने बैअ् को हलाल क़रार दिया है और रिबा को हराम क़रार दिया है, अब आगे इस हुक्म में तुम्हारे लिये चूं चरा की गुंजायश नहीं; इसलिये कि जब अल्लाह ने बैअ् को हलाल कर दिया है तो हलाल है और जब अल्लाह ने रिबा को हराम कर दिया इसलिये हराम है, अब इसके अन्दर चूं चरा करना हक़ीक़त में अक़्ल को ग़लत जगह पर इस्तेमाल करना है।

एक वाक़िआ

एक वाक़िआ मशहूर है कि हमारा एक हिन्दुस्तानी गवैया एक मर्तबा हज करने चला गया, हज के बाद वह जब मदीना शरीफ़ जा रहा था, रास्ते में मंज़िलें होती थीं, उन पर रात गुज़ारनी पड़ती थी, एक मंज़िल पर रात गुज़ारने के लिये ठहरा तो वहां एक अ़रब गवैया आ गया, वह बद्दू क़िस्म का अ़रब गवैया था, उसने बहुत भद्दे अन्दाज़ से सारंगी बजा कर गाना शुरू किया, आवाज़ बड़ी भद्दी थी और उसको सारंगी और तबला भी सही बजाना नहीं आता था, जब हिन्दुस्तानी गवैये ने आवाज़ सुनी तो उसने कहा कि आज यह बात मेरी समझ में आ गयी कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने गाने बजाने को क्यों हराम क़रार दिया है, इसलिये कि आपने तो इन बद्दुओं का गाना सुना था, अगर आप मेरा गाना सुन लेते तो

हराम क़रार न देते, तो इस क़िस्म की फ़िक्र और सोच (Thinking) उभर (Develop) रही है, जिसको इज्तिहाद का नाम दिया जा रहा है, ये नुसूसे क़तईया के अन्दर अपने नफ़्स की ख़्वाहिशों को इस्तेमाल करना है।

आज के मुफ़क्किर का इज्तिहाद

हमारे यहां एक मारूफ़ मुफ़क्किर हैं "मुफक्किर" इसलिये कह रहा हूं कि वह अपनी फ़ील्ड (Field) में "मुफ़क्किर" (Thinker) समझे जाते हैं, कुरआन करीम की यह जो आयत है:

"السارق والسارقة فاقطعوا ايديهما"

कि चोर मर्द और औरत का हाथ काट दो।

उन मुफ़क्किर साहिब ने इस आयत की यह तफ़्सीर की कि चोर से मुराद सरमाया दार हैं जिन्हों ने बड़ी बड़ी सनअतें (उधोग) क़ायम कर रखी हैं, और "हाथ" से मुराद उनकी कंपनियां (Industries) और "काटने" से मुराद उनका नेशनलाईज़ेशन (Nationalization) है, इसलिये आयत के मायने हैं कि सरमाया दारों की सारी इंडस्टरियों को नेशनलाईजेशन कर लिया जाये और इस तरीक़े से चोरी का दर्वाज़ा बन्द हो जायेगा।

मश्रिक़ में है तक़्लीदे फ़रंगी का बहाना

इस क़िस्म के इज्तिहादों के बारे में इक़बाल मरहूम ने कहा था कि:

ज़ इज्तिहादे आलिमाने कम नज़र
इक़्तिदा बा रफ़्तगां महफ़ूज़ तर

कि ऐसे कम नज़र लोगों के इज्तिहाद से पुराने लोगों की बातों की इक़्तिदा करना वह ज़्यादा महफ़ूज़ है।

लेकिन यह डर है कि यह आवाज़ा–ए–तज्दीद

मश्रिक़ में है तक़्लीदे फ़रंगी का बहाना

बहर हाल मैं आजकी इस नशिस्त (बैठक) से यह फ़ायदा उठाना चाहता था और शायाद मैंने अपने इस्तिहक़ाक़ और अपने वादे से भी ज़्यादा वक़्त आप हज़रात का लिया है, लेकिन बात यह है कि जब तक "इस्लामाईज़ेशन आफ़ लाज़" का फ़ल्सफ़ा ज़ेहन में न हो, उस वक़्त तक महज़ "इस्लामाईज़ेशन आफ़ लाज़" के लफ़्ज़ को बिल्कुल दुरुस्त कर लेने से बात नहीं बनती।

ख़िरद ने कह भी दिया ला इला-ह तो क्या हासिल
दिल व निगाह मुसलमान नहीं तो कुछ भी नहीं

इसलिये इस्लामाईज़ेशन का पहला क़दम यह है कि हमें इस बात का यक़ीन हो कि डंके की चोट पर, सीना तान कर, किसी माज़िरत ख़्वाही के बग़ैर किसी से मरऊब हुए बग़ैर यह बात कह सकें कि हमारे नज़्दीक इन्सानियत की फ़लाह (कामयाबी) का अगर रास्ता है तो वह सिर्फ़ "इसलामाईज़ेशन" (Islamisaton) में है, इसके अलावा किसी और चीज़ में नहीं, अल्लाह तआला हम और आप को इसकी हक़ीक़त को सही तौर पर समझने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा दे आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد للّٰہ رب العلمين

रजब का महीना

चन्द ग़लत फ़हमियों का इज़ाला

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

रजब के महीने के बारे में लोगों के दरमियान तरह तरह की ग़लत फ़हमियां फैल गई हैं, उनकी हक़ीक़त समझ लेने की ज़रूरत है।

रजब का चांद देख कर आप सल्ल० का अ़मल

इस पूरे महीने के बारे में जो बात सही सनद के साथ हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से साबित है, वह यह है कि जब आप रजब का चांद देखते थे तो चांद देख कर आप यह दुआ फ़रमाया करते थे कि:

"اللّٰهم بارك لنا فی رجب و شعبان و بلغنا رمضان"

ऐ अल्लाह! हमारे लिये रजब और शाबान के महीने में बर्कत अ़ता फ़रमाइये, और हमें रमज़ान तक पहुंचा दीजिये, यानी हमारी उमर इतनी कर दीजिये कि हम अपनी ज़िन्दगी में रमज़ान को पालें, गोया कि पहले से रमज़ानुल मुबारक की आमद का शौक़ होता था, यह दुआ आप से सही सनद के साथ साबित है; इसलिये यह दुआ करना सुन्नत है, और अगर किसी ने शुरू रजब में यह दुआ न की हो वह अब यह दुआ करले, इसके अ़लावा और चीज़ें

जो आम लोगों में मशहूर हो गई हैं, उनकी शरीअ़त में कोई असल और बुनियाद नहीं।

शबे मेराज की फ़ज़ीलत साबित नहीं

जैसे २७ रजब की शब (रात) के बारे में यह मशहूर हो गया है कि यह शबे मेराज है, और इस शब को भी इसी तरह गुज़ारनी चाहिये जिस तरह शबे क़द्र गुज़ारी जाती है, और जो फ़ज़ीलत शबे क़द्र की है, कम व बेश शबे मेराज की भी वही फ़ज़ीलत समझी जाती है, बल्कि मैंने तो एक जगह यह लिखा हुआ देखा कि "शबे मेराज की फ़ज़ीलत शबे क़द्र से भी ज़्यादा है," और फिर उस रात में लोगों ने नमाज़ों के भी ख़ास ख़ास तरीक़े मशहूर कर दीये कि इस रात में इतनी रक्अ़तें पढ़ी जायें, और हर रक्अ़त में फ़लां फ़लां ख़ास सूरतें पढ़ी जायें, ख़ुदा जाने क्या क्या तफ़्सीलात उस नमाज़ के बारे में लोगों में मशहूर हो गयीं, ख़ूब समझ लीजिये, ये सब बे असल बातें हैं, शरीअ़त में इनकी कोई असल और कोई बुनियाद नहीं।

शबे मेराज के मुतअ़ययन होने में इख़्तिलाफ़

सब से पहली बात तो यह है कि २७ रजब के बारे में यकीनी तौर पर नहीं कहा जा सकता कि यह वही रात है जिसमें नबी–ए–करीम मेराज पर तशरीफ़ ले गये थे, क्योंकि इस बाब में मुख़्तलिफ़ रिवायतें हैं, बाज़ रिवायतों से मालूम होता है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम रबीउल अव्वल में तशरीफ़ ले गये थे, बाज़ रिवायतों में रजब का ज़िक्र है, और बाज़ रिवायातों में कोई और महीना बयान किया गया है, इसलिये पूरे यक़ीन के साथ नहीं कहा जा सकता कि कौन सी रात सही मायनों में मेराज की रात थी, जिसमें आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मेराज पर तशरीफ़

ले गये।

मेराज के वाकिए की तारीख़ क्यों महफ़ूज़ नहीं?

इससे आप ख़ुद अन्दाज़ा कर लें कि अगर शबे मेराज भी शबे कद्र की तरह कोई मख़्सूस रात होती, और उसके बारे में कोई ख़ास अहकाम होते जिस तरह शबे कद्र के बारे में हैं तो उसकी तारीख़ और महीना महफ़ूज़ रखने का एहतिमाम किया जाता, लेकिन चूंकि इस तारीख़ को महफ़ूज रखने का एहतिमाम नहीं किया गया तो अब यकीनी तौर से २७ रजब को शबे मेराज करार देना दुरुस्त नहीं।

वह रात अज़ीमुश्शान थी

और अगर बिल्फ़र्ज़ यह मान लिया जाये कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम २७ रजब ही को मेराज के लिये तश्रीफ़ ले गये थे, जिसमें यह अज़ीमुश्शान वाकिआ पेश आया, और जिसमें अल्लाह तआला ने नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह मकामे कुर्ब अता फ़रमाया, और अपनी बारगाह में हाज़री का शर्फ़ बख़्शा, और उम्मत के लिये नमाज़ों का तोहफ़ा भेजा, बेशक वह रात बड़ी अज़ीमुश्शान थी, किसी मुसलमान को उसकी अज़मत में क्या शुबह हो सकता है।

आपकी ज़िन्दगी में 18 मर्तबा शबे मेराज की तारीख़ आई ,लेकिन

यह वाकिआ सन पांच नबवी में पेश आया, यानी हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नबी बनने के पांचवे साल यह शबे मेराज पेश आयी, जिसका मतलब यह है कि इस वाकिए के बाद अठ्ठारह साल तक आप दुनिया में तश्रीफ़ फ़रमा रहे, लेकिन उन अठ्ठारह साल के दौरान यह कहीं साबित नहीं कि आप सल्ल–

ल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने शबे मेराज के बारे में कोई ख़ास हुक्म दिया हो, या इसके मनाने का एहतिमाम फ़रमाया हो, या इसके बारे में यह फ़रमाया हो कि इस रात में शबे क़द्र की तरह जागना ज़्यादा अज्र व सवाब का सबब है, न तो आपका ऐसा कोई इर्शाद साबित है, और न आपके ज़माने में इस रात में जागने का पाबन्दी साबित है, न ख़ुद हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जागे, और न सहाबा-ए-किराम को इसकी ताकीद की, और न सहाबा-ए-किराम ने अपने तौर पर इसका एहतिमाम फ़रमाया।

उसके बराबर कोई अह्मक़ नहीं

फिर सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दुनिया से तश्रीफ़ ले जाने के बाद सौ साल तक सहाबा-ए-किराम दुनिया में मौजूद रहे, इस पूरी सदी में कोई एक वाक़िआ़ ऐसा साबित नहीं है, जिसमें सहाबा-ए-किराम ने २७ रजब को ख़ास एहतिमाम करके मनाया हो, जो चीज़ हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने नहीं की, और जो आपके सहाबा-ए-किराम ने नहीं की, उसको दीन का हिस्सा क़रार देना, या उसको सुन्नत क़रार देना, या उसके साथ सुन्नत जैसा मामला करना बिद्अ़त है, अगर कोई शख़्स यह कहे कि मैं (अल्लाह अपनी पनाह में रखे) हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ज़्यादा जानता हूं कि कौन सी रात ज़्यादा फ़ज़ीलत वाली है, या कोई शख़्स यह कहे कि सहाबा-ए-किराम से ज़्यादा मुझे इबादत का ज़ौक़ है, अगर सहाबा-ए-किराम ने यह अ़मल नहीं किया तो मैं इसको करूंगा, उसके बराबर कोई अह्मक़ नहीं।

बनिये से सियाना सो बावला

हमारे वालिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह० फ़रमया

करते थे कि उर्दू में एक मसल और कहावत है, जो हिन्दुस्तान के अन्दर मशहूर थी, अब तो लोग उसके मायने भी नहीं समझते, वह यह कि:

"बनिये से सियाना सो बावला"

यानी जो शख़्स यह कहे कि मैं तिजारत में बनिये से ज़्यादा होशियार हूं, मैं उससे ज़्यादा तिजारत के गुर जानता हूं तो हक़ीक़त में वह शख़्स बवला यानी पागल है, इसलिये कि बनिये से ज़्यादा तिजारत के गुर जानने वाला और कोई नहीं है, यह तो आम कहावत की बात थी।

सहाबा-ए-किराम से ज़्यादा दीन को जानने वाला कौन?

लेकिन जहां तक दीन का तअल्लुक़ है, हक़ीक़त यह है कि सहाबा-ए-किराम, ताबईन और तबअ़े ताबईन दीन को सब से ज़्यादा जानने वाले, दीन को ख़ूब समझने वाले, दीन पर मुकम्मल तौर पर अमल करने वाले थे, अब अगर कोई यह कहे कि मैं उनसे ज़्यादा दीन को जानता हूं, या उनसे ज़्यादा दीन का ज़ौक़ रखता हूं, या उनसे ज़्यादा इबादत गुज़ार हूं तो हक़ीक़त में वह शख़्स पागल है, वह दीन की समझ नहीं रखता।

इस रात में इबादत का एहतिमाम बिद्अ़त है

इसलिये इस रात में इबादत के लिये एहतिमाम करना बिद्अ़त है, यों तो हर रात में अल्लाह तआ़ला जिस इबादत की तौफ़ीक़ दे वह बेहतर ही बेहतर है, आजकी रात भी जाग लें, कल की रात जाग लें, इसी तरह फिर सताईसवीं रात को जाग लें, दोनों में कोई फ़र्क़ और कोई नुमायां इम्तियाज़ नहीं होना चाहिये।

27 रजब का रोज़ा साबित नहीं

इसी तरह सत्ताईस रजब का रोज़ा है, बाज़ लोग सत्ताईस रजब के रोज़े को फ़ज़ीलत वाला रोज़ा समझते हैं, जैसे कि आशूरा और अर्फा का रोज़ा फ़ज़ीलत वाला है, इसी तरह सत्ताईस रजब के रोज़े को भी फ़ज़ीलत वाला रोज़ा ख़्याल किया जाता है, बात यह है कि एक या दो कमज़ोर रिवायतें तो इसके बारे में हैं, लेकिन सही सनद से कोई रिवायत साबित नहीं।

हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि० ने बिद्अ़त का दर्वाज़ा बन्द किया

हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि० के ज़माने में बाज़ लोग २७ रजब को रोज़ा रखने लगे, जब हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि० को पता चला कि २७ रजब का ख़ास एहतिमाम करके लोग रोज़ा रख रहे हैं, तो चूंकि उनके यहां दीन से ज़रा इधर या उधर होना मुम्किन नहीं था, चुनांचे वह फ़ौरन घर से निकल पड़े, और एक एक शख़्स को जाकर ज़बर दस्ती फ़रमाते कि तुम मेरे सामने खाना खाओ, और इस बात का सबूत दो कि तुम्हारा रोज़ा नहीं है, बा-क़ायदा एहतिमाम करके लोगों को खाना खिलाया, ताकि लोगों को यह ख़्याल न हो कि आज का रोज़ा ज़्यादा फ़ज़ीलत का है बल्कि जैसे और दिनों में नफ़्ली रोज़े रखे जा सकते हैं, इसी तरह इस दिन का भी नफ़्ली रोज़ा रखा जा सकता है, दोनों में कोई फ़र्क़ नहीं, आपने यह पाबन्दी इसलिये फ़रमायी ताकि बिद्अ़त का दर्वाज़ा बन्द हो, और दीन के अन्दर अपनी तरफ़ से ज़्यादती न हो।

रात में जाग कर कौन सी बुराई कर ली?

इसी से यह बात भी मालूम हुई कि बाज़ लोग जो ख़्याल करते हैं कि अगर हमने इस रात में जाग कर इबादत कर ली और दिन में रोज़ा रख लिया तो कौन सा गुनाह कर लिया? क्या हमने चोरी कर ली? या डाका डाला? हमने रात में इबादत ही तो की है, और अगर दिन में रोज़ा रख लिया तो क्या ख़राबी का काम किया?।

दीन "इत्तिबा" का नाम है

हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि० ने यह बतला दिया कि ख़राबी यह हुई कि इस दिन के अन्दर रोज़ा रखना अल्लाह तआला ने नहीं बताया, और ख़ुद साख़्ता एहतिमाम और पाबन्दी ही असल ख़राबी है, मैं यह कई बार अर्ज़ कर चुका हूं कि सारे दीन का ख़ुलासा "इत्तिबा" है कि हमारा हुक्म मानो, न रोज़ा रखने में कुछ रखा है, न इफ़्तार में कुछ रखा है, न नमाज़ पढ़ने में कुछ रखा है, जब हम कहें कि नमाज़ पढ़ो तो नमाज़ पढ़ना इबादत है, और जब हम कहें कि नमाज़ न पढ़ो तो नमाज़ न पढ़ना इबादत है, जब हम कहें कि रोज़ा रखो तो रोज़ा रखना इबादत है, और जब हम कहें कि रोज़ा न रखो तो रोज़ा न रखना इबादत है, अगर उस वक़्त रोज़ा रखोगे तो यह दीन के ख़िलाफ़ होगा, दीन का सारा खेल इत्तिबा में है, अल्लाह तआला यह हकीकत दिल में उतार दे तो सारी बिद्अतों की ख़ुद साख़्ता इल्तिज़ामात (पाबन्दियों) की जड़ कट जाये।

वह दीन में ज़्यादती कर रहा है

अब अगर कोई शख़्स इस रोज़े का ज़्यादा एहतिमाम करे तो वह शख़्स दीन में अपनी तरफ़ से ज़्यादती कर रहा है, और दीन

को अपनी तरफ़ से घड़ रहा है, इसलिये इस नुक़्त–ए–नज़र से रोज़ा रखना जायज़ नहीं, हां अलबत्ता अगर कोई शख़्स आम दिनों की तरह इसमें भी रोज़ा रखना चाहता है, तो रख ले, इसकी मुमानअत (मनाही) नहीं, लेकिन इसकी ज़्यादा फ़ज़ीलत समझ कर, इसको सुन्नत समझ कर, इसको ज़्यादा मुस्तहब और ज़्यादा अज्र व सवाब का मूजिब समझ कर इस दिन रोज़ा रखना, या इस रात में जागना दुरुस्त नहीं, बल्कि बिद्अत है।

कूंडों की हक़ीक़त

शबे मेराज (मेराज की रात) की तो फिर भी कुछ असल है कि इस रात में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इतने आला मक़ाम पर तश्रीफ़ ले गये, लेकिन इससे भी ज़्यादा आज कल मुआ़शरे में फ़र्ज़ व वाजिब के दर्जे में जो चीज़ फैल गयी है, वह कूंडे हैं, अगर आज किसी ने कूंडे नहीं किये तो वह मुसलमान ही नहीं, नमाज़ पढ़े या न पढ़े, रोज़े रखे या न रखे, गुनाहों से बचे या न बचे, लेकिन कूंडे ज़रूर करे, और अगर कोई शख़्स न करे या करने वालों को मना करे तो उस पर लानत और मलामत की जाती है, ख़ुदा जाने ये कूंडे कहां से निकल आये? और क़ुरआन व हदीस में, सहाबा–ए–किराम से, ताबईन से या तबुअ़े ताबईन और बुज़ुर्गाने दीन से, कहीं से इसकी कोई असल साबित नहीं, और इसको इतना ज़रूरी समझा जाता है कि घर में दीन का कोई दूसरा काम हो या न हो, लेकिन कूंडे ज़रूर हों, इसकी वजह यह है कि इसमें ज़रा मज़ा और लज़्ज़त आती है, और हमारी क़ौम लज़्ज़त और मज़े की आ़दी है, कोई मेला ठेला होना चाहिये, और कोई नफ़्स की लज़्ज़त का सामान होना चाहिये, और होता यह है कि जनाब! पूरियां पक रही हैं, हलवा पक रहा है, और इधर से

उधर जा रही हैं, और उधर से इधर आ रही हैं, और एक मेला हो रहा है, तो चूंकि यह बड़े मजे का काम है, इस वासते शैतान ने इसमें मश्गूल कर दिया कि नमाज़ पढ़ो या न पढ़ो, वह कोई ज़रूरी नहीं, मगर यह काम ज़रूर होना चाहिये।

यह उम्मत ख़ुराफ़ात में खो गयी

भाई! इन चीज़ों ने हमारी उम्मत को ख़ुराफ़ात में मुब्तला कर दिया है।

हक़ीक़त रिवायात में खो गयी
यह उम्मत ख़ुराफ़ात में खो गयी

कि इस क़िस्म की चीज़ों को लाज़मी समझ लिया गया और हक़ीक़ी चीज़ें पीठ पीछे डाल दी गयीं, इसके बारे में रफ़्ता रफ़्ता अपने भईयों को समझाने की ज़रूरत है, इसलिये कि बहुत से लोग सिर्फ़ ना वाक़फ़ियत की वजह से करते हैं, उनके दिलों में कोई इनाद (दुश्मनी) नहीं होता, लेकिन दीन से वाक़िफ़ नहीं, उन बेचारों को इसके बारे में पता नहीं, वे समझते हैं, कि जिस तरह ईदुल अज़्हा (बक़र ईद) के मौक़े पर कुर्बानी होती है, और गोश्त इधर से उधर जाता है, यह भी कुर्बानी की तरह कोई ज़रूरी चीज़ होगी, और क़ुरआन व हदीस में इसका भी कोई सबूत होगा, इसलिये ऐसे लोगों को मुहब्बत व प्यार और शफ़्क़त से समझाया जाये, और ऐसी तक़रीबात में ख़ुद शरीक होने से परहेज़ किया जाये।

ख़ुलासा

बहर हाल! ख़ुलासा यह है कि रजब का महीना रमज़ान का मुक़द्दमा है, इसलिये रमज़ान के लिये पहले से अपने आपको तय्यार करने की ज़रूरत है, इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तीन महीने पहले से दुआ भी फ़रमा रहे हैं, और लोगों को

तवज्जोह दिला रहे हैं, कि अब इस मुबारक महीने के लिये अपने आपको तय्यार कर लो, और अपना निज़ामुल औक़ात (वक़्तों का निज़ाम) ऐसा बनाने की फ़िक्र करो कि जब यह मुबारक महीना आए तो इसका ज़्यादा से ज़्यादा वक़्त अल्लाह की इबादत में ख़र्च हो, अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से इसकी समझ अ़ता फ़रमाये, और सही तौर पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد للہ ربّ العالمین

नेक काम में देर न कीजिए

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيْمِ ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ:

" وَسَارِعُوْا اِلٰى مَغْفِرَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا السَّمٰوٰتُ وَالْاَرْضُ اُعِدَّتْ لِلْمُتَّقِيْنَ " (سورة آل عمران: ١٣٣)

اٰمَنْتُ بِاللّٰهِ صَدَقَ اللّٰهُ مَوْلَانَا الْعَظِيْمُ، وَصَدَقَ رَسُوْلُهُ النَّبِيُّ الْكَرِيْمُ، وَنَحْنُ عَلٰى ذٰلِكَ مِنَ الشَّاهِدِيْنَ. وَالشَّاكِرِيْنَ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ۔

मुबादरत इलल् ख़ैरात

अ़ल्लामा नववी रह० ने आगे जो बाब क़ायम किया है, वह यह है:

"باب المبادرة الى الخير"

इसके मायने यह हैं कि जब इन्सान अपनी हक़ीक़त पर ग़ौर करेगा, अल्लाह जल्ल जलालुहू की अ़ज़मते शान, उसकी क़ुदरते कामिला और हिक्मते बालिग़ा पर ग़ौर करेगा, उसकी शाने रबूबियत पर ग़ौर करेगा, तो इस तफ़क्कुर (ग़ौर व फ़िक्र) के नतीजे में अल्लाह तबारक व तआ़ला की इबादत की तरफ़ दिल माइल होगा और ख़ुद बख़ुद दिल में जज़्बा पैदा होगा कि जिस मालिक ने यह सारी कायनात बनाई है और जिस मालिक ने ये नेमतें मुझ पर नाज़िल फ़रमाई हैं, और जिस मालिक ने मुझे रहमतों की बारिश में

रखा है, उस मालिक का भी मुझ पर कोई हक होगा? जब यह जज़्बा और मैलान पैदा हो, उस वक़्त क्या करना चाहिये?

इस सवाल के जवाब के लिये अ़ल्लामा नववी रह० ने यह बाब कायम फ़रमाया है कि जब भी अल्लाह तआ़ला की इबादत का दाईया (जज़्बा) पैदा हो, और किसी नेक काम के करने का मुहर्रिक सामने आये, तो उस वक़्त एक मोमिन का काम यह है कि जल्द से जल्द उस नेक काम को करले, उसमें देर न लगाये, यही मायने हैं "मुबादरत" के, यानी किसी काम को जल्दी से कर लेना, टाल मटोल न करना, और आइन्दा कल पर न टालना।

नेकी के कामों में रेस और दौड़

और अ़ल्लामा नववी सबसे पहले यह आयते करीमा लाये हैं, कि:

"وَسَارِعُوْا اِلٰى مَغْفِرَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا السَّمٰوٰتُ وَالْاَرْضُ اُعِدَّتْ لِلْمُتَّقِيْنَ"

तमाम इन्सानियत को ख़िताब करके अल्लाह तआ़ला फ़रमा रहे हैं कि, अपने परवर्दिगार की मग़फ़िरत और उस जन्नत की तरफ़ जल्दी से दौड़ो, जिसकी चौड़ाई आसमानें और ज़मीन के बराबर बल्कि इससे भी ज़्यादा है, और वह मुत्तक़ी लोगों के लिये तय्यार की गयी है।

"मुसारअ़त" के मायने जल्द से जल्द कोई काम करना, दूसरों से आगे बढ़ने की कोशिश करना, एक दूसरी आयत में फ़रमाया कि: "فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرَاتِ" यानी भलाई और नेकी के कामों में रेस और दौड़ लगाओ, ख़ुलासा इसका यह है कि जब किसी नेक काम का इरादा और दाईया दिल में पैदा हो तो उसको टलाओ नहीं।

शैतानी दाव

इसलिये कि शैतान के दाव और उसके हरबे हर एक के साथ अलग अलग होते हैं, काफ़िर के लिये और हैं, मोमिन के लिये और हैं, मोमिन के दिल में शैतान यह बात नहीं डालेगा कि यह नेकी का काम मत किया करो ये बुरे काम हैं, यह बात बराहे रास्त उसके दिल में नहीं डालेगा, इसलिये कि वह जानता है कि यह ईमान वाला होने की वजह से नेकी के काम को बुरा नहीं समझता, लेकिन मोमिन के साथ उसका यह हरबा होता है कि उससे यह कहता है कि यह नमाज़ पढ़ना, यह फ़लां नेक काम करना तो अच्छा है, इसको करना चाहिये, लेकिन इन्शा अल्लाह कल से शुरू करेंगे, अब जब कल आयेगी तो हो सकता है वह उस जज़्बे को भूल ही जाये, और फिर जब कल आयेगी तो फिर यह कहेगा कि अच्छा भाई कल से शुरू करूंगा, तो वह कल कभी ज़िन्दगी भर नहीं आयेगी, या किसी अल्लाह वाले की बात दिल में असर कर गयी कि यह बात तो सही है, अमल करना चाहिये, अपनी ज़िन्दगी में तब्दीली लानी चाहिये, गुनाहों को छोड़ना चाहिये, नेकियों को इख़्तियार करना चाहिये, लेकिन इन्शा अल्लाह इस पर जल्द से जल्द अमल करेंगे, जब उसे टला दिया तो फिर उस पर कभी अमल की नौबत नहीं आयेगी।

क़ीमती ज़िन्दगी से फ़ायदा उठा लो

इसी तरह ज़िन्दगी के औक़ात गुज़रते जारहे हैं, उमर गुज़रती जा रही है, कुछ पता नहीं कि कितनी उमर है? कुरआन करीम का इर्शाद है कि कल पर मत टालो, जो दाईया (जज़्बा) इस वक़्त पैदा हुआ, उस पर इसी वक़्त अमल करो, क्या मालूम कि कल तक यह दाईया रहे या न रहे, अव्वल तो यह भी पता नहीं कि तुम ख़ुद

ज़िन्दा रहो या न रहो, और अगर तुम खुद ज़िन्दा रहे तो यह पता नहीं कि यह दाईया बाकी रहेगा कि नहीं? और अगर दाईया बाकी रहा तो क्या मालूम उस वक़्त हालात मुवाफ़िक़ हों या न हों, बस इस वक़्त जो दाईया पैदा हुआ है उस पर अ़मल करके फ़ायदा हासिल कर लो।

नेकी का दाईया अल्लाह तआ़ला का मेहमान है

यह दाईया अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से मेहमान है, इस मेहमान की ख़ातिर मुदारात कर लो, इसकी ख़ातिर यह है कि इस पर अ़मल करो, अगर नफ़िल नमाज़ पढ़ने का दाईया पैदा हुआ हो, और यह सोचा कि यह फ़र्ज़ व वाजिब तो है नहीं, अगर नहीं पढ़ेंगे तो गुनाह तो नहीं होगा, चलो छोड़ दो, यह तुमने इस मेहमान की ना—क़दरी कर दी जो अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारी इस्लाह की ख़ातिर भेजा था अगर तुमने उसी वक़्त फ़ौरन अ़मल न किया तो पीछे रह जाओगे, फिर मालूम नहीं दोबारा मेहमान आये या न आये, बल्कि वह आना बन्द कर देगा, क्योंकि वह मेहमान यह सोचेगा कि यह शख़्स मेरी बात मानता नहीं, और मेरी ना—क़दरी करता है, मेरी ख़ातिर मुदारात नहीं करता, मैं अब इसके पास नहीं जाता, बहर हाल वैसे तो हर काम जल्दी और उज्लत में करना बुरा है, लेकिन जब दिल में किसी नेक काम का दाईया पैदा हो तो उस पर जल्दी अ़मल कर लेना ही अच्छा है।

फ़ुर्सत के इन्तिज़ार में न रहो

अगर अपनी इस्लाह की फ़िक्र का दिल में ख़्याल आया कि ज़िन्दगी वैसे ही गुज़री जा रही है, नफ़्स की इस्लाह होनी चाहिये, और अपने अख़्लाक़ और आमाल की इस्लाह होनी चाहिये, लेकिन साथ ही यह सोचा कि जब फ़लां काम से फ़ारिग़ हो जायेंगे, फिर

इस्लाह शुरू करेंगे, यह फ़ुर्सत के इन्तिज़ार में उमरे अज़ीज़ के जो लम्हात गुज़र रहे हैं, वह फ़ुर्सत कभी आने वाली नहीं।

काम करने का बेहतरीन गुर

हमारे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह० फ़रमाया करते थे कि "जो काम फ़ुर्सत के इन्तिज़ार में टाल दिया, वह टल गया, वह फिर नहीं होगा, इस वासते कि तुमने उसको टाल दिया, काम करने का तरीक़ा यह है कि दो कामों के दरमियान तीसरे काम को घुसा दो, यानी वे दो काम जो तुम पहले से कर रहे हो, अब तीसरा काम करने का ख़्याल आया, तो उन दो कामों के दरमियान तीसरे काम को ज़बरदस्ती घुसा दो, वह तीसरा काम भी हो जायेगा, और अगर यह सोचा कि इन दो कामों से फ़ारिग़ होकर फिर तीसरा काम करेंगे तो फिर वह काम नहीं होगा, यह मंसूबा और प्लान बनाना कि जब यह काम हो जायेगा तो फिर काम करेंगे, यह सब टालने वाली बातें हैं, और शैतान आम तौर पर इसी तरह धोखे में रखता है।

नेक कामों में रेस लगाना बुरा नहीं

इसलिये "मुबादरत इलल् ख़ैरात" यानी नेक कामों में जल्दी करना और आगे बढ़ना क़ुरआन व सुन्नत का तक़ाज़ा है और अल्लामा नववी रह० ने इसी लिये यह बाब क़ायम फ़रमाया है, "बाबुल मुबादरत इलल् ख़ैर" यानी भलाईयों की तरफ़ जल्दी से सब्क़त करना, अल्लामा नववी रह० ने यहां दो लफ़्ज़ इस्तेमाल किये, एक "मुबादरत" यानी जल्दी करना, दूसरा "मुसाबक़त" यानी मुक़ाबला करना, रेस लगाना, एक दूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश करना, और यह मुक़ाबला करना और रेस लगाना नेकी के मामले में महबूब है, और चीज़ों में एक दूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश

करना बुरा है, जैसे माल के हासिल करने में, इज़्ज़त के हासिल करने में, शोहरत के मामले में, दुनिया के हासिल करने में, जाह (ओहदा व मर्तबा) तलबी के मामले में, इन सब में यह बात बुरी है, कि इन्सान दूसरे से आगे बढ़ने की हिर्स में लग जाये, लेकिन नेकियों के मामले में एक दूसरे से आगे बढ़ने का जज़्बा एक महमूद (पसन्दीदा) और क़ाबिले तारीफ़ जज़्बा है, कुरआन करीम ख़ुद कह रहा है कि, "فاستبقوا الخيرات" नेकियों में एक दूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश करो, एक शख़्स को तुम देख रहे हो कि माशा अल्लाह इबादत में लगा हुआ है, ताआ़त में लगा हुआ है, गुनाहों से बच रहा है, अब कोशिश करो कि मैं उससे भी ज़्यादा आगे बढ़ जाऊं, इसमें रेस लगाना बुरा नहीं।

दुनियावी अस्बाब में रेस लगाना जायज़ नहीं

यहां मामला उल्टा हो गया है, इस वक़्त हमारी पूरी ज़िन्दगी रेस लगाने में गुज़र रही है, लेकिन रेस इसमें लग रही है कि पैसा ज़्यादा से ज़्यादा कहां से आ जाये, दूसरे ने इतना कमा लिया, मैं उससे ज़्यादा कमा लूं, दूसरे ने ऐसा बंगला बना लिया, मैं उससे आला दर्जे का बना लूं, दूसरे ने ऐसी कार ख़रीदी है, मैं उससे आला दरजे की ख़रीद लूं, दूसरे ने ऐसा साज़ व सामान जमा कर लिया, मैं उससे आला दर्जे का जमा कर लूं। पूरी क़ौम इसी रेस में मुब्तला है, और इस रेस में हलाल व हराम की फ़िक्र मिट गयी है, इसलिये कि जब दिमाग़ पर यह जज़्बा सवार हो गया कि दुनियावी साज़ व सामान में दूसरे से आगे बढ़ना है, तो हलाल माल के ज़रिये आगे निकलना तो बड़ा मुश्किल है, तो फिर हराम की तरफ़ रुजू करना पड़ता है और अब हलाल व हराम एक हो रहे हैं, जिस चीज़ में रेस लगाना और मुक़ाबला शरीअ़त में बुरा था वहां सब

मुकाबले पर लगे हुए हैं और एक दूसरे से आगे बढ़ रहे हैं, और जिस चीज़ में मुक़ाबला करना, रेस लगाना, एक दूसरे से आगे बढ़ने की फ़िक्र करना मतलूब था उसमें पीछे रह गये हैं।

ग़ज़्वा-ए-तबूक के मौक़े पर हज़रत उमर फ़ारूक रज़ि० का हज़रत अबू बक्र रज़ि० से मुक़ाबला

हज़रात सहाबा-ए-किराम रज़ि० को देखिये कि ग़ज़्वा-ए-तबूक के मौक़े पर उन्हों ने क्या किया, ग़ज़्वा-ए-तबूक बड़ा कठिन ग़ज़्वा था, ऐसा सब्र आज़मा ग़ज़्वा और ऐसी सब्र आज़मा मुहिम शायद कोई और पेश नहीं आई जैसी ग़ज़्वा-ए-तबुक के मौक़े पर पेश आई, सख़्त गरमी का मौसम, वह मौसम जिसमें आसमान से शोले बरस्ते हैं, ज़मीन आग उगलती है, और तक़रीबन बारह सौ किलो मीटर का मैदान और जंगलों का सफ़र, और खजूरें पकने का ज़माना, जिस पर सारे साल की मईशत (गुज़ारे) का दारो मदार होता है, सवारियां मयस्सर नहीं, पैसे मौजूद नहीं, और उस वक़्त यह हुक्म दिया जा रहा है कि हर मुसलमान के लिये आम ऐलान है कि वह इस ग़ज़्वे में चले, और इसमें शरीक हो, और नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मस्जिदे नबवी में खड़े होकर ऐलान फ़रमाया कि यह ग़ज़्वा का मौक़ा है, और सवारियों की ज़रूरत है, ऊंटनियां चाहियें, पैसों की ज़रूरत है, मुसलमानों को चाहिये कि बढ़ चढ़ कर इसमें चन्दा दें, और जो शख़्स इसमें चन्दा देगा, मैं उसके लिये जन्नत की ज़मानत देता हूं, अब सहाबा-ए-किराम कहां पीछे रहने वाले थे, जब्कि ख़ुद नबी-ए-करीम सल्ल-ल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़बान से यह जुम्ला सुन लें कि उनके लिये जन्नत की ज़मानत है, अब हर शख़्स अपनी गुंजायश के मुताबिक़ चन्दा दे रहा है, कोई कुछ ला रहा है, कोई कुछ ला रहा

है, हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि० फ़रमाते हैं कि मैं अपने घर गया, और मैंने अपने घर का जितना कुछ साज़ व सामान रुपया पैसा था वह आधा आधा तक़्सीम कर दिया, और फिर आधा हिस्सा लेकर नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में चला गया और दिल में ख़्याल आने लगा कि आज वह दिन है कि शायद मैं अबू बक्र रज़ि० से आगे निकल जाऊं, यह जज़्बा पैदा हो रहा है, कि मैं उनसे आगे बढ़ जाऊं, यह है "मुसाबक़त इलल् ख़ैर" कभी उनके दिल में यह जज़्बा पैदा नहीं हुआ कि मैं उसमान ग़नी रज़ि० से पैसे में आगे बढ़ जाऊं, कभी यह जज़्बा पैदा नहीं हुआ कि अब्दुर्रहमान बिन औफ़ के पास बहुत पैसे हैं, उनसे ज़्यादा पैसे मुझे हासिल हो जायें, यह जज़्बा पैदा हुआ कि सिद्दिके अक्बर रज़ि० को अल्लाह तआला ने नेकी का जो मक़ाम बख़्शा है, उनसे आगे बढ़ जाऊं, थोड़ी देर में हज़रत सिद्दिके अक्बर रज़ि० भी तशरीफ़ लाये, और जो कुछ था हाज़िर कर दिया, सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पूछाः ऐ उमर! घर में क्या छोड़ आये हो? हज़रत उमर रज़ि० ने अर्ज़ कियाः या रसूलल्लाह! आधा माल घर वालों के लिये छोड़ दिया, और आधा ग़ज़्वा के लिये और जिहाद के लिये ले आया हूं, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको दुआयें दीं कि अल्लाह तुम्हारे माल में बर्कत दे, उसके बाद सिद्दिके अक्बर रज़ि० से पुछाः कि तुमने अपने घर में क्या छोड़ा? कहाः या रसूलल्लाह! घर में अल्लाह और उसके रसूल को छोड़ आया हूं, जो कुछ घर में था सारा का सारा समेट कर यहां ले आया हूं, हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि० फ़रमाते हैं कि उस दिन मुझे पता चला कि मैं चाहे सारी उमर कोशिश करता रहूं लेकिन हज़रत सिद्दिके अक्बर रज़ि० से आगे नहीं बढ़ सकता। (अबू दाऊद)

एक मिसाली मामला

एक मर्तबा फ़ारूके आज़म रज़ि० ने हज़रत अबू बक्र सिद्दिक़ रज़ि० से फ़रमाया, आप मेरे साथा एक मामला करें तो मैं बड़ा एहसान मंद हूंगा, उन्हों ने पूछाः क्या मामला? फ़ारूके आज़म रज़ि० ने फ़रमाया किः मेरी सारी उमर की जितनी नेकियां हैं, जितने नेक आमाल हैं, वे सब मुझसे ले लें, और एक रात जो आपने नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ गुज़ारी, वह मुझे दे दें (यानी वह एक रात जो आपने नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ ग़ारे सौर में गुज़ारी, वह मेरे सारे आमाल पर भारी है) ग़र्ज़ यह कि सहाबा–ए–किराम रज़ि० की ज़िन्दगी को देखें तो कहीं यह बात नज़र नहीं आती कि यह सोचें कि फ़लां ने इतने पैसे जमा कर लिये हैं, मैं भी जमा कर लूं, फ़लां का मकान बड़ा शनदार है, मेरा भी वैसा हो जाए, फ़लां की सवारी बहुत अच्छी है, वैसी मुझे भी मिल जाती, लेकिन आमाले सालिहा (नेक आमाल) में मुसाबक़त (दौड़) नज़र आती है, और आज हमारा मामला बिल्कुल उल्टा चल रहा है, आमाले सालिहा में आगे बढ़ने की कोई फ़िक्र नहीं, और माल के अन्दर सुबह से लेकर शाम तक दौड़ हो रही है, और एक दूसरे से आगे बढ़ने की फ़िक्र में हैं।

हमारे लिये नुस्ख़ा–ए–अक्सीर

नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक अजीब इर्शाद फ़रमाया, जो हमारे लिये नुस्ख़ा–ए–अक्सीर है, फ़रमाया किः दुनिया के मामले में हमेशा अपने से नीचे वाले को देखो, और अपने से कमतर हैसियत वाले के साथ रहो, उनकी सोहबत इख़्तियार करो और उनके हालात देखो, और दीन के मामले में हमेशा अपने से ऊंचे आदमी को देखो, और उनकी सोहबत

इख़्तियार करो, क्यों? इसलिये कि जब दुनिया के मामले में अपने से कमतर लोगों को देखोगे, तो जो नेमतें अल्लाह तआला ने तुम्हें दी हैं, उन नेमतों की क़दर होगी कि यह नेमत उसके पास नहीं है, और अल्लाह तआला ने मुझे दे रखी है, और इस से क़नाअत पैदा होगी, शुक्रिया पैदा होगा और दुनिया तलबी की दौड़ का जज़्बा ख़त्म होगा, और दीन के मामले में जब ऊपर वालों को देखोगे कि यह शख़्स तो दीन के मामले में मुझसे आगे बढ़ गया है तो उस वक़्त अपनी कमी का एहसास होगा, और आगे बढ़ने की फ़िक्र होगी। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुबारक ने कैसे राहत हासिल की

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुबारक रह० जो मुहद्दिस भी हैं, फ़क़ीह हैं, सूफ़ी भी हैं, वह फ़रमाते हैं किमैं ने अपनी ज़िन्दगी का इब्तिदाई हिस्सा मालदारों के साथ गुज़ारा (ख़ुद भी मालदार थे) सुबह से शाम तक मालदारों के साथ रहता था, लेकिन जब तक मालदारों की सोहबत में रहा, मुझसे ज़्यादा ग़मग़ीन इन्सान कोई नहीं था, क्योंकि जहां जाता हूं, यह देखता हूं कि उसका घर मेरे घर से अच्छा है, उसकी सवारी मेरी सवारी से अच्छी है, उसका कपड़ा मेरे कपड़े से अच्छा है, इन चीज़ों को देख देख कर मेरे दिल में कुढ़न पैदा होती थी कि मुझे तो मिला नहीं और उसको मिल गया, लेकिन बाद में दुनियावी हैसियत से जो कम माल वाले थे, उनकी सोहबत इख़्तियार की, और उनके साथ उठने बैठने लगा तो फ़रमाते हैं कि "फ़स्तरहतु" यानी मैं राहत में आ गया, इस वासते कि जिसको भी देखता हूं तो मालूम होता है कि मैं तो बहुत ख़ुशहाल हूं, मेरा खाना भी उसके खाने से अच्छा है, मेरा कपड़ा भी

उसके कपड़े से अच्छा है, मेरा घर भी उसके घर से अच्छा है, मेरी सवारी भी उसकी सवारी से अच्छी है, इस वासते अब अल्हमदु लिल्लाह राहत में आ गया हूं।

वर्ना कभी क़नाअ़त हासिल न होगी

यह नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इर्शाद पर अ़मल करने की बर्कत है, कोई शख़्स तजुर्बा करके देख ले, दुनिया के अन्दर अपने से ऊंचे को देखते रहोगे तो कभी पेट नहीं भरेगा, कभी क़नाअ़त हासिल न होगी, कभी आंखों को सैरी नसीब न होगी, हर वक़्त यही फ़िक्र ज़ेहन पर सवार रहेगी जिसके बारे में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"لوكان لابن آدم واديًا من ذهب أحب أن يكون له واديان"

(صحیح بخاری)

अगर आदम के बेटे को एक वादी सोने की भर कर मिल जाये तो वह यह कहेगा कि दो वादियां मिल जायें, और जब दो मिल जायेंगी तो कहेगा कि तीन मिल जायें, और इसी तरह पूरी ज़िन्दगी इसी दौड़ में सर्फ़ हो जायेगी, और कभी राहत की मन्ज़िल पर, क़नाअ़त और सुकून की मन्ज़िल पर पहुंच नहीं पायेगा।

माल व दौलत के ज़रिये राहत नहीं ख़रीदी जा सकती

मेरे वालिद हज़रत मुफ़्ती शफ़ी साहिब क़द्दसल्लाहू सिर्रहू क्या अच्छी बात फ़रमाया करते थे कि, लौहे दिल (दिल की तख़्ती) पर नक़्श करने के क़ाबिल है, फ़रमाया करते थे कि राहत और आराम और चीज़ है और अस्बाबे राहत और चीज़ हैं, असबाबे राहत से राहत हासिल होना कोई ज़रूरी नहीं "राहत" अल्लाह जल्ल जलालुहू का अ़तीया है, और हमने आज अस्बाबे राहत का नाम

राहत रख दिया है, बहुत सारा रुपया रखा हो तो क्या भूख के वक़्त वह उसको खालेगा? क्या अगर कपड़े की ज़रूरत होगी तो उसी को पहन लेगा? क्या गर्मी लगने के वक़्त वह पैसा उसको ठन्ड पहुंचायेगा? बज़ाते खुद न तो यह पैसा राहत है, और न ही इसके ज़रिये तुम राहत ख़रीद सकते हो, और अगर इसके ज़रिये राहत के अस्बाब ख़रीद भी लिए, जैसे आराम की ख़ातिर तुमने इसके ज़रिए खाने पीने की चीज़ें ख़रीद लीं, अच्छे कपड़े ख़रीद लिये, घर की सजावट का सामान ख़रीद लिया, लेकिन क्या राहत हासिल हो गई? याद रखो, महज़ इन अस्बाब को जमा कर लेने से राहत का मिल जाना कोई ज़रूरी नहीं, इसलिये कि एक शख़्स के पास राहत के तमाम अस्बाब मौजूद हैं, लेकिन साहिब को गोली खाये बग़ैर नींद नहीं आती, बिस्तर आराम देने वाला, एयर कन्डी–शन्ड कमरा और नौकर चाकर सभी कुछ मौजूद हैं, लेकिन नींद नहीं आ रही है। अब बताओ, अस्बाबे राहत सारे मौजूद, लेकिन नींद मिली? राहत मिली? और एक शख़्स वह है जिसके घर पर न तो पक्की छत है, बल्कि टीन की चादर है, न चारपाई है, बल्कि फ़र्श पर सो रहा है, लेकिन बस एक हाथ अपने सर के नीचे रखा, और सीधा नींद के अन्दर गया, और आठ घन्टे की भर पूर नींद लेकर सुबह को बेदार हुआ, बताओ राहत इसको मिली या उसको मिली? उसके पास अस्बाबे राहत मौजूद थे, लेकिन राहत न मिली, और इस मज़दूर के पास अस्बाबे राहत मौजूद नहीं थे, लेकिन राहत मिल गई, याद रखो! अगर दुनिया के अस्बाब जमा करने की फ़िक्र में लग गये, तो ख़ूब समझ लो कि अस्बाबे राहत तो जमा हो जायेगें, लकिन राहत फिर भी हासिल न होगी।

वह दौलत किस काम की जो औलाद को बाप की शक्ल न दिखा सके

हज़रत वालिद कुद्दस सिर्रहू के ज़माने में एक साहिब थे, बहुत बड़े मिल ओनर, और उनका कारोबार यहां सिर्फ़ पकिस्तान में ही नहीं था, बल्कि मुख़्तलिफ़ मुल्कों में उनका कारोबार फैला हुआ था, एक दिन वैसे ही वालिद साहिब ने पूछा कि आपकी औलाद कितनी है? उन्हों ने जवाब दिया कि एक लड़का सिंगापुर में है, एक लड़का फ़लां मुल्क में है, सब दूसरे मुल्कों में हैं, दोबारा पूछा कि आपकी अपने लड़कों से मुलाक़ात तो होती रहती होगी, वे आते जाते रहते हैं? उन्हों ने बताया कि एक लड़के से मुलाक़ात हुए पन्द्रह साल हो गये हैं, पन्द्रह साल से बाप ने बेटे की शक्ल नहीं देखी, बेटे ने बाप की शक्ल नहीं देखी, तो अब बताओ! ऐसा रुपया और ऐसी दौलत किस काम की कि जो औलाद को बाप की शक्ल न दिखा सके, और बाप को औलाद की शक्ल न दिखा सके। यह सारी दौड़ धूप अस्बाबे राहत के लिये हो रही है, लेकिन राहत हासिल नहीं है, इसलिये याद रखो कि राहत पैसे के ज़रिये नहीं ख़रीदी जा सकती है।

पैसे से हर चीज़ नहीं ख़रीदी जा सकती

अभी चन्द रोज़ पहले एक साहिब ने ज़िक्र किया कि वह रमज़ान में उमरे को तशरीफ़ ले गये, और एक और साहिब दौलत मन्द भी उमरे को जा रहे थे, मैंने उनसे कहा कि उमरे को जा रहे हो पहले से ज़रा इन्तिज़ाम कर लेना, ताकि रहने और खाने पीने के लिये सही इन्तिज़ाम हो जाये, वह अपनी दौलत के घमंड में थे, कहने लगे: अरे मियां! छोड़ो इन्तिज़ाम वग़ैरह, अल्लाह का शुक्र है, पैसे बहुत मौजूद हैं, पैसे से दुनिया की हर चीज़ मिल जाती है,

आराम देह रिहाइश भी मिल जाती है, खाना भी मिल जाता है, कोई फ़िक्र की बात नहीं, हमारे पास पैसा ख़ूब है, दस रियाल की जगह बीस रियाल ख़र्च कर देंगे, वही साहिब बता रहे थे कि मैंने दो दिन के बाद देखा तो हरम शरीफ़ के दरवाज़े पर सर झुकाये बैठे हैं, मैंने पूछा कि क्या हुआ? कहने लगे कि सहरी में उठे थे लेकिन होटल में खाना नहीं मिला, खाना ख़त्म हो गया था, दिमाग़ में यह घमंड था कि पैसे से हर चीज़ ख़रीदी जा सकती है, अल्लाह तआ़ला ने उन्हे दिखा दिया कि देखो पैसा तुम्हारी जेब में रखा रह गया, और रोज़ा बग़ैर सहरी के रखा।

सुकून हासिल करने का रास्ता

यह पैसा, यह साज़ व सामान, यह माल व दौलत जो कुछ तुम जमा कर रहे हो, यह अपने आप में राहत देने वाली चीज़ नहीं है, राहत पैसे से नहीं ख़रीदी जा सकती, वह महज़ अल्लाह तआ़ला का अ़तीया है, जब तक क़नाअ़त पैदा नहीं होगी, और जब तक यह ख़्याल पैदा नहीं होगा कि अल्लाह तआ़ला हलाल तरीक़े से जितना मुझे दे रहे हैं, उसी से मेरा काम चल रहा है, उस वक़्त तक तुम्हें सुकून हासिल नहीं होगा, वर्ना कितने लोग ऐसे हैं जिनके पास दौलत बेहद व बेहिसाब है, लेकिन एक लम्हे का सुकून हीं, एक लम्हे का क़रार नहीं, रात को नींद नहीं आती, और भूख उड़ी होती है, यह सब इस दुनिया की दौड़का नतीजा है, इसलिये कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह फ़रमाते हैं कि दुनिया के मामले में अपने से ऊंचे आदमी को न देखो कि वह कहां जा रहा है, बल्कि अपने से नीचे वाले को देखो कि उनके मुक़ाबले में तुम्हें अल्लाह तआ़ला ने क्या कुछ दे रख है, इसके ज़रिये तुम्हें क़रार आयेगा, तुम्हें राहत मिलेगी और सुकून हासिल होगा, लेकिन

दीन के मामले में अपने से ऊंचे को देखो, क्यों? इसलिये कि उसके ज़रिये आगे बढ़ने का जज़्बा पैदा होगा, और आगे बढ़ने की बेताबी होगी, लेकिन वह बड़ी लज़ीज़ बेताबी है, दुनिया जमा करने की बेताबी और बेचैनी तक्लीफ़ देह है, वह परेशान करने वाली है, यह रातों की नींद उड़ा देती है, वह भूख उड़ा देती है, लेकिन दीन के लिये जो बेताबी होती है वह बड़ी मज़ेदार है, बड़ी लज़ीज़ है, अगर इन्सान सारी उमर इसी बेताबी में रहे तब भी वह लज़्ज़त में रहेगा, राहत और सुकून में रहेगा, लेकिन हमारी ज़िन्दगी का पहिया उल्टा चल रहा है, अल्लाह तआ़ला हमारी फ़िक्र को दुरुस्त फ़रमाये हमारे दिलों को दुरुस्त फ़रमाये, और जो रास्ता अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमें बताया है, उस पर अल्लाह तआ़ला हमें चलने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, इसी सिलसिले में आगे ये हदीसें आ रही हैं।

फ़ितने का ज़माना आने वाला है

यह पहली हदीस हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि:

"اِنَّ رَسُوْلَ اللّٰهِ صَلَى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: بَادِرُوْا بِالْاَعْمَالِ الصَّالِحَةِ، فَتَكُوْنُ فِتَنٌ كَقِطَعِ اللَّيْلِ الْمُظْلِم يُصْبِحُ الرَّجُلُ مُؤْمِنًا وَيُمْسِي كَافِرًا، وَيُمْسِي مُؤْمِنًا وَيُصْبِحُ كَافِرًا، يَبِيْعُ دِيْنَهٗ بِعَرَضٍ مِّنَ الدُّنْيَا. (صحیح مسلم)

फ़रमाया कि नेक अ़मल जल्दी जल्दी कर लो, जितना वक़्त मिल रहा है, उसको ग़नीमत जानो, क्यों? इसलिये कि बड़े फ़ितने आने वाले हैं, ऐसे फ़ितने जैसे अन्धेरी रात के टुक्ड़े, इसका मतलब यह है कि जब अन्धेरी रात शुरू होती है, और उसका एक हिस्सा गुज़र जाता है तो उसके बाद आने वाला दूसरा हिस्सा भी रात ही का हिस्सा होता है, और उसमें तारीकी (अंधेरा) और बढ़ती चली जाती है, और फिर तीसरे हिस्से में अंधेरा और बढ़ जाता है, अब

अगर आदमी इस इन्तिज़ार में रहे कि अभी मग़रिब का वक़्त है थोड़ी सी तारीकी है, कुछ वक़्त गुज़र जाने के बाद रोशनी हो जायेगी, उस वक़्त काम करूंगा तो वह शख़्स अहमक़ है, इस वासते कि अब जो वक़्त गुज़रेगा तो और ज़्यादा तारीकी का वक़्त आयेगा, इस्लिये सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमा रहे हैं कि अगर तुम्हारे दिल में यह ख़्याल है कि और थोड़ा सा वक़्त गुज़र जाये फिर काम शुरू करूंगा तो याद रखो कि और जो वक़्त आने वाला है वह और ज़्यादा तारीकी वाला है, आइन्दा जो फ़ितने आने वाले हैं, वे भी अंधरी रात के टुकड़ों की तरह हैं, कि हर फ़ितने के बाद बड़ा फ़ितना आने वाला है, फिर आगे फ़रमाया कि: सुबह को इन्सान मोमिन होगा और शाम को काफ़िर हो जायेगा, यानी ऐसे फ़ितने आने वाले हैं जो इन्सान के ईमान को सल्ब (हज़्म) कर लेंगे, सुबह को मोमिन बेदार हुआ था, लेकिन फ़ितने का शिकार होकर शाम के वक़्त काफ़िर हो गया, और शाम को मोमिन था, सुबह को काफ़िर हो गया, और यह काफ़िर इस तरह हो जायेगा कि अपने दीन को दुनिया के थोड़े से साज़ व सामान के बदले में बेच डालेगा, सुबह को मोमिन उठा था और जब कारोबारे ज़िन्दगी में पहुंचा तो फ़िक्र लगी हुई थी दुनिया जमा करने की, और माल व दौलत जमा करने की, और उस दौरान माल हासिल करने का एक ऐसा मौक़ा सामने आया जिसके साथ शर्त यह थी कि दीन छोड़ दो तुम्हें यह दुनिया मिल जायेगी, उस वक़्त दिल में कश–मकश पैदा हुई कि अपने दीन को छोड़ कर यह माल हासिल कर लूं, या इस माल पर लात मार कर दीन को इख़्तियार कर लूं, लेकिन चूंकि वह शख़्स पहले से टलाने का आदी बाना हुआ था, इसलिये उसने सोचा कि दीन के बारे में बाज़ पुर्स

मालूम नहीं कब होगी? कब मरेंगे? और कब क़ियामत क़ायम होगी? कब हमारा हिसाब व किताब होगा? वह तो बाद की बात है, अभी फ़ौरी मामला तो यह है कि माल हासिल कर लो, अब वह दुनिया का साज़ व सामान हासिल करने के लिये अपना दीन बेच डालेगा, इसलिये फ़रमाया कि सुबह को मोमिन उठा था, और शाम को काफ़िर होकर सोया, अल्लाह तआला महफ़ूज़ रखे, अल्लाह तआला बचाये, आमीन।

"अभी तो जवान हैं" शैतान का धोखा है

इसलिये किस चीज़ का इन्तिज़ार कर रहे हो? अगर नेक अ़मल करना है और मुसलमान की तरह ज़िन्दा रहना है तो इन्तिज़ार किस चीज़ का है? जो अ़मल करना है बस जल्दी से कर लो, अब हम अपने अपने गरेबान में मुंह डाल कर देख लें कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इस इरशाद पर अ़मल कर रहे हैं या नहीं? हमारे दिलों में दिन रात यह ख़्याल आता रहता है कि अच्छा अभी नेक अ़मल करेंगे, और शैतान यह धोखा देता रहता है कि अभी तो बहुत उमर पड़ी है, अभी तो नौजवान हैं, अभी तो अधेड़ उमर को पहुंचेंगे, और फिर बूढ़े होंगे, फिर उस वक़्त नेक आमाल शुरू कर देंगे, नबी–ए–करीम सरकारे दो आ़लम सल्ल–ल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जो हकीम हैं, और हमारी रगों से वाक़िफ़ हैं, वह जानते हैं कि शैतान उनको इस तरह बहकायेगा, इसलिये फ़रमा दिया कि जल्दी जल्दी कर लो, और जो नेक कामों की बातें सुन रहे हो, उस पर अ़मल करते चले जाओ, कल का इन्तिज़ार मत करो, इसलिये कि कल आने वाला फ़ितना मालूम नहीं तुम्हें कहां पहुंचायेगा, अल्लाह तआला हम सब की हिफ़ाज़त फ़रमाये, आमीन।

नफ़्स को बहला कर और धोखा देकर उससे काम लो

हमारे हज़रत डाक्टर अब्दुल हई साहिब रह० फ़रमाया करते थे कि नफ़्स को ज़रा धोखा देकर इससे काम लिया करो, अपना वाक़िआ बयान फ़रमाया कि रोज़ाना तहज्जूद पढ़ने का मामूल था, आख़िर उमर और कमज़ोरी के ज़माने में एक दिन बिहम्दिल्लाह तहज्जुद के वक़्त जब आंख खुली तो तबीयत में बड़ी सुस्ती और कसल था, दिल में ख़्याल आया कि आज तो तबीयत भी पूरी तरह ठीक नहीं है, कसल भी है, और उमर भी तुम्हारी ज़्यादा है, और तहज्जुद की नमाज़ कोई फ़र्ज़ व वाजिब भी नहीं है, पड़े रहो, और आज अगर तहज्जुद छोड़ दोगे तो क्या हो जायेगा, फ़रमाते हैं कि मैंने सोचा कि बात तो ठीक है, कि तहज्जुद फ़र्ज़ वाजिब भी नहीं है, और तबीयत भी ठीक नहीं है, बाक़ी यह वक़्त तो अल्लाह तआला की बारगाह में क़ुबूलियत का वक़्त है, हदीस में आता है कि जब रात का एक तिहाई हिस्सा गुज़र जाता है तो अल्लाह तआला की ख़ुसूसी रहमतें ज़मीन वालों पर मुतवज्जह होती हैं और अल्लाह तआला की तरफ़ से मुनादी पुकारता है कि कोई मग़्फ़िरत का मांगने वाला है कि उसकी मग़्फ़िरत की जाये, ऐसे वक़्त को बेकार गुज़ारना भी ठीक नहीं है, नफ़्स को बहला दिया कि अच्छा ऐसा करो कि उठ कर बैठ जाओ, और बैठ कर थोड़ी सी दुआ कर लो, और दुआ करके सो जाना, चुनांचे उठ कर बैठ गया, और दुआ करनी शुरू कर दी, दुआ करते करते मैंने नफ़्स से कहा कि मियां: जब तुम उठ कर बैठ गये तो नींद तो तुम्हारी चली गयी, अब तो गुस्ल ख़ाने तक चले जाओ, और इस्तिंजा वग़ैरह से फ़ारिग़ हो जाओ, फिर आराम से आकर लेट जाना, फिर जब गुस्ल ख़ाने

पहुंचा और इस्तिंजा वग़ैरह से फ़ारिग़ हो गया तो सोचा कि चलो वुज़ू कर लो, इसलिये कि वुज़ू करके दुआ करने में कुबूलियत की उम्मीद ज़्यादा है, चुनांचे वुज़ू भी कर लिया, और बिस्तर पर वापस आकर बैठ गया, और दुआ शुरू कर दी, फिर नफ़्स को बहलाया कि बिस्तर पर बैठ कर क्या दुआ हो रही है, दुआ करने की जो तुम्हारी जगह है, वहीं जाकर दुआ कर लो, और नफ़्स को जाये नमाज़ तक खींच कर ले गया, और जाकर जल्दी से दो रक्अत तहज्जुद की नियत बांध ली।

फिर फ़रमाया कि: इस नफ़्स को थोड़ा सा धोखा दे देकर भी लाना पड़ता है, जिस तरह यह नफ़्स तुम्हारे साथ नेक काम को टलाने का मामला करता है इसी तरह तुम भी इसके साथ ऐसा ही मामला किया करो, और इसको खींच खींच कर ले जाया करो, इन्शा अल्लाह इसकी बरकत से अल्लाह तआला फिर उस अमल की तौफ़ीक़ अता फ़रमा देंगे।

अगर इस वक़्त देश के राष्ट्रपति का पैग़ाम आ जाये

एक मर्तबा फ़रमाया कि: सुबह फ़जर की नमाज़ के बाद दो घन्टे तक अपने मामूलात तिलावत ज़िक्र व अज़कार और तस्बीह में गुज़ारता हूं, एक दिन तबीयत में कुछ सुस्ती थी, मैंने अपने दिल में सोचा कि आज तो यह कह रहे हो कि तबीयत में कसल है, सुस्ती है, उठा नहीं जाता, अच्छा यह बताओ कि अगर कोई शख़्स इस वक़्त देश के राष्ट्रपति का पैग़ाम लेकर आये कि आपको कोई इनाम देने के लिये बुलाया गया है, तो क्या फिर भी सुस्ती बाक़ी रहेगी? फिर भी यह कसल बाक़ी रहेगा? नफ़्स ने जवाब दिया कि नहीं, उस वक़्त तो कसल और सुस्ती बाक़ी नहीं रहेगी, बल्कि दौड़े दौड़े जायेंगे, और जाकर इनाम वुसूल करने की कोशिश करेंगे,

और फिर अपने नफ़्स को मुख़ातब करके फ़रमाया किः यह वक़्त भी अल्लाह जल्ल जलालुहू के दरबार में हुज़ूरी का वक़्त है, और हुज़ूरी की बर्कत से अल्लाह तआला से इनामात वुसूल करने का वक़्त है, फिर कहां की सुस्ती और कहां का कसल, छोड़ो इस कसल और सुस्ती को, बस यह सोच कर अपने दिल को बहलाया, और अपने मामूलात में मश्गूल हो गया। बहर हालः यह नफ़्स और शैतान तो इन्सान के बहकाने में लगे हुए हैं, लेकिन इनको भी बहलाया करो, और जल्दी से उन आमाल को करने की फ़िक्र किया करो।

जन्नत का सच्चा तलबगार

तीसरी हदीस हज़रत जाबिर रज़ि० से रिवायत है, फ़रमाते हैं कि ग़ज़वा-ए-उहद की लड़ाई के दौरान जब्कि लड़ाई ज़ोरों पर है, मुसलमान और काफ़िरों की लड़ाई है, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम क़्यादत फ़रमा रहे हैं, मुसलमान कम हैं, और काफ़िर ज़्यादा हैं, मुसलमान बेसरो सामान हैं, और काफ़िर मुसल्लह (हथियार बन्द) हैं, और हर लिहाज़ से मुक़ाबला सख़्त है, उस वक़्त में एक देहाती क़िस्म का आदमी खजूरें खाता जा रहा था, उसने आकर नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पूछा कि या रसूलल्लाह यह लड़ाई जो आप करवा रहे हैं, इसमें अगर हम क़त्ल हो गये तो हमारा अन्जाम क्या होगा? सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जवाब दिया कि इसका अन्जाम जन्नत है, सीधे जन्नत में जाओगे, हज़रत जाबिर रज़ि० फ़रमाते हैं कि मैंने उसको देखा कि वह खजूरें खाता जा रहा था, लेकिन जब उसने यह सुना कि इसका अन्जाम जन्नत है, तो खजूरें फेंक कर सीधा जिहाद में घुस गया, यहां तक कि उसी में शहीद में हो गया,

इसलिये कि जब उसने यह सुन लिया कि इस जिहाद का अन्जाम जन्नत है, तो फिर इतनी ताख़ीर (देरी) भी गवारा नहीं की कि वह उन खजूरों को पूरा करके फिर जिहाद में शरीक हो, और अल्लाह तबारक व तआला ने उसको जन्नत के मक़ाम तक पहुंचा दिया, यह इसी की बर्कत थी कि नेकी का जो दाईया पैदा हुआ, उस पर अमल करने में ताख़ीर नहीं की, बल्कि फ़ौरन आगे बढ़ कर उस पर अमल कर लिया।

अज़ान की आवाज़ सुन कर हुज़ूर सल्ल० की हालत

हज़रत आयशा रज़ि० से एक सहाबी ने पूछा कि उम्मुल मोमिनीन! सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम घर के बाहर जो इर्शादात फ़रमाते हैं, और घर के बाहर जैसी ज़िन्दगी गुज़ारते हैं, वह तो हम सबको पता है, लेकिन यह बताईये कि घर में क्या अमल करते हैं? (उनके ज़ेहन में यह होगा कि घर में जाकर मुसल्ला बिछाते होंगे और नमाज़ व अज़कार और तसबीह वग़ैरह में मश्गूल रहते होंगे) हज़रत आयशा रज़ि० ने फ़रमाया कि जब आप घर में तशरीफ़ लाते हैं, तो हमारे साथ हमारे घर के कामों में हाथ भी बटाते हैं, और हमारा दुख दर्द भी सुनते हैं, हमारे साथ दिल लगी की बातें भी करते हैं, और हमारे साथ घुले मिले रहते हैं, अलबत्ता एक बात है कि जब अज़ान की आवाज़ कान में पड़ती है तो इस तरह उठ कर चले जाते हैं, जिस तरह हमें पहचानते भी नहीं।

चौथी हदीस में हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि:

"جَاءَ رَجَلٌ اِلَى النَّبِيِّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّم فَقَالَ: يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ! اَىُّ الصَّدَقَةِ اَعْظَمُ اَجْرًا؟ قَالَ: اَنْ تَصَدَّقَ وَاَنْتَ صَحِيْحٌ شَحِيْحٌ تَخْشَى وَتَأْمَلُ الْغِنٰى، وَلَا تُمْهِل حَتّٰى اِذَا بَلَغَتِ الْحَلْقُوْمَ قُلْتَ: لِفُلَانٍ كَذَا وَلِفُلَانٍ كَذَا، وَقَدْ

كَانَ لِفُلَانٍ" (بخاری و مسلم)

आला दर्जे का सदक़ा

फ़रमाते हैं कि एक साहिब नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में आये, और पूछा कि सबसे ज़्यादा सवाब वाला सदक़ा कौन सा है? आपने फ़रमाया कि सब से आला दर्जे का सदक़ा यह है कि अपनी सेहत की हालत में सदक़ा करो, और ऐसे वक़्त में सदक़ा करो जब तुम्हारे दिल में माल की मुहब्बत हो, और दिल में यह ख़्याल हो कि यह माल ऐसी चीज़ नहीं है कि इसे यों ही लुटा दिया जाये, और माल ख़र्च करने में तक्लीफ़ भी हो रही है, इस हालत में यह भी अन्देशा है कि इस सदक़ा करने के नतीजे में बाद में फ़क्र (तंग दस्ती) का शिकार हो जाऊं, और बाद में मालूम नहीं क्या हालात हों, उस वक़्त जो सदक़ा करोगे वह बड़ा अज्र वाला होगा, उसके बाद फ़रमाया कि सदक़ा देने का दिल में ख़्याल आया है तो उसको टलाओ नहीं, इसमें इस बात की तरफ़ इशारा किया गया है कि बाज लोग सदक़ा करने को टलाते रहते हैं, और यह ख़्याल करते हैं कि जब मरने का वक़्त बिल्कुल क़रीब आ जायेगा, उस वक़्त कुछ वसिय्यत कर जायेंगे, कि मरने के बाद मेरा इतना माल फ़लां को दे देना, और इतना माल फ़लां को दे देना, और इतना माल फ़लां काम में लगा देना वग़ैरह, तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमा रहे हैं कि तुम तो यह कह रहे हो कि इतना माल फ़लां को दे देना, अरे अब तो वह तुम्हारा माल रहा ही नहीं, वह तो किसी और का हो गया, क्यों? इसलिये कि शरई मस्अला यह है कि अगर कोई शख़्स बीमारी की हालत में कोई सदक़ा करे, या सदक़ा करने की वसिय्यत करे कि इतना माल फ़लां को दे दिया जाये, या हिबा करे, और उसी

बीमारी में उसका इन्तिक़ाल हो जाये, इस सूरत में सिर्फ़ एक तिहाई माल की हद तक सदक़ा नाफ़िज़ (जारी) होगा, और बाक़ी दो तिहाई वारिसों को मिलेगा, इसलिये कि वह वारिसों का हक़ है, इसलिये कि मरने से पहले बीमारी ही में उस माल के साथ वारिसों का हक़ मुतअ़ल्लिक़ हो जाता है।

सोचा यह था कि आख़री उमर में जाकर किसी सदक़ा-ए-जारिया में लगा देंगे तो सारी उमर सवाब मिलता रहेगा, हालांकि वह हालते मजबूरी का सदक़ा है, और अज्र व सवाब वाला सदक़ा तो वह है जो सेहत के वक़्त में माल की ज़रूरत और मुहब्बत और उसके जमा करने के ख़्याल के वक़्त में किया जाये।

वसिय्यत एक तिहाई माल की हद तक जारी होती है

यहां यह बात समझ लीजिये कि बाज़ लोग वसिय्यत के ख़्वाहिश मन्द तो होते हैं कि सदक़ा-ए-जारिया में कोई चीज़ लग जाये, और मरने के बाद भी उसका सवाब मिलता रहे, लेकिन अगर वे अपनी ज़िन्दगी में सेहत की हालत में यह वसिय्यत लिख गये कि मेरे मरने के बाद इतना माल फ़लां ज़रूरत मन्द को दे दिया जाये, तो यह वसिय्यत सिर्फ़ एक तिहाई की हद तक नाफ़िज़ (जारी) होगी, एक तिहाई से ज़्यादा में नाफ़िज़ नहीं होगी, इसलिये नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमा रहे हैं कि, सदक़ा करने का दाईया (जज़्बा) पैदा हुआ है उस पर अभी अमल कर लो।

अपनी आमदनी का एक हिस्सा सदक़ा करने के लिये अलग कर दो

और इसका एक तरीक़ा मैं आपके सामने पहले भी बयान कर चुका हूं, जिसका बुज़ुर्गों ने भी तजुर्बा किया है, उस पर अगर

इन्सान अमल कर ले तो फिर सदका करने की तौफ़ीक़ हो जाती है, वर्ना हम लोग तो नेक काम को टलाने के आदी बन चुके हैं, वह तरीक़ा यह है कि आपकी जो आमदनी है उसका एक हिस्सा मुक़र्रर कर लें कि यह हिस्सा अल्लाह की राह में सदका करेंगे अल्लाह तआला जितनी तौफ़ीक़ दे, चाहे वह दसवां हिस्सा मुक़र्रर करें या बिसवां हिस्सा वग़ैरह, और फिर जब आमदनी आये, उसमें से वह मुक़र्रर हिस्सा निकाल कर अलग रख दें और उसके लिये कोई लिफ़ाफ़ा बनालो, उसमें डालते जाओ, अब वह लिफ़ाफ़ा ख़ुद याद दिलाता रहेगा कि मुझे ख़र्च करो, किसी सही मस्रफ़ (ख़र्च की जगह) पर लगाओ, उसकी बर्कत से अल्लाह तबारक व तआला ख़र्च करने की तौफ़ीक़ दे देते हैं, वर्ना अगर ख़र्च का मौक़ा सामने आता है तो, आदमी सोचता रहता है कि ख़र्च करूं या न करूं, लेकिन जब वह लिफ़ाफ़ा मौजूद होगा, पहले से उसके अन्दर पैसे मौजूद होंगे, वह ख़ुद याद दिलायेगा और मौक़ा सामने आने की सूरत में सोचने की ज़रूरत पेश नहीं आयेगी, अगर हर इन्सान अपनी हैसियत के मुताबिक़ यह मामूल बनाले तो उसके लिये ख़र्च करना आसान हो जायेगा।

अल्लाह तआला के यहां गिन्ती नहीं देखी जाती

याद रखो अल्लाह तबारक व तआला के यहां गिन्ती और तायदाद नहीं देखी जाती, बल्कि जज़्बा और अख़्लाक़ देखा जाता है, एक आदमी जिसकी आमदनी सौ रुपये है, वह अगर एक रुपया अल्लाह की राह में देता है, वह उस आदमी के बराबर हैं जिसकी आमदनी एक लाख रुपये है, और वह एक हज़ार रुपये अल्लाह की राह में देता है, और कुछ पता नहीं कि वह एक रुपया देने वाला अपने इख़्लास की वजह से उससे भी आगे बढ़ जाये, इस वास्ते

गिन्ती को न देखो, बल्कि यह देखो कि अल्लाह तबारक व तआ़ला के रास्ते में सदका करने की फ़ज़ीलत हासिल करनी है, अल्लाह तआ़ला की रज़ामन्दी हासिल करनी है तो फिर अपनी आमदनी का थोड़ा सा हिस्सा अल्लाह की राह में ज़रूर ख़र्च कर दो।

मेरे वालिद माजिद क़ुद्दसल्लाहू सिर्रहू का मामूल

मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह० हमेशा मेहनत से हासिल होने वाली आमदनी का बीसवां हिस्सा और बग़ैर मेहनत के हासिल होने वाली आमदनी का दसवां हिस्सा अलग लिफ़ाफ़े में रख दिया करते थे, और आपका यह सारी ज़िन्दगी का मामूल था, अगर एक रुपया भी कहीं से आया तो उसी वक़्त उसका दसवां हिस्सा निकाल कर उसकी रेज़गारी करा कर उस लिफ़ाफ़े में डाल देते, और अगर सौ रुपये आये तो दस रुपये डाल देते, वक़्ती तौर पर अगरचे इस अ़मल में थोड़ी सी दुश्वारी होती थी, कि फ़िल्हाल टूटे हुए पैसे मौजूद नहीं हैं, अब क्या करें, उसके लिये मुस्तकिल इन्तिज़ाम करन पड़ता था, लेकिन सारी उमर कभी इस अ़मल के ख़िलाफ़ नहीं देखा और मैंने वह थैला कभी सारी उमर भी ख़ाली नहीं देखा, अल्हम्दु लिल्लाह। इस अ़मल का नतीजा यह होता है कि जब आदमी इस तरह निकाल निकाल कर अलग करता रहता है तो वह थैला ख़ुद याद दिलाता रहता है कि मुझे ख़र्च करो, और किसी सही जगह पर लगाओ, अल्लाह तआ़ला उसकी बर्कत से ख़र्च की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा देते हैं।

हर शख़्स अपनी हैसियत के मुताबिक़ सदक़ा करे

एक साहिब एक मर्तबा कहने लगे कि साहिब हमारे पास तो कुछ है नहीं, हम कहां से ख़र्च करें? मैंने अ़र्ज़ किया कि एक रुपया है? और एक रुपये में से एक पाई निकाल सकते हो? फ़क़ीर से

फ़क़ीर आदमी के पास एक रुपया ज़रूर होता है, और एक रुपए में से एक पैसा निकालने में कोई बड़ी कमी हो जायेगी? बस एक पैसा निकाल दे, तो उस शख़्स के एक पैसा निकालने में और दूसरे शख़्स के एक लाख में से एक हज़ार निकालने में कोई फ़र्क नहीं, इसलिये मिक़दार को न देखो, बल्कि जिस वक़्त जो जज़्बा पैदा हुआ, उस पर अमल कर लो।

यह है अपनी इस्लाह का नुस्ख़ा-ए-अक्सीर, बस अपने आप को टलाने से बचाओ, अगर इन्सान इस पर अमल करले तो इन्शा अल्लाह, अल्लाह तआला की बर्कत से उसके लिये सही राह पर माल ख़र्च करने के बड़े रास्ते पैदा हो जाते हैं, और वे फ़ज़ाइल हासिल हो जाते हैं, अल्लाह तआला हम सबको इस की तौफ़ीक़ अता फ़रामये, आमीन।

"عن ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ، أن رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم قال: بادروا بالأعمال سبعا، هل تنتظرون إلا فقرًا منسيًا، أوغنًى مطغيًا، أومرضًا مفسدًا، أو هرمًا مفندًا، أوموتًا مجهزًا، أوالدجال، فشر غائب ينتظر، أو الساعة، فالساعة أدهىٰ وَأمر، أو كما قال صلی اللہ علیہ وسلم."

किस का इन्तिज़ार कर रहे हो?

यह रिवायत हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत की गई है, इसमें "मुबादरत इलल् ख़ैर" यानी नेक कामों की तरफ़ बढ़ने की जल्दी से फ़िक्र करने के बारे में फ़रमाया गया है, चुनांचे फ़रमाते हैं कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः

"بادروا بالأعمال سبعًا"

सात चीज़ों के आने से पहले जल्द से जल्द अच्छे आमाल कर लो जिसके बाद अच्छा अमल करने का मौक़ा न मिलेगा, और फिर

उन सात चीज़ों को एक दूसरे अन्दाज़ से बयान फ़रमायाः

क्या फ़क्र का इन्तिज़ार है

"هَلْ تَنْتَظِرُوْنَ إِلَّا فَقْرًا مُنْسِيًا"

क्या तुम नेक आमाल करने के लिये ऐसे फ़क्र व फ़ाक़े का इन्तिज़ार कर रहे हो जो भुला देने वाला हो? जिसका मतलब यह है कि अगर इस वक़्त तुम्हें ख़ुशहाली मयस्सर है, रुपया पैसा पास है, खाने पीने की तंगी नहीं है, और ऐश व आराम से ज़िन्दगी बसर हो रही है, इन हालात में अगर तुम नेक आमाल को टाल रहे हो तो क्या तुम इस बात का इन्तिज़ार कर रहे हो कि जब मौजूदा ख़ुशहाली दूर हो जायेगी, और ख़ुदा न करे फ़क्र व फ़ाक़ा आ जायेगा, और उस फ़क्र व फ़ाक़े के नतीजे में तुम और चीज़ों को भूल जाओगे, क्या उस वक़्त नेक आमाल करोगे? अगर तुम्हारा ख़्याल यह है कि इस ख़ुशहाली के ज़माने में तो ऐश हैं, और मज़े हैं, और फिर दूसरा वक़्त आयेगा, उसमें नेक अ़मल करेंगे, तो इसके जवाब में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमा रहे हैं कि जब माली तंगी आ जायेगी तो उस वक़्त नेक आमाल से और दूर हो जाने का अन्देशा है, उस वक़्त इन्सान इतना परेशान होता है कि ज़रूरी काम भी भूल जाता है, इससे पहले कि वह वक़्त आये कि तुम्हें माली परेशानी लाहिक़ हो, मआ़शी तौर पर तंगी का सामना हो, इससे पहले पहले जो तुम्हें ख़ुशहाली मयस्सर है, इसको ग़नीमत समझ कर इसको नेक अ़मल में सर्फ़ (ख़र्च) करो, आगे फ़रमायाः

क्या मालदारी का इन्तिज़ार है?

"اَوْغِنًى مُطْغِيًا"

या तुम ऐसी मालदारी का इन्तिज़ार कर रहे हो जो इन्सान

को सर्कश (ना फ़रमान) बना दे? यानी आगरचे इस वक़्त ज़्यादा मालदार नहीं हो और यह ख़्याल कर रहे हो कि अभी ज़रा माली तंगी है या यह कि माली तंगी तो नहीं है, लेकिन दिल यह चाह रहा है कि और पैसे आ जायें, और दौलत मिल जाये तब नेक आमाल करेंगे, याद रखो! अगर मालदारी ज़्यादा हो गयी, और पैसे बहुत ज़्यादा आ गये और दौलत के अंबार जमा हो गये तो उसके नतीजे में अन्देशा यह है कि कहीं ऐसा न हो कि वह माल व दौलत तुम्हें और ज़्यादा सर्कशी में मुब्तला कर दे, इसलिये कि इन्सान के पास जब माल ज़्यादा हो जाता है, और ऐश व आराम ज़्यादा मयस्सर आ जाता है तो वह खुदा को भुला बैठता है, इसलिये जो कुछ करना है अभी कर लो।

क्या बीमारी का इन्तिज़ार है?

"أَوْ مَرَضًا مُفْسِدًا"

या ऐसी बीमारी का इन्तिज़ार कर रहे हो जो तुम्हारी सेहत को ख़राब कर दे? यानी इस वक़्त तो सेहत है, तबीयत ठीक है, जिस्म में ताक़त और कुव्वत मौजूद है, अगर इस वक़्त कोई अमल करना चाहोगे तो आसानी के साथ कर सकोगे, तो क्या नेक अमल को इसलिये टला रहे हो कि यह सेहत रुख़्सत हो जायेगी और खुदा न करे जब बीमारी आ जायेगी, फिर नेक अमल करोगे, अरे: जब सेहत की हालत में नेक अमल नहीं कर पाये तो बीमारी की हालत में क्या करोगे? और बीमारी खुदा जाने कैसी आ जाये, और किस वक़्त आ जाये, तो इसके पहले कि वह बीमारी आये, नेक अमल कर लो।

क्या बुढ़ापे का इन्तिज़ार कर रहे हो?

"أَوْهَرَمًا مُفَنِّدًا"

या तुम सठिया देने वाले बुढ़ापे का इन्तिज़ार कर रहे हो? अभी तो हम जवान हैं, अभी तो हमारी उमर ही क्या है, अभी दुनिया में देखा ही क्या है, इस जवानी को ऐश और लज़्ज़तों के साथ गुज़र जाने दो, फिर नेक अमल कर लेंगे, तो सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमा रहे हैं कि क्या तुम बुढ़ापे का इन्तिज़ार कर रहे हो? हालांकि बुढ़ापे में इन्सान के हवास ख़राब हो जाते हैं और अगर कोई नेक काम करना भी चाहे तो नहीं कर पाता, तो इससे पहले कि बुढ़ापे का दौर आये, इससे पहले इस ज़माने में नेक अमल कर लो, बुढ़ापे में तो यह हालत होती है कि न मुंह में दांत और न पेट में आंत, और जब गुनाह करने की ताक़त ही न रही, उस वक़्त गुनाह से बच गये तो क्या कमाल कर लिया? जब जवानी हो, ताक़त मौजूद हो, गुनाह करने के सामान मौजूद हों, गुनाह करने के अस्बाब मौजूद हों, गुनाह करने का जज़्बा दिल में मौजूद हो, उस वक़्त अगर इन्सान गुनाह से बच जाये तो हक़ीक़त में यह है पैग़म्बराना तरीक़ा, चुनांचे इसी के बारे में शैख़ सअ़दी फ़रमाते हैं:

कि वक़्ते पीरी गर्गे ज़ालिम मी शवद परहेज़ गार
दर जवानी तौबा कर्दन शेवा-ए-पैग़म्बरी अस्त

अरे बुढ़ापे में तो ज़ालिम भेड़िया भी परहेज़गार बन जाता है, वह इसलिये परहेज़गार नहीं बना कि उसको किसी अख़्लाक़ी फ़ल्सफ़े ने परहेज़गार बना दिया, या उसके दिल में ख़ुदा का ख़ौफ़ आ गया, बल्कि इसलिये परहेज़गार बन गया कि अब कुछ कर ही नहीं सकता, किसी को चीर फाड़ कर खा नहीं सकता, अब

वह ताक़त ही बाक़ी नहीं रही, इसलिये एक गोशे के अन्दर परहेज़गार बना बैठा है, बल्कि जवानी के अन्दर तौबा करना यह है पैग़म्बरी का शेवा, यह है पैग़म्बरों का शिआर, हज़रत यूसुफ़ अ़लै० को देखिये कि भरपूर जवानी है, ताक़त है, कुव्वत है, हालात मयस्सर हैं, और गुनाह की दावत दी जा रही है, लेकिन उस वक़्त ज़बान पर यह कलिमा आता है:

"مَعَاذَاللّٰہِ، إِنَّهُ رَبِّيْ أَحْسَنَ مَثْوَايَ"

"मैं अल्लाह की पनाह मांगता हूं" यह है पैग़म्बरी का शेवा, कि इन्सान जवानी के अन्दर गुनाह से तौबा करने वाला हो जाये, जवानी के अन्दर इन्सान नेक अ़मल करे, बुढ़ापे में तो और कोई काम बन नहीं पड़ता, हाथ पांव चलाने की सकत ही नहीं, अब गुनाह क्या करे? गुनाह के मौक़े ही ख़त्म हो गये, इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमाते हैं कि क्या तुम्हारा यह ख़्याल है कि जब बूढ़े हो जायेंगे तब नेक अ़मल करेंगे, तब नमाज़ शुरू करेंगे, उस वक़्त अल्लाह को याद करेंगे, अगर हज फ़र्ज़ हो गया, तो यह सोचते हैं कि जब उमर ज़्यादा हो जायेगी, तब जायेंगे, ख़ुदा जाने कितने दिन की ज़िन्दगी है? कितनी मोहलत मिली हुई है? वक़्त आता है या नहीं आता, अगर बुढ़ापा भी आ गया तो मालूम नहीं उस वक़्त हालात साज़गार हों, या न हों, इसी लिये इसी वक़्त कर गुज़रो।

क्या मौत का इन्तिज़ार है?

"أَوْمَوْتًا مُّجْهِزًا"

या तुम उस मौत का इन्तिज़ार कर रहे हो जो अचानक आ जाये, अभी तो तुम नेक आमाल को टला रहे हो कि कल कर लेंगे, परसों कर लेंगे, कुछ और वक़्त गुज़र जाये तो शुरू कर देंगे, क्या

तुम्हें यह मालूम नहीं कि मौत अचानक भी आ सकती है, कभी कभी तो मौत पैग़ाम देती है, अल्टी मेटम देती है, लेकिन कभी कभी बग़ैर अल्टी मेटम के भी आ जाती है, और आजकी दुनिया में तो हादसों का यह आलम है कि कुछ मालूम नहीं, किस वक़्त इन्सान के साथ क्या हो जाये? वैसे तो अल्लाह तआ़ला नोटिस भेजते हैं।

मौत के फ़रिश्ते से मुलाक़ात

एक हिकायत लिखी है कि एक शख़्स की एक मर्तबा मौत के फ़रिश्ते से मुलाक़ात हो गयी (ख़ुदा मालूम कैसी हिकायत है, लेकिन बहर हाल इब्रत की हिकायत है) तो उसने इज़राईल अ़लै० से कहा कि जनाबः आपका भी अजीब मामला है, जब आपकी मरज़ी होती है, आ धमक्ते हैं, दुनिया का क़ायदा तो यह है कि अगर किसी को कोई सज़ा देनी हो तो पहले से उसको नोटिस दिया जाता है कि फ़लां वक़्त में तुम्हारे साथ यह मामला होने वाला है, इसलिये तैयार हो जाना, आप तो नोटिस के बग़ैर ही चले आते हैं। इज़राईल अ़लै० ने जवाब में फ़रमायाः अरे भाई! मैं तो इतने नोटिस देता हूं कि दुनिया में कोई भी नहीं देता होगा, मगर इसका क्या इलाज कि कोई नोटिस सुनता ही नहीं? तुम्हें मालूम नहीं कि जब बुख़ार आता है वह मेरा नोटिस होता है, जब सर में दर्द होता है, वह मेरा नोटिस होता है, जब बुढ़ापा आता है वह मेरा नोटिस होता है, जब सफ़ेद बाल आ जाते हैं, वह मेरा नोटिस होता है, जब आदमी के पोते पैदा हो जाते हैं वह मेरा नोटिस होता है, मैं तो बराबर नोटिस भेजता रहता हूं, यह और बात है कि तुम सुनते ही नहीं, यह सारी बीमारियां अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से नोटिस हैं कि देखो! वक़्त आने वाला है, क़ुरआन करीम में फ़रमाते हैं:

"اَوَلَمْ نُعَمِّرْكُمْ مَّا يَتَذَكَّرُ فِيهِ مَنْ تَذَكَّرَ وَجَاءَكُمُ النَّذِيْرُ"

यानी आख़िरत में हम तुमसे पूछेंगे कि क्या हमने तुमको इतनी उमर नहीं दी थी जिसमें अगर कोई नसीहत हासिल करने वाला नसीहत हासिल करना चाहता तो नसीहत हासिल कर लेता, और तुम्हारे पास डराने वाला भी आ गया था, यह कौन डराने वाला आया था? इसकी तफ़्सीर में बाज़ मुफ़स्सिरीन ने तो फ़रमाया कि इससे मुराद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं, इसलिये कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने आकर लोगों को डराया कि मौत का वक़्त जब आयेगा तो अल्लाह तआला के सामने पेश होना होगा, बाज़ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि "नज़ीर" से मुराद सफ़ेद बाल हैं, जब सर में या दाढ़ी में सफ़ेद बाल आ गये तो यह "नज़ीर" है, यह अल्लाह तबारक व तआला की तरफ़ से डराने वाला आया है कि अब वक़्त क़रीब आ रहा है, तैयार हो जाओ, और बाज़ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि "नज़ीर" से मुराद "पोता" है कि जब किसी के यहां पोता पैदा हो जाये तो यह पोता "नज़ीर" है, डराने वाला है कि अब वक़्त आने वाला है, तैयार हो जाओ। इसी को किसी अरबी शायर ने एक शेर में नज़्म कर दिया है कि:

اذا الرجال ولّدت أولادها   وبليت من كبر أجسادها
وجعلت أسقامها تعتاد ها   تلك زروع قد دنا حصادها

"यानी जब इन्सान की औलाद की औलाद पैदा हो जाये और बुढ़ापे की वजह से उसका बदन पुराना हो जाये, और बीमारियां एक के बाद एक आने लगें, कभी एक बीमारी, कभी दूसरी बीमारी, एक बीमारी ठीक हुई तो दूसरी आ गई, तो समझ लो कि ये वे खेतियां हैं जिनकी कटाई का वक़्त आ गया है" बहर हाल! सब अल्लाह तबारक व तआला की तरफ़ से नोटिस हैं अगरचे अल्लाह का तरीक़ा यही है कि ये नोटिस आते रहते हैं, लेकिन कभी कभी मौत अचानक बग़ैर नोटिस के भी आ जाती है, इसी लिये हुज़ूर

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमा रहे हैं कि क्या तुम ऐसी मौत का इन्तिज़ार कर रहे हो कि जो नोटिस दिये बग़ैर अचानक आ जाये, क्या मालूम कि कितने सांस अभी बाक़ी हैं, उसका इन्तिज़ार क्यों कर रहे हो? उसके बाद फ़रमायाः

क्या दज्जाल का इन्तिज़ार है?

"اَوِ الدَّجَّالَ"

क्या तुम दज्जाल का इन्तिज़ार कर रहे हो? और यह सोच रहे हो कि अभी तो ज़माना नेक अ़मल के लिये साज़गार नहीं है, तो क्या दज्जाल का ज़माना साज़गार होगा? जब दज्जाल ज़ाहिर होगा तो क्या उस फ़ितने के आ़लम में नके अ़मल कर सकोगे? ख़ुदा जाने उस वक़्त क्या आ़लम हो, गुमराही के कैसे मुहर्रिकात और दवाई (दावत देने वाले) पैदा हो जायें, तो क्या तुम उस वक़्त का इन्तिज़ार कर रहे हो? فشر غائب ينتظر यानी दज्जाल अन–देखी चीज़ों में बद तरीन चीज़ है जिस का इन्तिज़ार किया जाये, बल्कि उसके आने से पहले पहले नेक अ़मल करलो, और आख़िर में फ़रमायाः

क्या क़ियामत का इन्तिज़ार है?

"اَوِ السَّاعَةَ، فَالسَّاعَةُ اَدْهٰى وَاَمَرُّ"

या फिर क़ियामत का इन्तिज़ार कर रहे हो? तो सुन रखो कि क़ियामत जब आयेगी, तो इतनी मुसीबत की चीज़ होगी कि उस मुसीबत का कोई इलाज इन्सान के पास नहीं होगा, तो उसके आने से पहले नेक अ़मल कर लो।

सारी हदीस का ख़ुलासा यह है कि किसी नेक अ़मल को टलाओ नहीं, और आजके नेक अ़मल को कल पर मत छोड़ो, बल्कि जब नेक अ़मल का जज़्बा पैदा हुआ, उस पर फ़ौरन अभी

अ़मल करलो, अल्लाह तआ़ला मुझे और आप सब को इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخردعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

सिफ़ारिश

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

عن ابی موسی الاشعری رضی اللہ تعالٰی عنہ قال کان النبی صلی اللہ علیہ وسلم اذا اتی طالب حاجۃ اقبل علی جلساء فقال اشفعوا تؤجروا۔ (صحیح بخاری)

ज़रूरत मन्दों की सिफ़ारिश कर दो

हज़रत अबू मूसा अश्अरी रज़ि० रिवायात करते हैं कि नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िद्मत में जब कोई हाजत मन्द (ज़रूरत वाला) अपनी ज़रूरत लेकर आता, और अपनी ज़रूरत पूरी करने के लिये कोई दरख़्वास्त करता तो उस वक़्त आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मज्लिस में जो लोग बैठे होते थे, आप उनकी तरफ़ मुतवज्जह होकर फ़रमाते कि तुम इस हाजत मन्द की सिफ़ारिश कर दो कि, "आप इसकी हाजत (ज़रूरत) पूरी कर दें" ताकि तुम्हें भी सिफ़ारिश का अज्र व सवाब मिल जाये, अलबत्ता फ़ैसला अल्लाह तआला अपने नबी की ज़बान पर वही करायेगा जिसको अल्लाह तआला पसन्द फ़रमायेंगे, यानी तुम्हारी सिफ़ारिश की वजह से कोई ग़लत फ़ैसला तो मैं नहीं करूंगा, फ़ैसला तो वही करूंगा जो अल्लाह की मरज़ी के मुताबिक़ होगा, लेकिन जब तुम सिफ़ारिश करोगे तो सिफ़ारिश करने का सवाब तुमको भी मिल जायेगा, इसलिये तुम सिफ़ारिश करो।

सिफ़ारिश अज्र व सवाब को वाजिब करने वाली है

इस हदीस में हकीकत में इस तरफ़ तवज्जोह दिलाना मक़्सूद है कि एक मुसलमान के लिये किसी दूसरे मुसलमान भाई की सिफ़ारिश करना, ताकि उसका काम बन जाये, यह बड़े अज्र व सवाब का काम है, और इसी की तरग़ीब देनी मक़्सूद है कि एक मुसलमान को चाहिये कि वह दूसरे मुसलमान भाई की ख़ैर ख़्वाही में लगा रहे, और उसकी ज़रूरत पूरी करने में जितनी कोशिश हो कसती है, वह करे और उसकी सिफ़ारिश से उसका कोई काम बन सकता है तो उसकी सिफ़ारिश करे और उस सिफ़ारिश करने का इन्शा अल्लाह उसको अज्र मिलेगा; इससे सिफ़ारिश के अमल की फ़ज़ीलत बयान करना मक़्सूद है, अच्छी सिफ़ारिश करना बड़ा अज्र व सवाब का सबब है, और इसी वजह से बुज़ुर्गों के यहां इसका बड़ा मामूल रहा कि जब कोई हाजत मन्द आकर सिफ़ारिश कराता तो वे आम तौर पर उसकी सिफ़ारिश कर देते, यह नहीं समझते थे कि मैंने सिफ़ारिश कर के उस पर बहुत बड़ा एहसान कर दिया, बल्कि अपने लिये नेकी और भलाई का सबब समझते थे।

एक बुज़ुर्ग की सिफ़ारिश

हज़रत हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली साहिब रह० ने अपने मवाइज़ (तक़रीरों) में एक बुज़ुर्ग का वाक़िआ लिखा है, ग़ालिबन हज़रत शाह अब्दुल क़ादिर साहिब रह० का वाक़िआ है, नाम सही तौर पर याद नहीं, एक शख़्स उन बुज़ुर्ग की ख़िदमत में आया, और कहा कि हज़रत! मेरा एक काम रुका हुआ है, और फ़लां साहिब के इख़्तियार में है, अगर आप उससे सिफ़ारिश फ़रमा दें तो मेरा काम बन जाये, तो हज़रत रह० ने फ़रमाया जिन साहिब का तुम नाम ले रहे हो, वह मेरे बहुत सख़्त मुख़ालिफ़ हैं, और मुझे

अन्देशा यह है कि अगर मेरी सिफ़ारिश उन तक पहुंच गयी तो अगर वह तुम्हारा काम करते हुए भी होंगे तो भी नहीं करेंगे, मैं तुम्हारी सिफ़ारिश कर देता, लेकिन मेरी सिफ़ारिश से फ़ायदा होने के बजाये उल्टा नुक़सान होने का अन्देशा है, लेकिन वह शख़्स उन बुज़ुर्ग के पीछे ही पड़ गया, कहने लगा बस! आप लिख दीजिये, इसलिये कि अगरचे वह आपके मुख़ालिफ़ हैं, लेकिन आपकी शख़्सियत ऐसी है कि उम्मीद है कि वह उसको रद्द नहीं करेंगे, उन बुज़ुर्ग ने मजबूर होकर उनके नाम एक पर्चा लिख दिया, जब वह शख़्स पर्चा लेकर वहां पहुंचा तो उन बुज़ुर्ग का जो ख़्याल था कि वह मेरा मुख़ालिफ़ है और काम करता हुआ भी होगा तो वह नहीं करेगा, वह ख़्याल सही साबित हुआ, और बजाये इसके कि वह उस पर्चे की क़द्र करता, या उस पर अ़मल करता, उस अल्लाह के बन्दे ने उन बुज़ुर्ग को गाली देदी, अब वह शख़्स उन बुज़ुर्ग के पास आया और आकर कहा कि हज़रत! आपकी बात सच्ची थी, हक़ीक़त में बजाये इसके कि वह उसकी क़द्र करता और एहतिराम करता, उसने तो उल्टी गाली देदी, उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया कि अब मैं अल्लाह तआ़ला से तुम्हारे लिये दुआ़ करूंगा कि अल्लाह तआ़ला तुम्हारा काम बना दे।

सिफ़ारिश करे एहसान न जतलाये

मालूम हुआ कि सिफ़ारिश करना बड़े अज्र व सवाब का काम है, बशरते कि उससे किसी अल्लाह कि बन्दे को फ़ायदा पहुंचाना और सवाब हासिल करना मक़सूद हो, एहसान जतलाना मक़सूद न हो कि फ़लां वक़्त मैंने तुम्हारा काम बना दिया था, बल्कि अल्लाह तआ़ला को राज़ी करना मक़सूद हो कि अल्लाह के एक बन्दे के काम में मैंने थोड़ी सी मदद कर दी, तो अल्लाह तआ़ला से उम्मीद

है कि इस पर मुझे अज्र व सवाब अ़ता फ़रमायेंगे इस नुक़्ता–ए–नज़र से जो सिफ़ारिश की जाये, वह बहुत अज्र व सवाब का सबब है।

सिफ़ारिश के अहकाम

लेकिन सिफ़ारिश करने के कुछ अहकाम हैं, किस मौक़े पर सिफ़ारिश करना जायज़ है और किस मौक़े पर जायज़ नहीं? सिफ़ारिश का मतलब क्या है? सिफ़ारिश का नतीजा क्या होना चाहिये? किस तरह सिफ़ारिश करनी चाहिये? ये सारी बातें समझने की हैं, और इनके न समझने की वजह से सिफ़ारिश, जो बहुत अच्छी चीज़ थी, फ़ायदे मन्द और बाइसे अज्र व सवाब चीज़ थी, उल्टी बाइसे गुनाह बन रही है, और इससे मुआशरे में फ़साद फैल रहा है, इसलिये इन अहकाम को समझना ज़रूरी है।

ना अहल के लिये ओहदे की सिफ़ारिश

पहली बात यह है कि सिफ़ारिश हमेशा ऐसे काम की होनी चाहिये जो जायज़ और बर–हक़ हो, किसी ना जायज़ काम के लिये या ना–हक़ काम के लिये सिफ़ारिश किसी हालत में जायज़ नहीं, एक शख़्स के बारे में आप जानते हैं कि वह फ़लां मन्सब और फ़लां ओहदे का अहल नहीं है, और उसने उस ओहदे के हासिल करने के लिये दरख़्वास्त दे रखी है, और आपके पास सिफ़ारिश के लिये आता है, लेकिन आपने सिर्फ़ यह देख कर सिफ़ारिश कि ज़रूरत मन्द है सिफ़ारिश लिख दी कि इसको फ़लां मन्सब पर फ़ाइज़ कर दिया जाये, या फ़लां नौकरी इसको देदी जाये, तो यह सिफ़ारिश ना जायज़ है।

सिफ़ारिश, शहादत और गवाही है

इसलिये कि सिफ़ारिश जिस तरह उस शख़्स की हाजत पूरी करने का एक ज़रिया है, वहां साथ साथ एक शहादत और गवाही भी है, जब आप किसी शख़्स के हक़ में सिफ़ारिश करते हैं तो आप इस बात की गवाही देते हैं कि मेरी नज़र में यह शख़्स इस काम के करने का अहल है, इसलिये मैं आपसे यह सिफ़ारिश करता हूं कि इसको यह काम दे दिया जाये, तो यह एक गवाही है, और गवाही के अन्दर इस बात का लिहाज़ रखना ज़रूरी है कि वह हक़ीक़त के ख़िलाफ़ न हो, अगर आपने उस शख़्स के बारे में लिख दिया, और हक़ीक़त में वह ना अहल है तो गवाही हराम हुई, और बाइसे सवाब होने के बजाये उल्टा बाइसे गुनाह बन गयी, और यह ऐसा गुनाह है कि अगर उसकी ना अहली के बावजूद आपकी सिफ़ारिश की बुनियाद पर उसको उस ओहदे पर रख लिया गया, और अपनी ना अहली की वजह से उसने लोगों को नुक़्सान पहुंचाया, या कोई ग़लत काम किया तो सारे नुक़्सान और ग़लत कामों के वबाल का एक हिस्सा सिफ़ारिश करने वाले पर भी आयेगा, क्योंकि उस ना अहल के ओहदे तक पहुंचने में यह सबब बना है, इसलिये यह सिफ़ारिश भी है और गवाही भी है, और ना जायज़ काम के लिये सिफ़ारिश करना और गवाही देना किसी तरह भी जायज़ नहीं।

इम्तिहान लेने वाले से सिफ़ारिश करना

किसी ज़माने में मेरे पास यूनिवर्सिटी से एम० ए० इस्लामिक स्टडीज़ के पर्चे जांच के लिये आ जाया करते थे, और मैं ले भी लिया करता था, लेकिन लेने क्या शरू किये कि उसके नतीजे में लोगों की क़तार लग गयी, कभी कोई टेलीफ़ोन आ रहा है, कभी कोई आदमी आ रहा है, और आदमी भी ऐसे जो बज़ाहिर बड़े

दियानत दार और अमानत दार, और मोतबर क़िस्म के लोग बा-क़ायदा मेरे पास इसी मक़सद के लिये आते, और उनके हाथों में नम्बरों की एक फ़ेहरिस्त होती, और आकर कहते कि इन नम्बर वालों का ज़रा ख़ास ख़्याल रखियेगा।

सिफ़ारिश का एक अजीब वाक़िआ

एक मर्तबा एक बड़े आलिम शख़्स भी इस तरह नम्बरों की फ़ेहरिस्त लेकर आ गये, मैंने उनसे अर्ज़ किया कि हज़रत! यह तो बड़ी ग़लत और ना जायज बात है कि आप यह सिफ़ारिश लेकर आ गये हैं, इन्शा अल्लाह हक़ व इन्साफ़ के मुताबिक़ जो जितने नम्बर का मुस्तहिक़ होगा उतने नम्बर लगाये जायेंगे, जवाब में उन्हों ने फ़ौरन कुरआन करीम की आयत पढ़ दीः

"مَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً حَسَنَةً يَّكُنْ لَّهٗ نَصِيْبٌ مِّنْهَا" (سورة نساء ٨٥)

मौलवी का शैतान भी मौलवी

हमारे वालिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब क़द्दसल्लाहू सिर्रहू फ़रमाया करते थे कि मौलवी का शैतान भी मौलवी होता है, आम आदमी का शैतान तो दूसरे तरीक़ों से बहकाता है, और जो शैतान मौलवी को बहकाता है, वह मौलवी बन कर बहकाता है।

उन आलिम साहिब ने इस आयत से इस्तिदलाल किया कि कुरआन करीम में है कि सिफ़ारिश करो, इसलिये कि सिफ़ारिश बड़े अज्र व सवाब का काम है, इसलिये मैं सिफ़ारिश लेकर आया हूं, ख़ूब समझ लीजिये कि यह सिफ़ारिश जायज़ नहीं।

सिफ़ारिश से मुन्सिफ़ का ज़ेहन ख़राब न करें

किसी क़ाज़ी के पास तसफ़िये के लिये कोई फ़ैसला दर पेश है और उसके सामने फ़रीक़ैन (दोनों पार्टियों) की तरफ़ से गवाहियां पेश हो रही हैं, उस वक़्त में अगर कोई यह सिफ़ारिश

करे कि फ़लां का ज़रा ख़्याल रखियेगा, या फ़लां के हक़ में फ़ैसला कर दीजियेगा, तो यह सिफ़ारिश जायज़ नहीं, इस वासते कि इस सिफ़ारिश के नतीजे में उसका ज़ेहन ख़राब हो सकता है, और वह क़ाज़ी तो इसी काम के लिये बैठा है कि दोनों तरफ़ के मामलात को तौल कर फिर अपना फ़ैसला दे कि कौन हक़ पर है और कौन ना हक़ पर है।

अ़दालत के जज से सिफ़ारिश करना

इसलिये शरीअ़त में इसका बहुत एहतिमाम किया गया है कि जब क़ाज़ी के सामने कोई मुक़द्दमा दर पेश हो, तो क़ाज़ी के लिये हुक्म यह है कि उस मुक़द्दमे के किसी एक फ़रीक़ की बात दूसरे फ़रीक़ की ग़ैर मौजूदगी में न सुने, जब तक दोनों फ़रीक़ मौजूद न हों। कहीं ऐसा न हो कि एक शख़्स ने आकर आपको तन्हाई में मामला बता दिया और दूसरा आदमी उससे बे–ख़बर है, वह इसका जवाब नहीं दे सकता, और वह बात आपके ज़ेहन में मुसल्लत हो गयी, और आपका ज़ेहन उससे मुतास्सिर हो गया तो यह इन्साफ़ के ख़िलाफ़ है, इस वासते जब मामला क़ाज़ी के पास चला जाये तो उसके बाद सिफ़ारिश का दर्वाज़ा बन्द।

सिफ़ारिश पर मेरा रद्दे अ़मल

मेरे पास कुछ मुक़द्दमात आ जाते हैं, और उन मुक़द्दमात से मुताल्लिक़ बाज़ लोग मेरे पास पहुंच जाते हैं और कहते हैं कि यह मामला दर पेश है आप इसका ख़्याल रखें, तो मैं कभी उनकी बात नहीं सुनता, और यह कह देता हूं कि मेरे लिये इस मुक़द्दमे से मुताल्लिक़ आपकी कोई बात सुनना उस वक़्त तक शरअ़न जायज़ नहीं जब तक कि दूसरा फ़रीक़ मौजूद न हो, इसलिये आपको जो कुछ कहना हो आप अ़दालत में आकर कहिये, ताकि दूसरा फ़रीक़

भी सामने मौजूद हो, और उसकी मौजूदगी में बात कही जाये और सुनी जाये, ताकि अगर आप कोई ग़लत बात कहें तो वह उसका जवाब दे सके, यहां तन्हाई में आकर आप मेरे ज़ेहन को ख़राब कर जायें, यह कहता है कि साहिब! हम तो ना जायज़ सिफ़ारिश नहीं कर रहे हैं, हम तो बिल्कुल जायज़ बात लेकर आये हैं, अरे भाई! मुझे क्या पता कि जायज़ लेकर आये हो या ना जायज़ लेकर आये हो, दूसरा फ़रीक़ भी मौजूद हो, और उसके दलायल, उसकी गवाहियां और शहादतें भी सामने हों, उस वक़्त आमने सामने का फ़ैसला होगा, बहर हाल! अकेले में जाकर उसके ज़ेहन को मुतास्सिर करना जायज़ नहीं।

तो ऐसे मौक़े पर यह कहना कि कुरआन करीम में है कि:

"من يشفع شفاعة حسنة يكن له نصيب منها"

यह किसी तरह भी जायज़ नहीं चुंकि हमारे यहां लम्बी मुद्दत से इस्लाम का निज़ामे क़ज़ा ख़त्म हो गया है, इसलिये यह मसाइल भी लोगों को याद नहीं रहे, अच्छे अच्छे पढ़े लिखे आलिमा भी भूल जाते हैं कि ऐसा करना जायज़ नहीं, उनकी तरफ़ से भी सिफ़ारिश आ जाती है।

सब से पहली बात यह हुई कि सिफ़ारिश ऐसी जगह करनी चाहिये जहां सिफ़ारिश जायज़ है।

बुरी सिफ़ारिश गुनाह है

दूसरी बात यह है कि सिफ़ारिश ऐसे काम के लिये होनी चाहिये जो काम शरीअ़त में जायज़ हो, इसलिये ना जायज़ काम कराने के लिये सिफ़ारिश करना किसी हाल में जायज़ नहीं, जैसे आपका दोस्त कहीं अफ्सर लगा हुआ है, और उसके हाथ में इख़्तियारात हैं, और आपने उससे ना जायज़ फ़ायदा उठाते हुए

किसी ना अहल को भरती करा दिया तो यह जायज़ नहीं, बल्कि हराम है। इसी लिये कुरआन करीम में जहां अच्छी सिफ़ारिश को बाइसे अज्र क़रार दिया गया है वहां बुरी सिफ़ारिश को बाइसे गुनाह क़रार दिया गया है, फ़रमायाः

"مَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً سَيِّئَةً يَكُنْ لَّهٗ كِفْلٌ مِّنْهَا" (سورة نساء ٨٥)

जो बुरी सिफ़ारिश करेगा तो उस सिफ़ारिश करने वाले को भी उस गुनाह में से हिस्सा मिलेगा।

सिफ़ारिश का मक़्सद सिर्फ़ तवज्जोह दिलाना

यह बात तो अहम ही है, और लोग एतक़ादी तौर पर इसको जानते भी हैं कि ना जायज़ सिफ़ारिश नहीं करनी चाहिये, लेकिन इससे भी आगे एक और मस्अला है, जिसकी तरफ़ आम तौर पर ध्यान नहीं, और आज कल लोग इसका बिल्कुल ख़्याल नहीं करते, वह यह है कि लोग आज कल सिफ़ारिश की हक़ीक़त नहीं समझते, सिफ़ारिश की हक़ीक़त यह है कि जिसके पास सिफ़ारिश की जा रही है उसको सिर्फ़ तवज्जोह दिलाना है, यानी उसके इल्म और ज़ेहन में एक बात नहीं है, आपने अपनी सिफ़ारिश के ज़रिये यह तवज्जोह दिला दी कि यह भी एक मौक़ा है, अगर तुम करना चाहो तो करलो, सिफ़ारिश का मक़्सद यह नहीं है कि उस पर दबाव और परेशर डाला जाये, कि वह यह काम ज़रूर करले, इसलिये कि हर इन्सान के अपने कुछ ख़्यालात होते हैं, और वह आदमी उन उसूलों के तहत रह कर काम करना चाहता है, अब आपने सिफ़ारिश करके उस पर दबाव डालना शुरू कर दिया, और दबाव डाल कर उससे काम कराना चाहा, यह सिफ़ारिश नहीं, ज़बरदस्ती है, और मुसलमान के ऊपर ज़बरदस्ती करना जायज़ नहीं, इसका आम तौर पर लोग ख़्याल नहीं करते।

ऐसे आदमी की सिफ़ारिश लेकर जायेंगे जिसके बारे में यह ख़्याल हो कि जब उसकी सिफ़ारिश जायेगी तो वह इन्कार न कर सकेगा, यह तो दबाव डाला जा रहा है, और शख़्सियत का वज़न डाला जा रहा है, यह सिफ़ारिश नहीं है।

यह तो दबाव डालना है

कई लोग मेरे पास भी सिफ़ारिश कराने आ जाते हैं, एक साहिब आये और आकर कहा कि हज़रत! आपसे एक काम के लिये कहना है, लेकिन पहले यह बताईये कि आप इन्कार तो नहीं करेंगे? गोया इसका क़रार पहले लेना चाहते हैं कि इन्कार मत कीजियेगा, मैंने कहाः भाई! यह बताओ तो सही कि क्या काम है? वह काम मेरी क़ुदरत में है या नहीं? मेरे बस में है या नहीं? मैं उसको कर सकूंगा या नहीं? जायज़ होगा या नहीं? पहले यह बताओ तो सही, लेकिन पहले यह इक़रार लेना चाहते हैं कि आप पहले यह तय करलें कि उस काम को ज़रूर करेंगे, यह सिफ़ारिश नहीं है, बल्कि यह दबाव डालना है, जो जायज़ नहीं।

सिफ़ारिश के बारे में हज़रत हकीमुल उम्मत रह० का फ़रमान

हमारे हज़रत हकीमुल उम्मत क़द्दसल्लाहू सिर्रहू अल्लाह तआला उनके दरजात बुलन्द फ़रमाये, (आमीन) हक़ीक़त यह है कि दीन की सही समझ अल्लाह तआला ने उनको अ़ता फ़रमाई, और दीन के छिपे गोशों को उन्हों ने जिस तरह ज़ाहिर फ़रमाया और मल्फ़ूज़ात में जगह जगह इस पर तंबीह फ़रमाई, फ़रमाते हैं कि सिफ़ारिश इस तरह न कराओ जिससे दूसरा आदमी मग़लूब हो जाये, जिससे दबाव पड़े, यह सिफ़ारिश जायज़ नहीं, इसलिये कि सिफ़ारिश की हक़ीक़त "तवज्जोह दिलाना" है कि मेरे नज़्दीक यह

शख़्स हाजत मन्द है, और मैं आपको मुतवज्जह कर रहा हूं कि यह अच्छा मस्रफ़ (ख़र्च की जगह) है, इस पर अगर आप कुछ ख़र्च कर देंगे तो इन्शा अल्लाह अज्र व सवाब होगा, यह नहीं कि इस काम को ज़रूर करो, अगर तुम नहीं करोगे तो मैं नाराज़ हो जाऊंगा, ख़फ़ा हो जाऊंगा, यह सिफ़ारिश नहीं है, यह दबाव है।

मजमे में चन्दा करना दुरुस्त नहीं

हज़रत हकीमुल उम्मत क़द्दसल्लाहू सिर्रहू ने यही बात चन्दे के बारे में बयान फ़रमाई कि अगर मजमे के अन्दर चन्दे का ऐलान कर दिया कि फ़लां काम के लिये चन्दा हो रहा है, चन्दा दें, अब जनाब! जिस शख़्स का चन्दा देने का दिल भी नहीं चाह रहा है, अब उसने दूसरों को देख कर शरमा शरमी में चन्दा दे दिया, और यह सोचा कि अगर नहीं दिया तो नाक कट जायेगी, तो चूंकि वह चन्दा उसने खुश दिली से नहीं दिया, और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि:

"لا يحل مال امرئ مسلم الا بطيب نفس منه" (مجمع الزوائد)

"किसी मुसलमान का माल उसकी खुश दिली के बग़ैर हलाल नहीं"।

अगर किसी ने ज़बान से माल लेने की इजाज़त भी देदी हो, लेकिन वह माल उसने ख़ुश दिली से नहीं दिया तो वह हलाल नहीं, इसलिये इस तरीक़े से चन्दा करना जायज़ नहीं।

मदरसे के मुह्तमिम का ख़ुद चन्दा करना

हज़रते वाला रह० फ़रमाते हैं कि कभी कभी चन्दा वुसूल करने के लिये किसी बड़े मौलाना साहिब को साथ ले गये, या कोई बड़े मौलाना साहिब या मदरसे के मुह्तमिम ख़ुद चन्दा वुसूल करने किसी के पास चले गये, तो उनका ख़ुद चला जाना बज़ाते ख़ुद

एक दबाव है, क्योंकि सामने वाला शख़्स यह ख़्याल करेगा कि यह बड़े मौलाना साहिब ख़ुद आये हुए हैं, अब मैं इनको कैसे इन्कार करूं, और चुनांचे दिल न चाहने के बावजूद उसको चन्दा दिया, यह चन्दा वुसूल करना जायज़ नहीं।

सिफ़ारिश के अल्फ़ाज़ क्या हों?

यह बात ख़ूब अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये कि सिफ़ारिश का अन्दाज़ दबाव डालने वाला न हो, इसी लिये हज़रत हकीमुल उम्मत कद्दसल्लाहू सिर्रहू जब किसी के नाम सिफ़ारिश लिखते तो ज़्यादा तर ये अल्फ़ाज़ लिखते कि "मेरे ख़्याल में यह साहिब इस काम के लिये मौज़ूं हैं, अगर आपके इख़्तियार में हो, और आपकी मसलिहत और उसूल के ख़िलाफ़ न हो तो इनका काम कर दीजिये, और मेरे वालिद माजिद रह० भी इन्हीं अल्फ़ाज़ में सिफ़ारिश लिखते थे।

दो चार मर्तबा हमें भी सिफ़ारिश लिखने की ज़रूरत पेश आई तो चूंकि हज़रत वालिद साहिब कद्दसल्लाहू सिर्रहू से यह बात सुनी हुई थी, और हज़रत थानवी रह० के मवाइज़ (वअ़ज़ व तक़रीरें) भी देखे हुये थे, इसलिये मैंने भी वही जुम्ले सिफ़ारिश के अन्दर लिख दिये कि "अगर यह काम आपके इख़्तियार में हो, और आपकी मसलिहत और उसूल के ख़िलाफ़ न हो तो इनका यह काम कर दीजिये" नतीजा यह हुआ कि जिन साहिब की सिफ़ारिश लिखी थी वह नाराज़ हो गये, "और कहने लगे कि" यह आपने कैदें और शर्तें क्यों लगा दीं कि अगर मसलिहत के ख़िलाफ़ न हो तो कर दीजिये, आपको तो सीधा लिखना चाहिये था कि "यह काम ज़रूर कर दीजिये" इन अल्फ़ाज़ के बग़ैर तो यह सिफ़ारिश ना मुकम्मल है।

सिफ़ारिश में दोनों तरफ़ की रिआयत

लेकिन जिस शख़्स को दोनों तरफ़ की रिआयत करनी मक़्सूद है, एक तरफ़ उसको जायज़ हदों में रहते हुए ज़रूरत मन्द की मदद भी मक़्सूद है, और दूसरी तरफ़ उसकी भी रिआयत करनी है जिसके पास सिफ़ारिश की गयी है, और उस पर भी बोझ नहीं डालना कि कहीं वह यह ख़्याल न करे कि साहिब! इतने बड़े साहिब का पर्चा आ गया है, अब मेरे लिये इसका टालना मुम्किन नहीं, अगरचे यह काम मेरी मसलिहत के ख़िलाफ़, मेरे उसूल के ख़िलाफ़ और मेरे क़ायदों व ज़ाबतों के ख़िलाफ़ है, लेकिन चूंकि इतने बड़े आदमी का पर्चा आ गया है अब मैं क्या करूं? इसलिये कि अब वह कश—मकश और मुसीबत में मुब्तला हो गया, अगर सिफ़ारिश के मुताबिक़ अमल न किया तो इस बात का ख़तरा है कि इतने बड़े साहिब नाराज़ हो जायेंगे, और फिर उनको क्या मुंह दिखाऊंगा, वह कहेंगे कि मैंने एक ज़रा से काम की सिफ़ारिश की थी, और आपने उसको पूरा नहीं किया, यह सब सिफ़ारिश के उसूल के ख़िलाफ़ हैं।

सिफ़ारिश मुआशरे में एक लानत

और इसी वजह से आज सिफ़ारिश मुआशरे (समाज) में एक लानत बन गई है, आज कोई काम ना जायज़ सिफ़ारिश के बग़ैर पूरा नहीं होता, इसलिये कि सिफ़ारिश के अहकाम लोगों ने भुला दिये हैं, शरीअत के तक़ाज़ों को फ़रामोश कर दिया है, इसलिये जब इन रिआयतों के साथ सिफ़ारिश की जायेगी तब जायज़ होगी।

सिफ़ारिश एक मश्विरा है

तीसरी बात यह है कि सिफ़ारिश एक मश्विरा भी है, दबाव डालना नहीं है, आज कल लोग मश्विरा को नहीं समझते कि

मश्विरा क्या चीज़ है? इसकी हक़ीक़त क्या है? हुज़ूरे पाक सल्ल–ल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मश्विरा के बारे में फ़रमाया कि:

"المستشار مؤتمن" (ابوداؤد)

यानी जिस शख़्स से मश्विरा लिया जाये वह अमानत दार है, यानी उसका फ़र्ज़ है कि अपनी दियानत और अमानत के लिहाज़ से जिस बात को बेहतर से बेहतर समझता हो, वह मश्विरा लेने वाले को बता दे, यह है मश्विरा का हक़, और फिर जिसको मश्विरा दिया गया है, वह इस बात का पायबन्द नहीं है कि आपके मश्विरा को ज़रूर कुबूल करे, अगर वह रद्द भी कर दे तो उसको इख़्तियार है, क्यों कि मश्विरा के मायने भी यही हैं कि दूसरे को तवज्जोह दिला देना, इसी हदीस में आपने देखा कि हुज़ूरे अक़्दस सल्ल–ल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम मुझसे सिफ़ारिश करो, और यह ज़रूरी नहीं कि मैं तुम्हारी सिफ़ारिश कुबूल भी कर लूं, बल्कि फ़ैसला मैं वही करूंगा जो अल्लाह तआ़ला की मन्शा के मुताबिक़ होगा, इससे मालूम हुआ कि अगर सिफ़ारिश के ख़िलाफ़ भी अ़मल कर लिया जाये तो इस से सिफ़ारिश की ना–क़दरी नहीं होती, आज लोग यह समझते हैं कि साहिब! हमने सिफ़ारिश भी की, और बात कह कर खोई और फ़ायदा कुछ हासिल न हुआ, हक़ीक़त में यह बात नहीं। इसलिये कि सिफ़ारिश का मक़्सद तो सिर्फ़ यह था कि एक भाई की मदद में मेरा हिस्सा लग जाये, और अल्लाह तबारक व तआ़ला इससे राज़ी हो जाये, अब वह मक़्सद हासिल हो गया या नहीं? काम हुआ या नहीं? यह सिफ़ारिश का लाज़मी हिस्सा नहीं, अगर वह काम नहीं हुआ, और उसने आपकी सिफ़ारिश नहीं मानी, तो इसकी वजह से कोई झगड़ा और नाराज़गी नहीं होनी चाहिये, और उसको बुरा मानना भी दुरुस्त

नहीं, इसलिये कि यह मश्विरा था, और मश्विरा के अन्दर दोनो बातें होती हैं।

हज़रत बरीरा रज़ि० और हज़रत मुग़ीस रज़ि० का वाक़िआ

अब सुनिये कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मश्विरा की क्या हक़ीक़त बयान फ़रमाई है, और हक़ीक़त यह है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दुनिया की ज़िन्दगी के मुताल्लिक़ बारीक बारीक बातें तफ़सील से बयान फ़रमा दीं, अब यह बताइये कि इस दुनिया में बल्कि पूरी कायनात में किस शख़्स का मश्विरा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मश्विरे से ज़्यादा क़ाबिले एहतिराम और क़ाबिले तामील हो सकता है? लेकिन वाक़िआ सुनिये, कि हज़रत आयशा रज़ि० की एक कनीज़ (बांदी) थीं, जिनका नाम हज़रत बरीरा रज़ि० था, पहले यह किसी और की कनीज़ थीं और उसने इनका निकाह हज़रत मुग़ीस से कर दिया था, और चूंकि उसूल यह है कि अगर आक़ा अपनी बांदी की किसी से शादी कर दे तो आक़ा को अपनी बांदी से इजाज़त लेने की भी ज़रूरत नहीं होती, इसलिये कि वह आक़ा की मिल्कियत में होती है, इस वासते उससे इजाज़त भी नहीं ली जाती, बल्कि आक़ा जिससे चाहे उसका निकाह कर सकता है, चुनांचे हज़रत बरीरा रज़ि० का निकाह उनके आक़ा ने हज़रत मुग़ीस रज़ि० से कर दिया, और हज़रत मुग़ीस रज़ि० सूरत शक्ल के एतिबार से कोई पसंदीदा शख़्सियत नहीं थे, बल्कि सियाह फ़ाम (काले रंग के) थे, और हज़रत बरीरा रज़ि० हसीन व जमील ख़ातून थीं, इस हालत में उनका निकाह हो गया, हज़रत आयशा रज़ि० ने चाहा कि उनको ख़रीद कर आज़ाद कर दें, चुनांचे हज़रत आयशा

रज़ि० ने उनको ख़रीदा, और फिर आज़ाद कर दिया।

बांदी को निकाह तोड़ने का इख़्तियार

शरीअत का हुक्म यह है कि जब कोई कनीज़ आज़ाद हो जाये और उसका निकाह पहले से किसी के साथ हो चुका हो, तो आज़ादी के वक़्त उस कनीज़ को यह इख़्तियार मिलता है कि चाहे तो वह अपने शौहर के साथ निकाह को बर्क़रार रखे, और चाहे तो उस निकाह को ख़त्म कर दे, और फ़स्ख़ कर दे, और फिर किसी और से निकाह करे।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मश्विरा

जब हज़रत बरीरा रज़ि० आज़ाद हुई तो शरीअत के क़ायदे के मुताबिक़ उनको भी निकाह को तोड़ने या बाक़ी रखने का इख़्तियार मिल गया, और उनसे कहा गया कि अगर तुम चाहो तो मुग़ीस से अपना निकाह बर-क़रार रखो, और चाहो तो ख़त्म कर दो, उन्हों ने फ़ौरन यह कह दिया कि मैं मुग़ीस के साथ नहीं रहती, और अपने निकाह को फ़स्ख़ (ख़त्म) कर दिया, अब चूंकि हज़रत मुग़ीस रज़ि० को उनसे बहुत मुहब्बत थी, हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० फ़रमाते हैं कि वह मन्ज़र अब तक मुझे नहीं भूलता कि हज़रत मुग़ीस रज़ि० मदीना की गलियों में इस तरह घूम रहे हैं कि उनकी आखों से आंसू बह रहे हैं, और उन आंसुओं से दाढ़ी भीग रही है, हज़रत बरीरा की ख़ुशामद कर रहे हैं, और उनको इस पर राज़ी करने की कोशिश कर रहे हैं कि ख़ुदा के लिये अपने फ़ैसले को तब्दील कर लो, और दोबारा मुझ से निकाह कर लो, मगर हज़रत बरीरा रज़ि० मानती नहीं थीं, आख़िर कार हज़रत मुग़ीस रज़ि० हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में पहुंच गये, जाकर अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! ऐसा क़िस्सा पेश

आया है, चूंकि मुझे उनसे बहुत तअ़ल्लुक़ है और इतना अर्सा (समय) साथ गुज़रा है, अब वह मेरी बात नहीं मानतीं, इसलिये आप ही उनसे मेरी कुछ सिफ़ारिश फ़रमा दीजिये, चुनांचे आपने हज़रत बरीरा रज़ि० को बुलाया, और फ़रमाया कि:

"لو راجعتيه، فانه ابو ولدك" (ابن ماجه)

अगर तुम अपने फ़ैसले से रुजू कर लो तो अच्छा हो, इसलिये कि वह तुम्हारे बच्चे के बाप हैं, बेचारे इतने परेशान हैं, सुब्हान–ल्लाह! हज़रत बरीरा रज़ि० ने फ़ौरन सवाल किया, या रसूलल्लाह! आप यह फ़रमा रहे हैं कि रुजू कर लो, यह आपका हुक्म है या मश्विरा है? अगर आपकी तरफ़ से यह हुक्म है तो बेशक सरे तस्लीम ख़म है, (यानी मैं मानने को तैयार हूं) और मैं उनके साथ दोबारा निकाह करने को तैयार हूं, आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

"انما اشفع"

मैं यह सिर्फ़ सिफ़ारिश कर रहा हूं, यह मेरा हुक्म नहीं है, जब हज़रत बरीरा ने यह सुना कि यह नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का हुक्म नहीं है, बल्कि सिर्फ़ सिफ़ारिश और मश्विरा है, तो फ़रमाया कि: या रसूलल्लाह! अगर यह मश्विरा है, तो इसका मतलब यह है कि मुझे आज़ादी है कि कुबूल करूं या न करूं, इसलिये मेरा फ़ैसला यही है कि अब मैं दोबारा उनके पास नहीं जाऊंगी, चुनांचे हज़रत बरीरा रज़ि० दोबारा उनके पास नहीं गयीं, और उनसे अ़लाहिदगी इख़्तियार कर ली।

एक औरत ने हुज़ूर पाक का मश्विरा रद्द कर दिया

अब आप अंदाज़ा लगाइये कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मश्विरा है, और आपकी सिफ़ारिश है, लेकिन एक

औरत, जो अब तक कनीज़ थी, और आपकी बीवी हज़रत आयशा रज़ि० के सदक़े से आज़ाद हुई, उसको भी यह हक़ दिया जा रहा है कि हम जो बात कह रहे हैं, वह मश्विरा है, तुम्हारा दिल चाहे मानो, और तुम्हारा दिल न चाहे न मानो, और रद्द कर दो, चुनांचे वह मश्विरा उन ख़ातून (औरत) ने रद्द कर दिया, और उस पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अदना सी नागवारी का इज़हार भी नहीं फ़रमाया कि हमने तुमको एक मश्विरा दिया था, लेकिन तुमने हमारी बात नहीं मानी, इसके ज़रिये आपने उम्मत को यह तालीम देदी कि मश्विरा और सिफ़ारिश यह है कि जिसको मश्विरा दिया गया है, या जिससे सिफ़ारिश की गई है बस उसको तवज्जोह दिलाना मक़्सूद है, दबाव डालना मक़्सूद नहीं।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क्यों मश्विरा दिया?

अब सवाल यह पैदा होता है कि जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह मालूम था कि हज़रत बरीरा रज़ि० ने यह निकाह ख़ुद ख़त्म कर दिया, और वह उनके साथ रहना नहीं चाहतीं तो फिर आपने सिफ़ारिश ही क्यों की?

आपने सिफ़ारिश इसलिये की, आप जानते थे कि हज़रत मुग़ीस रज़ि० के अन्दर सिवाये शक्ल व सूरत के कोई ख़राबी नहीं है, अगर यह उनकी बात मान लेगी, और दोबारा उनके निकाह में आ जायेगी तो उनको अज्र व सवाब बहुत होगा, इसलिये कि उसने अल्लाह के एक बन्दे की ख़्वाहिश को पुरा किया, और इस वासते आपने सिफ़ारिश भी कर दी, लेकिन जब उन्हों ने सिफ़ारिश को क़ुबूल नहीं किया तो आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मामूली सी नागवारी का भी इज़हार नहीं फ़रमाया।

उम्मत को सबक़ दे दिया

इसलिये आपने क़ियामत तक आने वाली उम्मत को यह सबक़ दे दिया कि मश्विरा को कभी भी यह न समझो कि यह दबाव डाला जा रहा है, या लाज़मी किया जा रहा है, बल्कि मश्विरा का हासिल सिर्फ़ तवज्जोह दिलाना है, अब उसको इख़्तियार है चाहे वह उस पर अमल करे, चाहे न करे।

सिफ़ारिश नागवारी का ज़रिया क्यों है?

आज हमारे अन्दर सिफ़ारिश और मश्विरा बा–क़ायदा नागवारी का ज़रिया बन गयी हैं, अगर किसी के मश्विरा को क़ुबूल न किया जाये तो वह कह देता है कि हमने तो भाई ऐसा मश्विरा दिया था, लेकिन हमारी बात नहीं चली, हमारी बात नहीं मानी गयी, उस पर नाराज़गी हो रही है, ख़फ़ा हो रहे हैं, बुरा माना जा रहा है, और यह सोचा जा रहा है कि अब आइन्दा उनसे राबता (संबन्ध) नहीं रखेंगे, इसलिये कि यह हमारी बात तो मानते ही नहीं, ख़ूब समझ लीजिये कि सिफ़ारिश का यह मतलब नहीं है। इस लिये हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दो बातें बयान फ़रमा दीं कि सिफ़ारिश करो, अज्र मिलेगा, लेकिन अगर सिफ़ारिश क़ुबूल न की जाये तो तुम्हारे दिल में उसके ख़िलाफ़ कोई नाराज़गी और बद्दिली नहीं पैदा होनी चाहिये कि उसने हमारी बात नहीं मानी, इन तमाम बातों का लिहाज़ करते हुए अगर सिफ़ारिश की जायेगी यह इन्शा अल्लाह बड़े अज्र व सवाब का सबब होगी।

ख़ुलासा

एक मर्तबा फिर ख़ुलासा अर्ज़ कर देता हूं कि सब से पहली बात यह है कि सिफ़ारिश उन मामलों में करें जिन में सिफ़ारिश जायज़ है। जहां सिफ़ारिश करना जायज़ नहीं, जैसे मुक़द्दमे हैं, या

इम्तिहानी परचों की जांच का मामला है, इन जगहों पर सिफ़ारिश करना जायज़ नहीं, दूसरे यह कि सिफ़ारिश जायज़ काम की हो, ना जायज़ काम की न हो, तीसरे यह कि सिफ़ारिश का अन्दाज़ मश्विरे का हो, दबाव डालने का न हो, चौथे अगर मश्विरा और सिफ़ारिश न मानी जाये तो उस पर नाराज़गी और नागवारी न होनी चाहिये, इन चार चीज़ों की रिआयत के साथ अगर सिफ़ारिश की जायेगी तो सिफ़ारिश की वजह से कोई फ़साद बर्पा नहीं हो सकता, और वह सिफ़ारिश अज्र व सवाब का सबब होगी इन्शा अल्लाह तआ़ला, अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से हमें इसकी समझ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخردعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

रोज़ा हम से क्या मुतालबा करता है?

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْماً كَثِيْرًا كَثِيْرًا

اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ، شَهْرُ رَمَضَانَ الَّذِيْٓ اُنْزِلَ فِيْهِ الْقُرْاٰنُ هُدًى لِّلنَّاسِ وَبَيِّنٰتٍ مِّنَ الْهُدٰى وَالْفُرْقَانِ، فَمَنْ شَهِدَ مِنْكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ. (سورة بقره:١٨٥)

امنت بالله صدق الله مولانا العظيم، وصدق رسوله النبى الكريم ونحن على ذالك من الشاهدين والشاكرين، والحمد لله رب العالمين.

बर्कत वाला महीना

इन्शा अल्लाह चन्द रोज़ बाद रमज़ानुल मुबारक का महीना शुरू होने वाला है, और कौन मुसलमान ऐसा होगा जो इस महीने की अज़्मत (बड़ाई) और बर्कत से वाक़िफ़ न हो, अल्लाह तआला ने यह महीना अपनी इबादत के लिये बनाया है, और न मालूम क्या क्या रहमतें अल्लाह तआला इस महीने में अपने बन्दों की तरफ़ नाज़िल फ़रमाते हैं, हम और आप उन रहमतों का तसव्वुर भी नहीं कर सकते।

इस महीने के अन्दर बाज़ आमाल ऐसे हैं, जिन को हर मुसलमान जानता है, और उस पर अ़मल भी करता है, जैसे इस माह में रोज़े फ़र्ज़ हैं, अल्हम्दु लिल्लाह, मुसलमानों को रोज़ा रखने की तौफ़ीक़ हो जाती है, और तरावीह के बारे में मालूम है है कि

यह सुन्नत है, और मुसलमानों को इसमें शिर्कत की सआदत हासिल हो जाती है, लेकिन इस वक़्त एक और पहलू की तरफ़ तवज्जोह दिलाना चाहता हूं।

आम तौर पर यह समझा जाता है कि रमज़ानुल मुबारक की खुसूसियत सिर्फ़ यह है कि इसमें रोज़े रखे जाते हैं, और रात के वक़्त तरावीह पढ़ी जाती है, और बस, इसके अलावा और कोई खुसूसियत नहीं, इसमें तो कोई शक नहीं कि ये दोनों इबादतें इस महीने की बड़ी अहम इबादतों में से हैं, लेकिन बात सिर्फ़ यहां तक ख़त्म नहीं होती, बल्कि हकीक़त में रमज़ानुल मुबारक हम से इससे ज़्यादा का मुतालबा करता है, और कुरआन करीम में अल्लाह जल्ल शानुहू ने इरशाद फ़रमाया कि:

"وَمَا خَلَقْتُ الْجِنَّ وَالْإِنْسَ إِلَّا لِيَعْبُدُوْنِ" (سورہ الذاریات:٥٦)

यानी मैंने जिन्नात और इन्सानों को सिर्फ़ एक काम के लिये पैदा किया, वह यह कि मेरी इबादत करें, इस आयते करीमा में अल्लाह तआला ने इन्सान की पैदाइश का बुनियादी मक़्सद यह बताया कि वह अल्लाह की इबादत करे।

क्या फ़रिश्ते काफ़ी नहीं थे?

यहां बाज़ लोगों को ख़ास कर नई रोशनी के लोगों को यह शुबह होता है कि अगर इन्सान की तख़्लीक़ (पैदाइश) का मक़्सद सिर्फ़ इबादत था, तो इस काम के लिये इन्सान को पैदा करने की क्या ज़रूरत थी? यह काम तो फ़रिश्ते पहले से बहुत अच्छी तरह अन्जाम दे रहे थे? और अल्लाह की इबादत तसबीह और तक़्दीस (पाकी बयान करने) में लगे हुये थे, यही वजह है कि जब अल्लाह तआला ने हज़रत आदम अलै० को पैदा फ़रमाने का इरादा किया और फ़रिश्तों को बताया कि मैं इस तरह का एक इन्सान पैदा

करने वाला हूं तो फ़रिश्तों ने एक दम यह कहा कि आप एक ऐसे इन्सान को पैदा कर रहे हैं, जो ज़मीन में फ़साद मचायेगा, और ख़ून बहाएगा, और इबादत, तसबीह् व तक्दीस हम अन्जाम दे रहे हैं, इसी तरह आज भी एतिराज़ करने वाले यह एतिराज़ कर रहे हैं कि इन्सान की तख़्लीक़ का मक़्सद सिर्फ़ इबादत होता तो इसके लिये इन्सान को पैदा करने की ज़रूरत नहीं थी, यह काम तो फ़रिश्ते पहले ही अन्जाम दे रहे हैं।

फ़रिश्तों का कोई कमाल नहीं

बेशक अल्लाह तआला के फ़रिश्ते अल्लाह तआला की इबादत कर रहे थे, लेकिन उनकी इबादत बिल्कुल मुख़्तलिफ़ क़िस्म की थी, और इन्सान के सुपुर्द जो इबादत की गयी है वह बिल्कुल मुख़्तलिफ़ क़िस्म की थी, इसलिये कि फ़रिश्ते जो इबादत कर रहे थे, उनके मिज़ाज में उसके ख़िलाफ़ करने का इम्कान ही नहीं था, वे अगर चाहें कि इबादत न करें तो उनके अन्दर इबादत छोड़ने की सलाहियत नहीं, अल्लाह तआला ने उनके अन्दर से गुनाह करने का इम्कान ही ख़त्म फ़रमा दिया और न उन्हें भूख लगती है, और न उनको प्यास लगती है, और न उनके अन्दर शहवानी तक़ाज़ा पैदा होता है, यहां तक कि उनके दिल में गुनाह का वस्वसा भी नहीं गुज़रता, गुनाह की ख़्वाहिश और गुनाह पर चलना तो दूर की बात है, इसलिये अल्लाह तआला ने उनकी इबादत पर कोई अज्र व सवाब भी नहीं रखा, क्योंकि अगर फ़रिश्ते गुनाह नहीं कर रहे हैं तो इसमें उनका कोई कमाल नहीं, और जब कोई कमाल नहीं तो फिर जन्नत वाला अज्र व सवाब भी मुरत्तब नहीं होगा।

अंधे का बचना कमाल नहीं

जैसे एक शख़्स बीनाई (निगाह) से महरूम है, जिसकी वजह से सारी उम्र उसने न कभी फ़िल्म देखी, न कभी टी० वी० देखा, और न कभी ग़ैर मेहरम पर निगाह डाली, बताईये कि इन गुनाह के न करने में उसका क्या कमाल ज़ाहिर हुआ? इसलिये कि उसके अन्दर इन गुनाहों के करने की सलाहियत ही नहीं, लेकिन एक दूसरा सख़्स जिसकी निगाह बिल्कुल ठीक है, जो चीज़ चाहे देख सकता है, लेकिन देखने की सलाहियत मौजूद होने के बावजूद ज किसी ग़ैर मेहरम की तरफ़ देखने का तक़ाज़ पैदा होता है, वह फ़ौरन सिर्फ़ अल्लाह तआला के ख़ौफ़ से निगाह नीचे कर लेता है, अब बज़ाहिर दोनों गुनाहों से बच रहे हैं, लेकिन दोनों में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ है, पहला शख़्स भी गुनाह से बच रहा है, और दूसरा भी गुनाह से बच रहा है, लेकिन पहले शख़्स का गुनाह से बचना कोई कमाल नहीं, और दूसरे शख़्स का गुनाह से बचना कमाल है।

यह इबादत फ़रिश्तों के बस में नहीं है

इसलिये अगर फ़रिश्ते सुबह से शाम तक खाना न खायें यह कोई कमाल नहीं, इसलिये कि उन्हें भूख ही नहीं लगती, उन्हें खाने की हाजत ही नहीं, इसलिये उनके न खाने पर अज्र व सवाब भी नहीं, लेकिन इन्सान इन तमाम हाजतों को पैदा हुआ है, इसलिये कोई इन्सान कितने ही बड़े से बड़े मक़ाम पर पहुंच जाये, यहां तक कि सबसे आला मक़ाम यानी नुबुव्वत पर पहुंच जाये तब भी वह खाने पीने से बे-पर्वाह नहीं हो सकता, चुनांचे काफ़िरों ने नबियों पर यही एतिराज़ किया कि:

"مَالِهٰذَا الرَّسُوْلِ يَاْكُلُ الطَّعَامَ وَيَمْشِيْ فِي الْاَسْوَاقِ" (سورة فرقان:٧)

यानी यह रसूल कैसे हैं जो खाना भी खाते हैं, और बाज़ारों में चलते फिरते हैं, तो खाने का तक़ाज़ा नबियों के साथ भी लगा हुआ है, अब अगर इन्सान को भूख लग रही है, लेकिन अल्लाह के हुक्म की वजह से खाना नहीं खा रहा है, तो यह कमाल की बात है, इसलिये अल्लाह तआला ने फ़रिश्तों से फ़रमाया कि मैं एक ऐसी मख़लूक़ पैदा कर रहा हूं, जिसको भूख भी लगेगी, प्यास भी लगेगी, और उसके अन्दर शहावानी तक़ाज़े भी पैदा होंगे, और गुनाह के जज़्बात भी उनके अन्दर पैदा होंगे, लेकिन जब गुनाह का जज़्बा पैदा होगा, उस वक़्त वह मुझे याद कर लेगा, और मुझे याद करके अपने नफ़्स को उस गुनाह से बचा लेगा, उसकी यह इबादत और गुनाह से बचना हमारे यहां क़द्र व क़ीमत रखता है, और जिसका अज्र व सवाब और बदला देने के लिये हमने ऐसी जन्नत तैयार कर रखी है, जिसकी सिफ़त عَرْضُهَا السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْض है, इसलिये कि उसके दिल में जज़्बा और तक़ाज़ा हो रहा है, और ख़्वाहिशात पैदा हो रही हैं, और गुनाह के मुहर्रिकात सामने आ रहे हैं, लेकिन यह इन्सान हमारे ख़ौफ़ और हमारी अज़्मत के तसव्वुर से अपनी आंख को गुनाह से बचा लेता है, अपने कान को गुनाह से बचा लेता है, अपनी ज़बान को गुनाह से बचा लेता है, और गुनाहों की तरफ़ उठते हुए क़दमों को रोक लेता है, ताकि मेरा अल्लाह मुझसे नाराज़ न हो जाये, यह इबादत फ़रिश्तों के बस में नहीं थी, इस इबादत के लिये इन्सान को पैदा किया गया।

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का कमाल

हज़रत यूसुफ़ अलै० का जो फ़ित्ना ज़ुलैख़ा के मुक़ाबले में पेश आया, कौन मुसलमान ऐसा है जो उसको नहीं जानता, क़ुरआन करीम कहता है कि ज़ुलैख़ा ने हज़रत यूसुफ़ अलै० को

गुनाह की दावत दी, उस वक़्त ज़ुलैख़ा के दिल में भी गुनाह का ख़्याल पैदा हुआ, और हज़रत यूसुफ़ अ़लै० के दिल में भी गुनाह का ख़्याल आ गया, आम लोग तो इससे हज़रत यूसुफ़ अ़लै० पर एतिराज़ और उनकी कमी बयान करते हैं, हालांकि कुरआन करीम यह बतलाना चाहता है कि गुनाह का ख़्याल आ जाने के बावजूद अल्लाह तआ़ला के खौफ़ और उनकी अज़्मत के इस्तिहज़ार (दिल में मौजूद होने) से उस गुनाह के ख़्याल पर अ़मल नहीं किया, और अल्लाह तआ़ला के हुक्म के आगे सरे तसलीम ख़म कर लिया, लेकिन अगर गुनाह का ख़्याल भी दिल में न आता, और गुनाह की सलाहियत ही न होती, और गुनाह का तक़ाज़ा ही पैदा न होता, तो फिर हज़ार मर्तबा ज़ुलैख़ा गुनाह की दावत दे फिर तो कमाल की कोई बात नहीं थी, कमाल तो यह था कि गुनाह की दावत दी जा रही है, और माहौल भी मौजूद, हालात भी साज़गार और दिल में ख़्याल भी आ रहा है, लेकिन इन सब चीज़ों के बावजूद अल्लाह के हुक्म के आगे सरे तसलीम ख़म करके फ़रमाया कि "मआ़ज़ल्लाह" कि मैं अल्लाह की पनाह चाहता हूं, यह इबादत है जिसके लिये अल्लाह तआ़ला ने इन्सान को पैदा फ़रमाया।

हमारी जानों का सौदा हो चुका है

जब इन्सान की पैदाइश का मक़्सद इबादत है तो इसका तक़ाज़ा यह था कि जब इन्सान दुनिया में आये तो सुबह से लेकर शाम तक इबादत के अ़लावा कोई और काम न करे, और उसको दूसरे काम की इजाज़त न होनी चाहिये, चुनांचे दूसरी जगह कुरआन करीम ने फ़रमाया:

"اِنَّ اللّٰهَ اشْتَرٰى مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ اَنْفُسَهُمْ وَاَمْوَالَهُمْ بِاَنَّ لَهُمُ الْجَنَّةَ"

(سورة التوبة: ١١١)

यानी अल्लाह तआला ने मोमिनों से उनकी जानें और उनके माल ख़रीद लिये, और इसका मुआवज़ा यह मुक़र्रर किया कि आख़िरत में उनको जन्नत मिलेगी, जब हमारी जानें बिक चुकी हैं, तो ये जानें जो हम लिये बैठे हैं, वे हमारी नहीं हैं, बल्कि बिका हुआ माल है, इसकी क़ीमत लग चुकी है, जब यह जान अपनी नहीं है इसका तक़ाज़ा यह था कि, इस जान और जिस्म को सिवाये अल्लाह की इबादत के दूसरे काम में न लगाया जाये, इसलिये अगर अल्लाह तआला की तरफ़ से यह हुक्म दिया जाता कि तुम्हें सुबह से शाम तक दूसरे काम करने की इजाज़त नहीं, बस सिर्फ़ सज्दे में पड़े रहा करो, और अल्लाह अल्लाह किया करो, दूसरे कामों की इजाज़त नहीं, न कमाने की इजाजत है न खाने की इजाज़त है, तो यह हुक्म इन्साफ़ के ख़िलाफ़ न होता, इसलिये कि पैदा ही इबादत के लिये किया गया है।

ऐसे ख़रीदार पर क़ुरबान जाइए

लेकिन क़ुरबान जाइये ऐसे ख़रीदार पर कि अल्लाह तआला ने हमारी जान व माल को ख़रीद भी लिया, और उसकी क़ीमत भी पूरी लगा दी, यानी जन्नत, फिर वह जान व माल हमें वापस भी लौटा दिया कि यह जान व माल अपने पास रखो, और हमें इस बात की इजाज़त देदी कि खाओ, पियो, कमाओ, और दुनिया के कारोबार करो, बस पांच वक़्त की नमाज़ पढ़ लिया करो, और फ़लां फ़लां चीज़ों से परहेज़ करो, बाक़ी जिस तरह चाहो करो, यह अल्लाह तआला की अज़ीम रहमत और इनायत है।

इस महीने में असल मक़सद की तरफ़ आ जाओ

लेकिन जायज़ करने का नतीजा क्या होता है, अल्लाह तआला भी जानते थे कि जब यह इन्सान दुनिया के कारोबार और काम

धन्धों में लगेगा तो धीरे धीरे इसके दिल पर ग़फ़लत के पर्दे पड़ जाया करेंगे, और दुनिया के कारोबार और धन्धों में खो जायेगा, इस ग़फ़लत को दूर करने के लिये समय समय पर कुछ औक़ात मुक़र्रर कर दिये हैं, उनमें एक रमज़ानुल मुबारक का महीना है, इसलिये कि साल के ग्यारह महीने तो आप तिजारत में, खेती-बाड़ी में, मज़दूरी में और दुनिया के कारोबार और धन्धों में, खाने कमाने और हंसने बोलने में लगे रहे, और इसके नतीजे में दिलों पर ग़फ़लत का पर्दा पड़ने लगता है, इसलिये एक महीना अल्लाह तआला ने इस काम के लिये मुक़र्रर फ़रमा दिया कि इस महीने में तुम असल मक़्सदे तख़्लीक़ (पैदाइश के असल मक़्सद) यानी इबादत की तरफ़ लौट कर आओ, जिसके लिये तुम्हें दुनिया में भेजा गया, और जिसके लिये तुम्हें पैदा किया गया, इस माह में अल्लाह की इबादत में लगो, और ग्यारह महीने तक तुम से जो गुनाह सरज़द हुए हैं, उनको बख़्शवाओ, और दिल की सलाहियतों पर जो मैल आ चुका है, उसको धुलवाओ, और दिल में जो ग़फ़लत के पर्दे पड़ चुके हैं, उनको उठवाओ, इस काम के लिये हमने यह महीना मुक़र्रर किया है।

रमज़ान के मायने

लफ़्ज़ "रमज़ान" मीम के सुकून के साथ (यानी रम्ज़ान) हम ग़लत इस्तेमाल करते हैं, सही लफ़्ज़ "रमज़ान" मीम के ज़बर के साथ है, और "रमज़ान" के लोगों ने बहुत से मायने बयान किये हैं, लेकिन असल अर्बी ज़बान में "रमज़ान" के मायने हैं, "झुल्सा देने वाला और जला देने वाला" और इस महीने का यह नाम इसलिये रखा गया है कि सब से पहले जब इस महीने का नाम रखा जा रहा था, उस साल यह महीना शदीद झुल्सा देने वाली गर्मी में

आया था, इसलिये लोगों ने इसका नाम "रमज़ान" रख दिया।

अपने गुनाहों को बख़्शवा लो

लेकिन उलमा ने फ़रमाया कि इस महीने को "रमज़ान" इस लिये कहा जाता है कि इस महीने में अल्लाह तआला अपनी रहमत से अपने फ़ज़्ल व करम से बन्दों के गुनाहों को झुल्सा देते हैं, और जला देते हैं, इस मक़्सद के लिये अल्लाह तआला ने यह महीना मुक़र्रर फ़रमाया, ग्यारह महीने दुनियावी कारोबार, दुनियावी धन्धों में लगे रहने के नतीजे में ग़फ़्लतें दिल पर छा गयीं, और इस मुद्दत में जिन गुनाहों और ख़ताओं का इर्तिकाब हुआ, उनको अल्लाह तआला के हुज़ूर हाज़िर होकर उन्हें बख़्शवा लो, और ग़फ़्लत के पर्दों को दिल से उठा दो, ताकि ज़िन्दगी का एक नया दौर शुरू हो जाये, इसी लिये कुरआन करीम ने फ़रमाया किः

"يَا أَيُّهَا الَّذِيْنَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ" (سورة بقره: ١٨٣)

यानी ये रोज़े तुम पर इसलिये फ़र्ज़ किये गये हैं, ताकि तुम्हारे अन्दर तक़्वा पैदा हो जाये। तो रमज़ान के महीने का असल मक़्सद यह है कि साल भर के गुनाहों को बख़्शवाना, और ग़फ़्लत के पर्दे दिल से उठाना, और दिलों में तक़्वा पैदा करना, जैसे किसी मशीन को जब कुछ वक़्त इस्तेमाल किया जाये तो उसके बाद उसकी सर्विस करानी पड़ती है, उसकी सफ़ाई करानी होती है, इस तरह अल्लाह तआला ने इन्सान की सर्विस और ओवर हालिंग के लिये यह रमज़ानुल मुबारक का महीना मुक़र्रर फ़रमाया है, ताकि इस महीने में अपनी सफ़ाई कराओ, और अपनी ज़िन्दगी को एक नई शक्ल दो।

इस महीने को फ़ारिग़ कर लें

इसलिये सिर्फ़ रोज़ा रखने और तरावीह पढ़ने की हद तक बात ख़त्म नहीं होती, बल्कि इस महीने का ताक़ाज़ा यह है कि इन्सान अपने आपको इस महीने में दूसरे कामों से फ़ारिग़ कर ले, इसलिये कि ग्यारह महीने तक ज़िन्दगी के दूसरे काम धन्धों में लगे रहे, लेकिन यह महीना इन्सान के लिये उसकी असल मक़्सदे तख़्लीक़ की तरफ़ लौटने का महीना है, इसलिसे इस महीने के तमाम औक़ात, वर्ना कम से कम अक्सर औक़ात या जितना ज़्यादा से ज़्यादा हो सके, अल्लाह की इबादत में सर्फ़ (ख़र्च) करे, और इसके लिये इन्सान को पहले से तैयार होना चाहिये, और इसका पहले से प्रोग्राम बनाना चाहिये।

रमज़ान के इस्तिक़बाल का सही तरीक़ा

आज कल इस्लामी दुनिया में एक बात चल पड़ी है, जिसकी शुरूआत अ़रब मुल्कों ख़ास कर मिस्र और शाम से हुई, और फिर दूसरे मुल्कों में भी रायज हो गई, और हमारे यहां भी आ गई है, वह यह है कि रमज़ान शुरू होने से पहले कुछ महफ़िलें मुन्अ़क़िद (आयोजित) होती हैं, जिसका नाम "महफ़िल इस्तिक़बाले रमज़ान" रखा जाता है, जिसमें रमज़ान से एक दो दिन पहले एक इज्तिमा मुन्अ़क़िद किया जाता है और उसमें कुरआन करीम और तक़रीर और वाज़ रखा जाता है। जिसका मक़्सद लोगों को यह बतलाना होता है कि हम रमज़ानुल मुबारक का इस्तिक़बाल कर रहे हैं और उसको "ख़ुश आमदीद" कह रहे हैं, रमज़ान मुबारक के इस्तिक़-बाल का यह जज़्बा बहुत अच्छा है, लकिन यही जज़्बा जब आगे बढ़ता है तो कुछ अर्सा (समय) बाद बिद्अ़त की शक्ल इख़्तियार कर लेता है, चुनांचे बाज़ जगहों पर इस इस्तिक़बाल की महफ़िल

ने बिद्अत की शक्ल इख़्तियार कर ली। लेकिन रमज़ानुल मुबारक का इस्तिक़बाल यह है कि रमज़ान आने से पहले अपने निज़ामुल औक़ात (समय का निज़ाम) बदल कर ऐसा बनाने की कोशिश करो कि इसमें ज़्यादा से ज़्यादा अल्लाह जल्ल शानुहू की इबादत में सर्फ़ हो, रमज़ान आने से पहले यह सोचो कि यह महीना आ रहा है, किस तरह मैं अपनी मसरूफ़ियात कम कर सकता हूं, इस महीने में अगर कोई शख़्स अपने आपको पूरे तौर पर इबादत के लिये फ़ारिग़ करले तो सुब्हानल्लाह, और अगर कोई शख़्स पूरे तौर पर अपने आपको फ़ारिग़ नहीं कर सकता तो फिर यह देखे कि कौन कौन से काम एक माह के लिये छोड़ सकता हूं, उनको छोड़े, और किन मसरूफ़ियात को कम कर सकता हूं, उनको कम करे, और जिन कामों को रमज़ान के बाद तक मुअख़्ख़र (लेट) कर सकता है, उनको मुअख़्ख़र करे, और रमज़ान के ज़्यादा से ज़्यादा औक़ात को इबादत में लगाने की कोशिश करे, मेरे नज़दीक रमज़ान के इस्तिक़बाल का सही तरीक़ा यही है, अगर यह काम कर लिया जाये तो इन्शा अल्लाह रमज़ानुल मुबारक की सही रूह और उसके अन्वार व बरकात हासिल होंगे, वरना यह होगा कि रमज़ानुल मुबारक आयेगा और चला जायेगा, और उससे सही तौर पर फ़ायदा हम नहीं उठा सकेंगे।

रोज़े और तरावीह् से एक क़दम आगे

जब रमज़ानुल मुबारक को दूसरे मशाग़िल से फ़ारिग़ कर लिया, तो अब उस फ़ारिग़ वक़्त को किस काम में, सर्फ़ (ख़र्च) करे? जहां तक रोज़ों का तअल्लुक़ है हर शख़्स जानता है कि रोज़ा रखना फ़र्ज़ है, और जहां तक तरावीह् का मामला है, इस से भी हर सख़्स वाक़िफ़ है, लेकिन एक पहलू की तरफ़ ख़ास तौर पर

मुतवज्जह करना चाहता हूं, वह यह कि अल्हम्दू लिल्लाह जिस सख़्स के दिल में ज़र्रा बराबर भी ईमान है, उसके दिल में रमज़ानुल मुबारक का एक एहतिराम और उसका तक़द्दुस होता है, जिसकी वजह से उसकी कोशिश यह होती है कि इस मुबारक महीने में अल्लाह की इबादत कुछ ज़्यादा करे, और कुछ नवाफ़िल ज़्यादा पढ़े, जो लोग आम दिनों में पांच वक़्त की नमाज़ अदा करने के लिये मस्जिद में आने से कतराते हैं, वे लोग भी तरावीह जैसी लम्बी नमाज़ में भी रोज़ाना शरीक हुए हैं, यह सब अल्हम्दू लिल्लाह इस महीने की बरकत है कि लोग इबादत में, नमाज़ में, ज़िक्र व अज़्कार और तिलावते क़ुरआन में मश्ग़ूल होते हैं।

एक महीना इस तरह गुज़ार लो

लेकिन इन सब नफ़्ली नमाज़ों, इबादतों, नफ़्ली ज़िक्र व अज़्कार, और नफ़्ली तिलावते क़ुरआन करीम से ज़्यादा मुक़द्दम एक और चीज़ है, जिसकी तरफ़ तवज्जोह नहीं दी जाती है, वह यह है कि इस महीने को गुनाहों से पाक करके गुज़ारना कि इस महीने में हमसे कोई गुनाह सर्ज़द न हो, इस मुबारक महीने में आंख न बहके, नज़र ग़लत जगह पर न पड़े, कान ग़लत चीज़ न सुनें, ज़बान से कोई ग़लत कलिमा न निकले, और अल्लाह तबारक व तआला की ना-फ़रमानी से मुकम्मल परहेज़ हो, यह मुबारक महीना अगर इस तरह गुज़ार लिया, फिर चाहे एक नफ़्ली रक्अत न पढ़ी हो, और तिलावत ज़्यादा न की हो, और न ज़िक्र व अज़्-कार किया हो, लेकिन गुनाहों से बचते हुए अल्लाह की मासियत और ना फ़रमानी से बचते हुए यह महीना गुज़ार दिया तो आप क़ाबिले मुबारक बाद हैं, और यह महीना आपके लिये मुबारक है, ग्यारह महीने तक हर क़िस्म के काम में मुब्तला रहते हैं, और यह

अल्लाह तबारक व तआला का एक महीना आ रहा है, कम से कम इसको तो गुनाहों से पाक कर लो, इसमें तो अल्लाह की ना-फ़रमानी न करो, इसमें तो कम से कम झूठ न बोलो, इसमें तो ग़ीबत न करो, इसमें तो बद निगाही के अन्दर मुब्तला न हो, इस मुबारक महीने में तो कानों को ग़लत जगह पर इस्तेमाल न करो, इसमें तो रिश्वत न खाओ, इस में सूद न खाओ, कम से कम यह एक महीना इस तरह गुज़ार लो।

यह कैसा रोज़ा हुआ?

इसलिये कि आप रोज़े तो माशा अल्लाह बड़े ज़ौक़ व शौक़ से रख रहे हैं, लेकिन रोज़े के क्या मायने हैं? रोज़े के मायने यह हैं कि खाने से परहेज़ करना, पीने से परहेज़ करना और नफ़्सानी ख़्वाहिशात की तक्मील से परहेज़ करना, रोज़े में इन तीनों चीज़ों से परहेज़ ज़रूरी है, अब यह देखें कि ये तीनों चीज़ें ऐसी हैं जो अपने आप में हलाल हैं, खाना हलाल, पीना हलाल और जायज़ तरीक़े से मियां बीवी का नफ़्सानी ख़्वाहिशात की तक्मील करना हलाल, अब रोज़े के दौरान इन हलाल चीज़ों से तो परहेज़ कर रहे हैं, न खा रहे हैं और न पी रहे हैं, लेकिन जो चीज़ीं पहले से हराम थीं, जैसे झूठ बोलाना, ग़ीबत करना, बद निगाही करना, जो हर हाल में हराम थीं, रोज़े में ये सब चीज़ें हो रही हैं, अब रोज़ा रखा हुआ है, और झूठ बोल रहे हैं, रोज़ा रखा हुआ है और ग़ीबत कर रहे हैं, रोज़ा रखा हुआ है और बद निगाही कर रहे हैं, और रोज़ा रखा हुआ है, लेकिन वक़्त पास करने के लिये गन्दी गन्दी फ़िल्में देख रहे हैं, यह क्या रोज़ा हुआ? कि हलाल चीज़ें तो छोड़ दीं और हराम चीज़ें नहीं छोड़ीं, इसलिये हदीस शरीफ़ में नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि

अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि जो शख़्स रोज़े की हालत में झूठ बोलाना न छोड़े तो मुझे उसके भूखा और प्यासा रहने की कोई हाजत नहीं, इसलिये जब झूठ बोलना नहीं छोड़ा जो पहले से हराम था, तो खाना छोड़ कर उसने कौन सा बड़ा अमल किया।

रोजे का सवाब मलियामेट हो गया

अगरचे फ़िक़्ही एतिबार से रोज़ा दुरुस्त हो गया, अगर किसी मुफ़्ती से पूछोगे कि मैंने रोज़ा भी रखा था, और झूठ भी बोला था, तो वह मुफ़्ती यही जवाब देगा कि रोज़ा दुरुस्त हो गया, उसकी क़ज़ा वाजिब नहीं, लेकिन उसकी क़ज़ा न होने के बावजूद उस रोज़े का सवाब और बरकतें मलियामेट हो गयीं, इस वासते कि तुमने उस रोज़े की रूह हासिल नहीं की।

रोजे का मक़सद तक़वे की शमा रौशन करना है

मैंने आपके सामने जो यह आयत तिलावत की कि:

"يَـا اَيُّهَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ"

ऐ ईमान वालो! तुम पर रोज़े फ़र्ज़ किये गये जैसे पिछली उम्मतों पर रोज़े फ़र्ज़ किये गये, क्यों रोज़े फ़र्ज़ किये गये? ताकि तुम्हारे अन्दर तक़वा पैदा हो, यानी रोज़ा असल में इसलिये तुम्हारे ज़िम्मे शूरू किया गया, ताकि उसके ज़रिये तुम्हारे दिल में तक़वा पैदा हो, यानी रोज़ा असल में इसलिये तुम्हारे ज़िम्मे शुरू किया गया ताकि इसके ज़रिये तुम्हारे दिल में तक़वे की शमा रोशन हो, रोज़े से तक़वा किस तरह पैदा होता है?

रोज़ा तक़वे की सीढ़ी है

बाज़ उलमा–ए–किराम ने फ़रमाया कि रोज़े से तक़वा इस तरह पैदा होता है कि रोज़ा इन्सान की क़ुव्वते हैवानिया और

कुव्वते बहीमिय्या को तोड़ता है, जब आदमी भूखा रहेगा तो उसकी वजह से उसकी हैवानी ख़्वाहिशात और हैवानी तक़ाज़े कुचले जायेंगे, जिसके नतीजे में गुनाहों पर इक़दाम करने का दाईया और जज़्बा सुस्त पड़ जायेगा।

लेकिन हमारे हज़रत मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रह० अल्लाह तआ़ला उनके दरजों को बुलन्द फ़रमाये, (आमीन) ने फ़रमाया कि सिर्फ़ कुव्वते बहीमिय्या तोड़ने की बात नहीं है, बल्कि बात असल में यह है कि जब आदमी सही तरीक़े से रोज़ा रखेगा तो यह रोज़ा ख़ुद तक़वे की एक अज़ीमुश्शान सीढ़ी है, इसलिये कि तक़वे के क्या मायने हैं? तक़वे के मायने यह हैं कि अल्लाह जल्ल जलालुहू की अज़्मत के इस्तिहज़ार से उसके गुनाहों से बचना, यानी यह सोच कर कि मैं अल्लाह तआ़ला का बन्दा हूं, और अल्लाह तआ़ला मुझे देख रहे हैं, अल्लाह तआ़ला के सामने हाज़िर होकर मुझे जवाब देना है, और अल्लाह तआ़ला के सामने पेश होना है, इस तसव्वुर के बाद जब इन्सान गुनाहों को छोड़ता है तो इसी का नाम तक़वा है, जैसा कि अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं:

"وَاَمَّا مَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهٖ وَنَهَى النَّفْسَ عَنِ الْهَوٰى"

(سورة النازعات: ٤٠)

यानी जो शख़्स इस बात से डरता है कि मुझे अल्लाह तआ़ला के दरबार में हाज़िर होना है, और खड़ा होना है, और उसके नतीजे में वह अपने आपको हवाये नफ़्स (नफ़्स के तक़ाज़ों) और ख़्वाहिशात से रोकता है, यही तक़वा है।

मेरा मालिक मुझे देख रहा है

इसलिये "रोज़ा" तक़वा हासिल करने के लिये बेहतरीन ट्रेनिंग और बेहतरीन तर्बियत है, जब रोज़ा रख लिया तो आदमी फिर

कैसा ही गुनाहगार, ख़ताकार और फ़ासिक़ व फ़ाजिर हो, जैसा भी हो, लेकिन रोज़ा रखने के बाद उसकी यह कैफ़ियत होती है कि सख़्त गर्मी का दिन है, और सख़्त प्यास लगी हुई है, और कमरे में अकेला है, कोई दूसरा पास मौजूद नहीं, और दरवाज़े पर कुन्डी लगी हुई है, और कमरे में फ़िरिज मौजूद है, और उस फ़िरिज में ठन्डा पानी मौजूद है, उस वक़्त इन्सान का यह नफ़्स यह तक़ाज़ा करता है कि इस शदीद गरमी के आलम में पानी पी लूं, लेकिन क्या वह शख़्स फ़िरिज से ठंडा पानी निकाल कर पीलेगा? हरगिज़ नहीं पीयेगा, हालांकि अगर वह पानी पीले तो किसी भी इन्सान को कानों कान ख़बर न होगी, कोई लानत और मलामत करने वाला नहीं होगा, और दुनिया वालों के सामने वह रोज़ादार रहेगा, और शाम को बाहर निकल कर आराम से लोगों के साथ इफ़्तार खाले तो किसी शख़्स को भी पता नहीं चलेगा कि इसने रोज़ा तोड़ दिया है, लेकिन इसके बावजूद वह पानी नहीं पीता? पानी न पीने की इसके अलावा कोई और वजह नहीं है कि वह यह सोचता है कि अगरचे कोई मुझे नहीं देख रहा है, लेकिन मेरा मालिक जिसके लिये मैंने रोज़ा रखा है, वह मुझे देख रहा है।

मैं ही इसका बदला दूंगा

इसी लिये अल्लाह जल्ल शानुहू फ़रमाते हैं कि:

"اَلصَّوْمُ لِیْ وَاَنَا اَجْزِیْ بِہٖ" (ترمذی شریف)

यानी रोज़ा मेरे लिये है, इसलिये मैं ही इसकी जज़ा दूंगा, और आमाल के बारे में तो यह फ़रमाया कि किसी अ़मल का दस गुना अज्र, किसी अ़मल का सत्तर गुना अज्र, और किसी अ़मल का सौ गुना अज्र है, यहां तक कि सदक़े का अज्र सात सौ गुना है, लेकिन रोज़े के बारे में फ़रमाया कि रोज़े का अज्र मैं दूंगा, क्योंकि रोज़ा

उसने सिर्फ़ मेरे लिये रखा था। इसलिये कि शदीद गर्मी की वजह से जब हलक़ में कांटे लग रहे हैं, और ज़बान प्यास से खुश्क है, और फ़्रिज में ठन्डा पानी मौजूद है, और तन्हाई है, और कोई देखने वाला भी नहीं है, इसके बावजूद मेरा बन्दा सिर्फ़ इसलिये पानी नहीं पी रहा है कि उसके दिल में मेरे सामने खड़ा होने और जवाब देने का डर और एहसास है, इसलिये तक़वा रोज़े की एक शक्ल भी है, और उसके हासिल करने की एक सीढ़ी भी है, इसलिये कि अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि हमने रोज़े इसलिये फ़र्ज़ किये ताकि तक़वे की अ़मली तर्बियत दें।

वर्ना यह तर्बियती कोर्स मुकम्मल नहीं होगा

और जब तुम रोज़े के ज़रिये यह अ़मली तर्बियत हासिल कर रहे हो, तो फिर इसको और तरक़्क़ी दो, और आगे बढ़ाओ, इस लिये जिस तरह रोज़े की हालत में शदीद प्यास के बावजूद पानी पीने से रुक गये थे, और अल्लाह तआ़ला के ख़ौफ़ से खाना खाने से रुक गये थे, इसी तरह जब कारोबारे ज़िन्दगी में निकलो, और वहां पर अल्लाह की मासियत और ना—फ़रमानी का तक़ाज़ा और जज़्बा पैदा हो तो यहां भी अल्लाह के ख़ौफ़ से उस ना—फ़रमानी से रुक जाओ, इसलिये एक महीने के लिये हम तुम्हें एक तर्बियती कोर्स से गुज़ार रहे हैं, और यह तर्बियती कोर्स उस वक़्त मुकम्मल होगा जब ज़िन्दगी के कारोबार में हर मौक़े पर इस पर अ़मल करो, वर्ना इस तरह यह तर्बियती कोर्स मुकम्मल नहीं होगा कि अल्लाह के ख़ौफ़ से पानी पीने से तो रुक गये, और जब कारोबारे ज़िन्दगी में निकले तो फिर आंख ग़लत जगह पर पड़ रही है, कान भी ग़लत बातें सुन रहे हैं, ज़बान से भी ग़लत बातें निकल रही हैं, इस तरह तो यह कोर्स मुकम्मल नहीं होगा।

रोज़े का एयर कन्डीशनर लगा दिया, लेकिन?

जिस तरह इलाज ज़रूरी है, इसी तरह परहेज़ ज़रूरी है, अल्लाह तआला ने रोज़ा इसलिये रखवाया, ताकि तुम्हारे अन्दर तक़्वा पैदा हो, लेकिन तक़्वा उस वक़्त पैदा होगा, जब अल्लाह की ना-फ़रमानियों और मासियतों से परहेज़ करोगे, जैसे कमरे को ठंडा करने के लिये आपने उसमें एयर कन्डीशनर लगाया, और एयर कन्डीशनर का तक़ाज़ा यह है कि वह पूरे कमरे को ठंडा कर दे, अब आपने उसको ऑन कर दिया, लेकिन साथ ही उस कमरे की खिड़कियां और दर्वाज़े खोल दिये, इधर से ठंडक आ रही है, और उधर से निकल रही है, इसलिये कमरा ठंडा नहीं होगा, बिल्कुल इसी तरह यह सोचिये कि रोज़े का एयर कन्डीशनर तो आपने लगा दिया, लेकिन साथ ही दूसरी तरफ़ अल्लाह की ना-फ़रमानियों और मासियतों के दरवाज़े और खिड़कियां खोल दें, अब बताइये ऐसे रोज़े से कोई फ़ायदा हासिल होगा?

असल मक़्सद "हुक्म की इत्तिबा"

इसी तरह रोज़े के अंदर यह हिक्मत कि इसका मक़्सद कुव्वते बहीमिय्या तोड़ना है, यह बाद की हिक्मत है, असल मक़्सद यह है कि उनके हुक्म की इत्तिबा हो, और सारे दीन का मदार अल्लाह और अल्लाह के रसूल के हुक्म की इत्तिबा है, वे जब कहें कि खाओ, उस वक़्त खाना दीन है, और जब वे कहें कि मत खाओ, उस वक़्त न खाना दीन है, अल्लाह तआला ने अपनी इताअ़त और अपनी इत्तिबा का अजीब निज़ाम बनाया है कि सारे दिन तो रोज़ा रखने का हुक्म दिया, और उस पर अज्र व सवाब रखा, लेकिन इधर सूरज छिपा, उधर यह हुक्म आ गया कि अब जल्दी इफ़्तार करो, और इफ़्तार में जल्दी करने को मुस्तहब क़रार दिया, और

बिला वजह इफ़्तार में ताख़ीर (देरी) करना मक्रूह और ना-पसन्दीदा है, क्यों ना-पसन्दीदा है? इसलिये कि जब सूरज छिप गया तो अब हमारा यह हुक्म आ गया अब भी अगर नहीं खाओगे, और भूखे रहोगे तो यह भूख की हालत हमें पसन्द नहीं, इसलिये कि असल काम हमारी इत्तिबा करना है, अपना शौक़ पूरा करना नहीं है।

हमारा हुक्म तोड़ दिया

आम हालात में दुनिया की किसी चीज़ की हिर्स और हवस बहुत बुरी चीज़ है, लेकिन जब वह कहें कि हिर्स करो, तो फिर हिर्स ही में लुत्फ़ और मज़ा है, किसी शायर ने क्या ख़ूब कहा है कि:

चूं तमअ् ख़्वाहद ज़ मन सुल्ताने दीं
ख़ाक ब फ़र्क़ क़नाअ़त बाद अज़ीं

जब सुल्ताने दीन यह चाह रहे हैं कि मैं हिर्स और लालच करूं तो फिर क़नाअ़त के सर पर ख़ाक, फिर क़नाअ़त में मज़ा नहीं है, फिर तो लालच और हिर्स में मज़ा है, यह इफ़्तार में जल्दी करने का हुक्म इसी वजह से है, सूरज छिपने से पहले तो यह हुक्म था एक ज़र्रा भी अगर मुंह में चला गया तो गुनाह भी लाज़िम और कफ़्फ़ारा भी लाज़िम, जैसे सात बजे सूरज गुरूब हो रहा था, अब अगर किसी शख़्स ने छः बज कर उन्सठ मिनट पर एक चने का दाना खालिया, अब बताइये कि रोज़े में कितनी कमी आई? सिर्फ़ एक मिनट की कमी आई, एक मिनट का रोज़ा तोड़ा, लेकिन उस एक मिनट के रोज़े के कफ़्फ़ारे में साठ दिन के रोज़े रखने वाजिब हैं, इसलिये कि बात एक चने और एक मिनट की नहीं है, बात असल में यह है कि उसने हमारा हुक्म तोड़ा, हमारा हुक्म यह

था कि जब तक सूरज गुरूब न हो जाये उस वक़्त तक खाना जायज़ नहीं, लेकिन तुमने यह हुक्म तोड़ दिया, इसलिये अब एक मिनट के बदले में साठ दिन के रोज़े रखो।

इफ़्तार में जल्दी करो

और फिर जैसे ही सूरज गुरूब हो गया तो यह हुक्म आ गया कि अब जल्दी खाओ, अगर बिला वजह ताख़ीर कर दी तो गुनाह होगा, इस वासते कि हमने हुक्म दिया था कि खाओ, अब खाना ज़रूरी है।

सहरी में ताख़ीर (देरी) अफ़्ज़ल है

सहरी के बारे में हुक्म यह है कि सहरी ताख़ीर से खाना अफ़्ज़ल है, जल्दी खाना ख़िलाफ़े सुन्नत है, बाज़ लोग रात को बारह बजे सहरी खाकर सो जाते हैं, यह ख़िलाफ़े सुन्नत है, चुनांचे सहाबा-ए-किराम का भी यही मामूल था कि बिल्कुल आख़री वक़्त तक खाते रहते थे, इस वासते कि यह वह वक़्त है जिसमें अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से न सिर्फ़ यह कि खाने की इजाज़त है बल्कि खाने का हुक्म है, इसलिये जब तक वह वक़्त बाक़ी रहेगा, हम खाते रहेंगे, क्योंकि अल्लाह तआ़ला के हुक्म की इत्तिबा और इताअ़त इसी में है, अब अगर कोई शख़्स पहले सहरी खाले तो गोया कि उसने रोज़े के वक़्त में अपनी तरफ़ से इज़ाफ़ा कर दिया इसलिये पहले से सहरी खाने को मम्नूअ़ (वर्जित) करार दिया, पूरे दीन में सारा खेल इत्तिबा का है, जब हमने कहा कि खाओ तो खाना सवाब है, और जब हमने कहा कि मत खाओ तो न खाना सवाब है। इसलिये हज़रत हकीमुल उम्मत रह० फ़रमाया करते थे कि जब अल्लाह मियां कह रहे हैं कि खाओ, और बन्दा कहे कि मैं तो नहीं खाता, या मैं कम खाता हूं, यह तो बन्दगी और इताअ़त न

हुई, अरे भाई! न तो खाने में कुछ रखा है और न ही न खाने में कुछ रखा है, सब कुछ उनकी इताअ़त में है, इसलिय जब उन्हों ने कह दिया कि खाओ, तो फिर खाओ, इसमें अपनी तरफ़ से ज़्यादा पाबन्दी करने की ज़रूरत नहीं।

एक महीना बग़ैर गुनाह के गुज़ार लो

अलबत्ता एहतिमाम करने की चीज़ यह है कि जब रोज़ा रख लिया तो अब अपने आपको गुनाहों से बचाओ, आंखों को बचाओ, कानों को बचाओ, ज़बानों को बचाओ, एक रमज़ान के मौक़े पर हमारे हज़रत क़द्दसल्लाहू सिर्रहू ने यहां तक फ़रमाया कि मैं एक ऐसी बात कहता हूं जो कोई और नहीं कहेगा, वह यह कि अपने नफ़्स को इस तरह बहलाओ, और उससे अहद कर लो कि एक महीना बग़ैर गुनाह के गुज़ार लो, जब यह महीना गुज़र जाये तो फिर तेरा जो जी चाहे करना, चुनांचे हज़रते वाला फ़रमाते हैं कि अल्लाह तआ़ला की रहमत से उमीद है कि जब एक महीना बग़ैर गुनाह के गुज़र जायेगा, तो फिर अल्लाह तआ़ला ख़ुद उसके दिल में गुनाह छोड़ने क़ा दाईया (जज़्बा) पैदा फ़रमा देंगे, लेकिन यह अहद कर लो क़ि यह अल्लाह का महीना आ रहा है, यह इबादत का महीना है, यह तक़वा पैदा करने का महीना है, हम इसमें गुनाह नहीं करेंगे, और हर शख़्स अपने गरेबान में मुंह डाल कर देखे कि वह किन गुनाहों में मुब्तला है, फिर उन सब के बारे में यह अहद करले कि मैं इनमें मुब्तला नहीं हूंगा, जैसे यह अहद करले कि रमज़ानुल मुबारक में आंख ग़लत जगह पर नहीं उठेगी, कान ग़लत बात नहीं सुनेंगे, ज़बान से ग़लत बात नहीं निकलेगी, यह तो कोई बात न हुई कि रोज़ा भी रखा हुआ है, और बुराइयों को भी आंख से देख रहे हैं, और उससे लुत्फ़ ले रहे हैं।

इस महीने में हलाल रिज़्क

दूसरी अहम बात जो हमारे हज़रत रह० फ़रमाया करते थे कि कम से कम इस एक महीने में तो रिज़्के हलाल का एहतिमाम कर लो, जो लुक़्मा आये, वह हलाल का आये, कहीं ऐसा न हो कि रोज़ा तो अल्लाह के लिये रखा, और उसको हराम चीज़ से इफ़्तार कर रहे हैं, सूद पर इफ़्तार हो रहा है, या रिश्वत पर इफ़्तार हो रहा है, या हराम आमदनी पर इफ़्तार हो रहा है, यह कैसा रोज़ा हुआ? कि सहरी भी हराम और इफ़्तार भी हराम, और दरमियान में रोज़ा, इसलिये ख़ास तौर से इस महीने में हराम रोज़ी से बचो, और अल्लाह तबारक व तआला से मांगो कि या अल्लाह! मैं रिज़्के हलाल खाना चाहता हूं, मुझे रिज़्के हराम से बचा लीजिये।

हराम आमदनी से बचें

बाज़ हज़रात वे हैं, जिनका बुनियादी ज़रिया-ए-रोज़गार अल्हम्दु लिल्लाह हराम नहीं है, बल्कि हलाल है, अलबत्ता एहतिमाम न होने की वजह से कुछ हराम आमदनी की मिलावट हो जाती है, ऐसे हज़रात के लिये हराम से बचना कोई दुश्वार काम नहीं है, वे कम से कम इस महीने में थोड़ा सा एहतिमाम (पाबन्दी) कर लें, और हराम आमदनी से बचें......यह अजीब क़िस्सा है कि इस महीने के लिये तो अल्लाह तआला ने फ़रमाया था, कि यह सब्र का महीना है, यह मवासात और ग़मख़्वारी का महीना है, एक दूसरे से हमदर्दी का महीना है, लेकिन इस महीने में बराबरी के बजाए लोग उल्टा खाल खींचने की फ़िक्र करते हैं। इधर रमज़ान मुबारक का महीना आया, और उधर चीज़ों की ज़ख़ीरा अन्दोज़ी शुरू कर दी, इसलिये कम से कम इस महीने में अपने आपको ऐसे हराम कामों से बचा लो।

अगर आमदनी मुकम्मल हराम है तो फिर?

बाज़ हज़रात वे हैं जिनका ज़रिया–ए–आमदनी मुकम्मल तौर पर हराम है, जैसे वे किसी सूदी इदारे में मुलाज़िम हैं, ऐसे हज़रात इस महीने में क्या करें? हमारे हज़रत डाक्टर अ़ब्दुल हई साहिब क़ुद्दसल्लाहू सिर्रहू अल्लाह तआ़ला उनके दरजे बुलन्द फ़रमाये, आमीन। हर आदमी के लिये रास्ता बता गये, वह फ़रमाते हैं कि: मैं ऐसे आदमी को जिसकी मुकम्मल आमदनी हराम है, यह मश्विरा देता हूं कि अगर हो सके तो रमज़ान में छुट्टी ले ले, और कम से कम इस महीने के ख़र्च के लिये जायज़ और हलाल ज़रिये से इन्तिज़ाम करले, कोई जायज़ आमदनी का ज़रिया इख़्तियार करले, और अगर यह भी न हो सके तो इस महीने के लिये ख़र्च के लिये किसी से क़र्ज़ ले ले, और यह सोचे कि मैं इस महीने में हलाल आमदनी से खाऊंगा, कम से कम इतना तो करले।

गुनाहों से बचना आसान है

बहर हाल! मैं यह कहना चाह रहा था कि लोग इस महीने में नवाफ़िल वग़ैरह का तो एहतिमाम बहुत करते हैं, लेकिन गुनाहों से बचने का एहतिमाम नहीं करते, हालांकि इस महीने में अल्लाह तआ़ला ने गुनाहों से बचने को आसान फ़रमा दिया है, चुनांचे इस महीने में शैतान को बेड़ियां पहना दी जाती हैं, और उनको क़ैद कर दिया जाता है, इसलिये कि शैतान की तरफ़ से गुनाह करने के वस्वसे और तक़ाज़े ख़त्म हो जाते हैं इसलिये गुनाहों से बचना आसान हो जाता है।

रोज़े में ग़ुस्से से परहेज़

तीसरी बात जिसका रोज़े से ख़ास तअ़ल्लुक़ है, वह है ग़ुस्से से परहेज़ और बचना, चुनांचे हदीस शरीफ़ में है कि हुज़ूरे अक़्दस

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह ग़मख़्वारी का महीना है, एक दूसरे से ग़मख़्वारी का महीना है, इसलिये गुस्सा और गुस्से की वजह से सरज़द होने वाले जुरमों और गुनाह, जैसे झगड़ा, मार पिटाई और तूतकार, इन चीज़ों से परहेज़ का एहतिमाम करें, हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यहां तक फ़रमा दिया कि:

"وان جهل على احدكم جاهل وهو صائم، فليقل انى صائم"

(ترمذی شریف)

यानी अगर कोई शख़्स तुमसे जहालत और लड़ाई की बात करे तो तुम कह दो कि मेरा रोज़ा है, मैं लड़ने के लिये तैयार नहीं, न ज़बान से लड़ने के लिये तैयार हूं, और न हाथ से, इस से परहेज़ करें, ये सब बुनियादी काम हैं।

रमज़ान में नफ़्ली इबादतें ज़्यादा करें

जहां तक इबादतों का तअ़ल्लुक़ है, तमाम मुसलमान जानते ही हैं कि रोज़ा रखना, तरावीह पढ़ना ज़रूरी है, और तिलावते कुरआन को चुंकि इस महीने में ख़ास मुनासबत है, चुनांचे हुज़ूर नबी—ए—करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम रमज़ान के महीने में हज़रत जिबरील अ़लै० के साथ पूरे कुरआन करीम का दौर फ़रमाया करते थे, इसलिये जितना ज़्यादा से ज़्यादा हो सके, इस महीने में तिलावत करें, और इसके अलावा चलते, फिरते, उठते, बैठते ज़बान पर अल्लाह का ज़िक्र करें, और तीसरा कलिमा: सुब्हानल्लाहि वल्हम्दु लिल्लाहि व ला इला—ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अक्बर, और दुरूद शरीफ़, और इस्तिग़फ़ार का चलते फिरते इस की कसरत की पाबन्दी करें, और नवाफ़िल की जितनी कसरत हो सके करें, और आम दिनों में रात को उठ कर तहज्जुद की नमाज़

पढ़ने का मौक़ा नहीं मिलता, लेकिन रमज़ान मुबारक में चूंकि इन्सान सहरी के लिये उठता है, थोड़ा पहले उठ जाये, और सहरी से पहले तहज्जुद पढ़ने का मामूल बनाले, और इस महीने में नमाज़ खुशू (पूरे ध्यान और तवज्जोह) के साथ और मर्द जमाअ़त के साथ नमाज़ पढ़ने का एहतिमाम कर लें, ये सब काम तो इस महीने में करने ही चाहियें, ये रमज़ानुल मुबारक की ख़ुसूसियात में से हैं, लेकिन इन सब चीज़ों से ज़्यादा अहम गुनाहों से बचने की फ़िक्र है, अल्लाह तआ़ला हम सबको इन बातों पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, और रमज़ानुल मुबारक के अन्वार व बर्कतों से सही तौर पर फ़ायदा उठाने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخردعوانا ان الحمد لله رب العالمين

औरतों की आज़ादी का फ़रेब

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْماً كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ.

"وَقَرْنَ فِيْ بُيُوْتِكُنَّ وَلَا تَبَرَّجْنَ تَبَرُّجَ الْجَاهِلِيَّةِ الْاُوْلٰى"

(سورة الاحزاب: ٣٣)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم، وصدق رسوله النبی الكريم، ونحن على ذالك من الشاهدين والشاكرين، والحمد لله رب العالمين.

आज का मौज़ू

मेरे भाइयो और बहनो! अस्सलामु अ़लैकुम व रह्मतुल्लाहि व बरकातुहू, आज की इस गुफ़्तगू का मौज़ू "पर्दे की अहमियत" मुक़र्रर किया गया है, इसमें यह बतलाना मक़्सूद है कि इस्लामी अहकामात की रू से, और कुरआन व सुन्नत की तालीमात की रोशनी में औ़रत के लिये "हिजाब" और "पर्दे" का क्या हुक्म है? और वह कितनी अहमियत रखता है।

इस मौज़ू को सही तौर पर समझने से पहले एक अहम नुक्ते की रतफ़ आपकी तवज्जोह दिलाना चाहूंगा, वह नुक्ता यह है कि औ़रत के लिये, "हिजाब" और "पर्दा" क्यों ज़रूरी है? और इसके शरई अहकाम क्या हैं, और यह बात उस वक़्त तक ठीक ठीक समझ में नहीं आ सकती जब तक यह मालूम न हो कि औ़रत के

इस दुनिया में आने और उसके पैदा किये जाने का बुनियादी मक्सद क्या है?

पैदाइश का मक्सद पैदा करने वाले से पूछो

आज मग़रिबी अफ़्कार की यलग़ार में यह प्रोपैगन्डा हर जगह किया जाता है कि इस्लाम के अन्दर औरत को नक़ाब और पर्दे में रख कर घोंट दिया गया है, उसको चार दीवारी के अन्दर क़ैद कर दिया गया है, लेकिन यह सारा प्रोपैगन्डा हक़ीक़त में इस बात का नतीजा है कि औरत की तख़्लीक़ का बुनियादी मक्सद मालूम नहीं, ज़ाहिर है कि अगर इस बात पर ईमान है कि इस कायनात को पैदा करने वाले अल्लाह तआ़ला हैं, इन्सान को पैदा करने वाले अल्लाह तआ़ला हैं, मर्द और औरत दोनों को पैदा करने वाले अल्लाह तआ़ला हैं, अगर ख़ुदा न ख़्वास्ता इस पर ईमान न हो तो फिर बात आगे नहीं चल सकती, और इस ज़माने में जो अल्लाह तआ़ला के वजूद पर ईमान नहीं रखते हैं, और ला दीनियत के मैदान में रोज़ बरोज़ आगे बढ़ते चले जा रहे हैं, उनको भी अल्लाह तआ़ला ऐसी निशानियां और अलामतें दिखा रहे हैं, जिससे वे भी अल्लाह तआ़ला के वजूद के क़ायल हो रहे हैं, अगर अल्लाह पर ईमान न हो तो फिर बात आगे चल ही नहीं सकती, लेकिन अगर अल्लाह पर ईमान है, और यह पता है कि अल्लाह ने इस कायनात को पैदा किया है, और मर्द को भी उसी ने पैदा किया, औरत को भी उसी ने पैदा किया है, अब पैदाइश का मक्सद भी उसी से पूछना चाहिये कि मर्द को क्यों पैदा किया? और औरत को क्यों पैदा किया, और दोनों की तख़्लीक़ का बुनियादी मक्सद क्या है?

मर्द और औरत दो मुख़्तलिफ़ सिन्फ़ें हैं

यह नारा आज बहुत ज़ोर व शोर से लगाया जाता है कि

औरतों को भी मर्दों के कन्धे से कन्धा मिला कर काम करना चाहिये, और मग़रिबी अफ़्कार ने यह प्रोपैगन्डा सारी दुनिया में कर दिया है, लेकिन यह नहीं देखा कि अगर मर्द और औरत दोनों एक ही जैसे काम के लिये पैदा हुये थे, तो फिर दोनों को जिस्मानी तौर पर अलग अलग पैदा करने की क्या ज़रूरत थी? मर्द का जिस्मानी निज़ाम और है, औरत का जिस्मानी निज़ाम और है। मर्द का मिज़ाज और है, और औरत का मिज़ाज और है। मर्द की सलाहियतें और हैं, औरत की सलाहियतें और हैं, अल्लाह तआला ने दोनों सिन्फ़ें इस तरह बनाई हैं कि दोनों की पैदाइशी बनावट और उसके निज़ाम में बुनियादी फ़र्क़ पाया जाता है, इसलिये यह कहना कि मर्द और औरत में किसी तरह का कोई फ़र्क़ नहीं है, यह ख़ुद फ़ित्रत के ख़िलाफ़ बग़ावत है, और मुशाहदे का इन्कार है, इसलिये कि यह तो आंखों से नज़र आ रहा है कि मर्द और औरत की साख़्त (बनावट) में फ़र्क़ है, नये फ़ैशन ने मर्द और औरत के इस फ़ितरी फ़र्क़ को मिटाने की कितनी कोशिशें कर देखीं, चुनांचे औरतों ने मर्दों जैसा लिबास पहनना शुरू कर दिया, और मर्दों ने औरतों जैसा लिबास पहनना शुरू कर दिया, औरतों ने मर्दों जैसे बाल रखने शुरू कर दिये, और मर्दों ने औरतों जैसे बाल रखने शुरू कर दिये, लेकिन इस बात से इन्कार अब भी नहीं किया जा सकता है कि मर्द और औरत दोनों का जिस्मानी निज़ाम अलग अलग है, दोनों मुख़्तलिफ़ हैं, दोनों के अन्दाज़े ज़िन्दगी मुख़्तलिफ़ हैं, और दोनों की सलाहियतें मख़्तलिफ़ हैं।

अल्लाह तआला से पूछने का ज़रिया पैग़म्बर हैं

लेकिन यह किससे मालूम किया जाये कि मर्द को क्यों पैदा किया गया? और औरत को क्यों पैदा किया गया? ज़ाहिर है कि

इसका जवाब यही होगा कि जिस ज़ात ने पैदा किया है, उससे पूछो कि आपने मर्द को किस मक़्सद के तहत पैदा किया है, और औरत को किस मक़्सद के तहत पैदा किया है? और उस से पूछने का ज़रिया हज़रात अंबिया अलै० और ख़ातिमुन– नबिय्यीन हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं।

इन्सानी ज़िन्दगी के दो शोबे

कुरआन करीम की तालीमात और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीमात से किसी अदना शुबह् के बग़ैर यह बात साबित होती है कि हकीकत में इन्सानी ज़िन्दगी दो मुख़्तलिफ़ शोबों पर बंटी हुई है, एक घर के अन्दर का शोबा है, और एक घर के बाहर का शोबा है, ये दोनों शोबे ऐसे हैं कि इन दोनों को साथ लिये बग़ैर एक मुतवाज़िन (सन्तुलित) और मोतदिल (दरमियानी) ज़िन्दगी नहीं गुज़ारी जा सकती, घर का इन्तिज़ाम भी ज़रूरी है, और घर के बाहर का इन्तिज़ाम यानी रोज़ी कमाने का इन्तिज़ाम भी ज़रूरी है, जब दोनों काम एक साथ अपनी अपनी जगह पर ठीक ठीक चलेंगे तब इन्सान की ज़िन्दगी दुरुस्त होगी, और इनमें से एक ख़त्म हो गया, या नाक़िस हो गया तो इससे इन्सान की ज़िन्दगी में तवाज़ुन ;ठंसंदबमद्ध ख़त्म हो जायेगा।

मर्द और औरत के दरमियान कामों की तक़्सीम

इन दानों शोबों में अल्लाह तआला ने यह तकसीम फ़रमाई कि मर्द के ज़िम्मे घर के बाहर के काम लगाये, जैसे रोज़ी कमाने का काम, और सियासी और समाजी काम वग़ैरह, ये सारे काम हकीकत में मर्द के ज़िम्मे आयद किये हैं, और घर के अन्दर का शोबा अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने औरतों के हवाले किया है, वे उसको संभालें, अगर अल्लाह

तआला की तरफ़ से यह हुक्म आ जाता कि औरत बाहर का इन्तिज़ाम करेगी, और मर्द घर का इन्तिज़ाम करेगा, तो भी कोई चूं व चरा कि मजाल नहीं थी, लेकिन अगर अक़्ल के ज़रिये इन्सान की फ़ितरी तख़्लीक़ का जायज़ा लें तो भी इसके सिवा और कोई इन्तिज़ाम नहीं हो सकता, इसलिये कि मर्द और औरत के दरमियान अगर तक़ाबुल किया जाये तो ज़ाहिर होगा कि जिस्मानी कुव्वत जितनी मर्द में है, उतनी औरत में नहीं, और कोई शख़्स भी इससे इन्कार नहीं कर सकता कि अल्लाह तआला ने मर्द में औरत के ब–निस्बत जिस्मानी कुव्वत ज़्यादा रखी है, और घर से बाहर के काम कुव्वत का तक़ाज़ा करते हैं, मेहनत का तक़ाज़ा करते हैं, वे काम कुव्वत और मेहनत के बग़ैर अन्जाम नहीं दिये जा सकते, इसलिये इस फ़ितरी तख़्लीक़ का भी तक़ाज़ा यही था, कि घर के बाहर का काम मर्द अन्जाम दे, और घर के अन्दर के काम औरत के सुपुर्द हों।

हज़रत अ़ली रज़ि० और हज़रत फ़ातिमा रज़ि० के दरमियान कामों की तक़्सीम

हज़रत अ़ली रज़ि० और हज़रत फ़ातिमा रज़ि० ने भी अपने दरमियान यह तक़सीमे कार फ़रमा रखी थी कि हज़रत अ़ली रज़ि० घर के बाहर के काम अन्जाम देते, और हज़रत फ़ातिमा रज़ि० घर के अन्दर का इन्तिज़ाम संभालतीं, चुनांचे घर की झाड़ू देतीं, चक्की चला कर आटा पीसतीं, पानी भरतीं, खाना पकातीं।

औरत घर का इन्तिज़ाम संभाले

शुरू में जो आयत मैंने आपके सामने तिलावत की, उसमें अल्लाह तबारक व तआला ने आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों को बराहे रास्त ख़िताब फ़रमाया और उन

के वासते से सारी मुसलमान ख़्वातीन (औरतों) से ख़िताब फ़रमाया, वह यह है कि:

"وَقَرْنَ فِىْ بُيُوْتِكُنَّ"

यानी तुम अपने घरों में क़रार से रहो, इसमें सिर्फ़ इतनी बात नहीं कि औरत को ज़रूरत के बग़ैर घर से बाहर नहीं जाना चाहिये, बल्कि इस आयत में एक बुनियादी हक़ीक़त की तरफ़ इशारा फ़रमाया गया है, वह यह कि हमने औरत को इसलिये पैदा किया है कि वह घर में क़रार से रह कर घर के इन्तिज़ाम को संभाले।

औरत को किस लालच पर घर से बाहर निकाला गया?

लेकिन जिस माहौल में मुआशरे की पाकीज़गी कोई क़ीमत ही न रखती हो, और जहां पाक दामनी व इस्मत के बजाये अख़्लाक़ी बद हाली और बेहयाई को असल मक़सद समझा जाता हो, ज़ाहिर है कि वहां इस काम की तक़सीम और पर्दा व हया को न सिर्फ़ ग़ैर ज़रूरी, बल्कि रास्ते की रुकावट समझा जायेगा, चुनांचे जब मग़रिब में तमाम अख़्लाक़ी क़दरों से आज़ादी की हवा चली तो मर्द ने औरत के घर में रहने को अपने लिये दोहरी मुसीबत समझा, एक तरफ़ तो उसकी हवसनाक तबीयत औरत की कोई ज़िम्मेदारी क़ुबूल किये बग़ैर क़दम क़दम पर उससे फ़ायदा उठाना चाहती थी, और दूसरी तरफ़ वह अपनी क़ानूनी बीवी की आर्थिक ज़िम्मेदारी को भी एक बोझ तसव्वुर करता था, चुनांचे उसने दोनों मुश्किलात का जो अैयाराना हल निकाला, उसका ख़ूबसूरत और मासूम नाम "तहरीके आज़ादी–ए–निसवां" (औरतों की आज़ादी की तहरीक) है। औरत को यह पढ़ाया गया है कि तुम अब तक घर की चार

दीवारी में क़ैद रही हो, अब आज़ादी का दौर है, और तुम्हें इस क़ैद से बाहर आकर मर्दों के शाना बशाना (कन्धे से कन्धा मिला कर) ज़िन्दगी के हर काम में हिस्सा लेना चाहिये, अब तक तुम्हें हुकूमत व सियासत के ऐवानों से भी महरूम रखा गया है, अब तुम बाहर आकर ज़िन्दगी की जद्दो जहद में बराबर हिस्सा लो तो दुनिया भर के एज़ाज़ात और ऊंचे ऊंचे ओहदे तुम्हारा इन्तिज़ार कर रहे हैं।

औरत बे-चारी इन दिल फ़रेब नारों से मुतास्सिर होकर घर से बाहर आ गयी, और प्रोपैगन्डे के तमाम वसायल के ज़रिये शोर मचा मचा कर इसे यह यक़ीन दिला दिया गया कि इसे सदियों की ग़ुलामी के बाद आज आज़ादी मिली है, और अब इसके रंज व मुसीबत का ख़ात्मा हो गया है, इन दिल फ़रेब नारों की आड़ में औरत को घसीट कर सड़कों पर लाया गया, इसे दफ़्तरों में कलर्की अता की गयी, इसे अजनबी मर्दों के पराइवेट सिक्रेट्री का "ओहदा" बख़्शा गया, इसे "स्टेनू टाइपिस्ट" बनने का "ऐज़ाज़" दिया गया, इसे तिजारत चमकाने के लिये "सेल्ज़ गर्ल" और "माडल गर्ल" बनने का शर्फ़ बख़्शा गया, और इसके एक एक उज़्व (अंग) को बर सरे बाज़ार रुस्वा करके ग्राहकों को दावत दी गयी कि आओ, और हमसे माल ख़रीदो, यहां तक कि वह औरत जिसके सर पर दीने फ़ित्रत ने इज़्ज़त व आबरू का ताज रखा था, और जिसके गले में पाक दामनी व इस्मत के हार डाले थे, तिजरती इदारों के लिये एक शो पीस और मर्द की थकन दूर करने के लिये एक तफ़्रीह का सामान बन कर रह गयी।

आज हर घटिया काम औरत के सुपुर्द है

नाम यह लिया गया कि औरत को "आज़ादी" देकर सियासत

व हुकूमत के ऐवान उसके लिये खोले जा रहे हैं, लेकिन ज़रा जायज़ा लेकर तो देखिये कि इस मुद्दत में ख़ुद मग़रिबी मुल्कों की कितनी औरतें सदर, वज़ीरे आज़म या वज़ीर बन गयीं? कितनी ख़्वातीन को जज बनाया गया? कितनी औरतों को दूसरे बुलन्द ओहदों का एज़ाज़ नसीब हुआ? आदाद व शुमार जमा किये जायें तो, ऐसी औरतों का तनासुब बमुश्किल चन्द फ़ी लाख होगा, इन गिनी चुनी ख़्वातीन को कुछ ओहदे देने के नाम पर बाक़ी लाखों औरतों को जिस बेदर्दी के साथ सड़कों और बाज़ारों में घसीट लाया गया है, वह "आज़ादी-ए-निस्वां" (औरतों की आज़ादी) के धोखे का तक्लीफ़ देने वाला पहलू है, आज यूरप और अमरीका में जाकर देखिये तो दुनिया भर के तमाम निचले दर्जे के काम औरतों के सुपुर्द हैं, रेस्तुरानों में कोई मर्द वेटर बहुत कम ही कहीं नज़र आयेगा, वर्ना यह ख़िदमात तमाम तर औरतें अन्जाम दे रही हैं, होटलों में मुसाफ़िरों के कमरे साफ़ करने, उनके बिस्तर की चादरें बदलने और "रूम अटेन्डेन्ट" की ख़िदमात तमाम औरतों के सुपुर्द हैं, दुकानों पर माल बेचने के लिये मर्द कहीं कहीं नज़र आयेंगे, यह काम भी औरतों ही से लिया जा रहा है, दफ़्तरों के इस्तिक़बालियों पर आम तौर पर औरतें ही तैनात हैं, और बेरे से लेकर कलर्क तक के तमाम "मनासिब" (ओहदे) ज़्यादा तर इसी सिन्फ़े नाज़ुक के हिस्से में आये हैं जिसे "घर की क़ैद से आज़ादी" अता की गयी है।

नई तहज़ीब का अजीब फ़ल्सफ़ा

प्रोपैगन्डे की कुव्वतों ने यह अजीब व ग़रीब फ़ल्सफ़ा ज़ेहनों पर मुसल्लत कर दिया है कि औरत अगर अपने घर में अपने और अपने शौहर, अपने मां बाप, बहन भाईयों और औलाद के लिये घर

का इन्तिज़ाम करे तो यह कैद और ज़िल्लत है, लेकिन वही औरत अजनबी मर्दों के लिये खाना पकाये, उनके कमरों की सफ़ाई करे, होटलों और जहाज़ों में उनकी मेज़बानी करे, दुकानों पर अपनी मुस्कुराहटों से ग्राहकों को मुतवज्जह करे और दफ़्तरों में अपने अफ़सरों के नाज़ उठाए तो यह "आज़ादी" और "ऐजाज़" है! इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

फिर सितम ज़रीफ़ी की इन्तिहा यह है कि औरत रोज़गार के लिये आठ आठ घन्टे की यह सख़्त और ज़िल्लत भरी ड्यूटियां अदा करने के बावजूद अपने घर के काम धन्धों से अब भी फ़ारिग़ नहीं हुई, घर की तमाम ख़िदमात आज भी पहले की तरह उसी के ज़िम्मे हैं, और यूरप और अमरीका में अक्सरियत उन औरतों की है जिनको आठ घन्टे की ड्यूटी देने के बाद अपने घर पहुंच कर खाना पकाने, बर्तन धोने और घर की सफ़ाई का काम अब भी करना पड़ता है।

क्या आधी आबादी बेकार है?

औरतों को घर से बाहर निकालने के लिये आज कल एक चलता हुआ इस्तिदलाल यह पेश किया जाता है कि कौमी तामीर व तरक्क़ी के दौर में हम अपनी निस्फ़ आबादी (यानी औरतों) को बेकार बनाकर नहीं डाल सकते, यह बात इस शान से कही जाती है कि गोया मुल्क के तमाम मर्दों को किसी न किसी काम पर लगा कर मर्दों की हद तक "मुकम्मल रोज़गार" की मन्ज़िल हासिल कर ली गयी है, अब न सिर्फ़ यह कि कोई रोज़गार नहीं रहा, बल्कि हज़ारों काम "मैन पॉवर" के इन्तिज़ार में हैं।

हालांकि यह बात ऐसे मुल्क में कही जा रही है जहां आला सलाहियतों के हामिल मर्द सड़कों पर जूतियां चटख़ाते फिर रहे हैं,

जहां कोई चपरासी या ड्राईवर की आसामी निकलती है तो उसके लिये दस्यों ग्रेजूऐट अपनी दरख़्वास्तें पेश कर देते हैं और कोई कलर्क की जगह निकलती है तो उसके लिये दस्यों मास्टर और डाक्टर तक की डिग्रियां रखने वाले अपनी दरख़्वास्तें पेश कर देते हैं, पहले मर्दों की "आधी आबादी" ही को मुल्की तामीर व तरक़्क़ी के काम में पूरे तौर पर लगा लीजिये, उसके बाद बाक़ी आधी आबादी के बारे में सोचिये कि वह बेकार है या नहीं?

आज फ़ैमली सिस्टम तबाह हो चुका है

अल्लाह तआ़ला ने औरत को घरों की ज़िम्मेदार बनाया था, ताकि वह फ़ैमली सिस्टम दुरुस्त रख सके, लेकिन जब वह घर से बाहर आ गयी तो नतीजा यह हुआ की बाप भी बाहर और मां भी बाहर, और बच्चे स्कूल में, या नर्सरी में, और घर पर ताला पड़ गया, अब फ़ैमली सिस्टम तबाह और बर्बाद होकर रह गया, औरत को तो इसलिये बनाया था कि जब वह घर में रहेगी तो घर का इन्तिज़ाम भी करेगी, और बच्चे उसकी गोद में तर्बियत पायेंगे, मां की गोद बच्चे की सब से पहली तर्बियत–गाह होती है, वहीं से वे अख़्लाक़ सीखते हैं, वहीं से वे किरदार सीखते हैं, वहीं से ज़िन्दगी गुज़ारने के सही तरीक़े सीखते हैं, लेकिन आज पश्चिमी समाज में बच्चों को मां और बाप की शफ़्क़त मयस्सर नहीं, और फ़ैमली सिस्टम तबाह होकर रह गया है, और जब औरत दूसरी जगह काम कर रही है, और मर्द दूसरी जगह काम कर रहा है, और दोनों के दरमियान दिन भर में कोई राबता (संपर्क) नहीं है, और दोनों जगह पर आज़ाद सोसाईटी का माहौल है, तो बहुत सी बार उन दोनों का आपस का रिश्ता कमज़ोर पड़ जाता है, और टूटने लगता है, और उसकी जगह ना–जायज़ रिश्ते पैदा होने शुरू हो जाते हैं,

और इसकी वजह से तलाक़ तक नौबत पहुंचती है, घर बर्बाद हो जाता है।

औरत के बारे में "गोरबा चौफ़" का नज़रिया

अगर ये बातें सिर्फ़ मैं कहता तो कोई कह सकता था कि ये सब बातें आप तअस्सुब की बिना पर कह रहे हैं, लेकिन अब से चन्द साल पहले सोवियत यूनियन के आख़री सदर "मीख़ाईल गोरबा चौफ़" ने एक किताब लिखी है, "प्रोसट्राइका" आज यह किताब सारी दुनिया में मशहूर और छपी हुई मौजूद है, इस किताब में गोरबा चौफ़ ने "औरतों के बारे में" (Status of Women) के नाम से एक बाब कायम किया है, उसमें उसने साफ़ और स्पष्ट लफ़्ज़ों में यह बात लिखी है कि:

"हमारी पश्चिमी सोसाईटी में औरत को घर से बाहर निकाला गया, और उसको घर से बाहर निकालने के नतीजे में बेशक हमने कुछ मआशी (आर्थिक) फ़ायदे हासिल किये, और पैदावार में कुछ इज़ाफ़ा हुआ, इसलिये कि मर्द भी काम कर रहे हैं और औरतें भी काम कर रही हैं, लेकिन पैदावार के ज़्यादा होने के बावजूद इसका लाज़मी नतीजा यह हुआ कि हमारा फ़ैमली सिस्टम ख़राब हो गया, और उस फ़ैमली सिस्टम के ख़राब होने के नतीजे में हमें जो नुक़सानात उठाना पड़े हैं, वे नुक़सानात उन फ़ायदों से ज़्यादा हैं जो प्रोडक्शन के इज़ाफ़े के नतीजे में हासिल हुए, इसलिये मैं अपने मुल्क में "प्रोसट्राइका" के नाम से एक तहरीक शुरू कर रहा हूं, इसमें मेरा एक बहुत बुनियादी मक़्सद यह है कि वह औरत जो घर से बाहर निकल चुकी है, उसको वापस घर में कैसे लाया जाये? इसके तरीक़े सोचने पड़ेंगे, वरना जिस तरह हमारा फ़ैमली सिस्टम तबाह हो चुका है, इसी तरह हमारी पूरी क़ौम तबाह हो

जायेगी।"

ये अल्फ़ाज़ मीख़ाईल गोरबा चौफ़ ने अपनी किताब में लिखे हैं, यह किताब आज भी बाज़ार में मिलती है, जिसका जी चाहे देख ले।

रुपया पैसा अपने आप में कोई चीज़ नहीं

इस फ़ैमली सिस्टम की तबाह–कारी की बुनियादी वजह यह है कि हमने औरत की पैदायश का मक़्सद नहीं जाना कि औरत को क्यों पैदा किया गया है? अल्लाह तआला ने औरत को इसलिये पैदा किया था कि वह घर के निज़ाम और फ़ैमली सिस्टम को दुरुस्त करे, आजके मआशी दौर की सारी कोशिशों का हासिल यह है कि रुपया पैसा ज़्यादा हो जाये, लेकिन यह तो बताओ कि क्या यह रुपया पैसा अपनी ज़ात से फ़ायदा पहुंचा सकता है? अगर आपको भूख लग रही हो, और आपके पास पैसे मौजूद हों, तो आप इसको खाकर भूख मिटा लेंगे? पैसा अपने आप में कोई चीज़ नहीं, जब तक उसके ज़रिये ज़रूरत मुहैया करके आदमी सुकून हासिल न करे।

आज का नफ़े वाला कारोबार

पिछले दिनों एक रिसाले में एक सर्वे की तफ़्सील आई है, उस सर्वे का मक़्सद यह था कि यह देखा जाये कि आज दुनिया में सब से ज़्यादा नफ़ा बख़्श कारोबार कौन सा है? चुनांचे उस सर्वे की रिपोर्ट यह लिखी है कि आज पूरी दुनिया में सब से ज़्यादा नफ़ा बख़्श कारोबार "मॉडल गर्ल" का कारोबार है, इसलिये कि एक "मॉडल गर्ल" मसनूआत (उत्पादों) के इश्तिहारों पर अपनी नंगी तसवीर देने के लिए सिर्फ़ एक दिन के २५ मिलियन डालर वसूल करती है, और उस एक दिन में वह ताजिर और सर्मायाकार

अपनी मर्ज़ी से जितनी तसवीरें जिस अन्दाज़ से और जिस शक्ल से उतारना चाहता है, उतारता है, और उसके ज़रिये वह अपनी मसनूआत को बाज़ार में फैलाता है, आज यह औरत एक बिकाऊ माल बन चुका है, और सर्मायादार उसको जिस तरह चाहता है, इस्तेमाल करता है, वजह यह है कि औरत ने घर से बाहर निकल कर अपनी क़द्र व इज़्ज़त और अपना मर्तबा खो दिया और उसका यह नतीजा निकला।

एक यहूदी का इब्रत-नाक वाक़िआ

एक बुज़ुर्ग ने एक वाक़िआ लिखा है कि पहले ज़माने में एक यहूदी बहुत बड़ा मालदार और सर्मायादार था, उस ज़माने में लोग अपनी दौलत ज़मीन के नीचे खज़ाने बना कर उसमें रखा करते थे, उस यहूदी ने ख़ज़ाने में सोने चांदी के अंबार और ढ़ेर जमा किये हुए थे, जैसा कि क़ारून के बारे में कुरआन करीम में है कि उसने बहुत बड़ा ख़ज़ाना जमा किया हुआ था, एक मर्तबा वह यहूदी अपने ख़ज़ानों का ख़ुफ़िया मुआयना करने के लिये गया, और जब अन्दर गया तो चौकीदार को इत्तिला नहीं की, जिसको वहां ख़ज़ाने पर उसने मुक़र्रर किया था, ताकि यह देखे कि वह चौकीदार कहीं ख़ियानत तो नहीं कर रहा है, और उस ख़ज़ाने के दर्वाज़े का सिस्टम ऐसा था कि वह अन्दर से बन्द तो होता था लेकिन अन्दर से खुल नहीं सकता था, सिर्फ़ बाहर से खुल सकता था, अब उसने बे-ख़्याली में दर्वाज़ा अन्दर से बन्द कर लिया, अब खोलने का कोई रासता नहीं था, बाहर जो चौकीदार था वह यह समझ रहा था कि ख़ज़ाना बन्द है, और उसके ज़ेहन में यह तसव्वुर भी नहीं था कि ख़ज़ाने का मालिक अन्दर है, अब यह मालिक अन्दर जाकर ख़ज़ाने की तफ़्तीश करता रहा और जब देख भाल कर तफ़्तीश से

फ़ारिग़ होकर वापस बाहर निकलना चाहा तो बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं था, अब वहां पर क़ैद है, भूख लग रही है और ख़ज़ाना सारा मौजूद है, लेकिन भूख नहीं मिटा सकता, प्यास लग रही है और सारा ख़ज़ाना मौजूद है लेकिन प्यास नहीं बुझा सकता, रात को नींद आ रही है, और ख़ज़ाना सारा मौजूद है लेकिन बिस्तर मुहैया नहीं कर कसता, यहां तक कि जितने दिन बग़ैर खाये पीये ज़िन्दा रह सकता था, ज़िन्दा रहा, और फिर उसी ख़ज़ाने में उसका इन्तिक़ाल हो गया।

तो यह रुपया पैसा अपनी ज़ात में इन्सान को नफ़ा पहुंचाने वाली चीज़ नहीं, जब तक कि निज़ाम दुरुस्त न हो, और जब तक रास्ता दुरुस्त न हो।

गिन्ती में अगरचे दौलत ज़्यादा हो जायेगी

आज दुनिया यह कहती है कि अगर औरत को घर से बाहर निकालेंगे तो हमें वर्कर मुहैया होंगे, और उसके नतीजे में प्रोडक्शन ज़्यादा होगी और दौलत ज़्यादा होगी, तो यह बात ठीक है कि गिन्ती में तो दौलत ज़्यादा हो जायेगी, लेकिन जब तुम्हारा फ़ैमली सिस्टम तबाह हो गया और जिसके नतीजे में तुम्हारी क़ौमी तरक़्क़ी का रास्ता बन्द हो गया, यह कितना बड़ा नुक़सान हो गया।

दौलत कमाने का मक़सद क्या है?

इसलिये क़ुरआन करीम में जो आयत "وَقَرْنَ فِي بُيُوتِكُنَّ" है इस आयत में अल्लाह तआला ने इशारा फ़रमाया है कि हमने औरत को इसलिये पैदा किया है कि वह ज़िन्दगी की यह अहम तरीन ख़िदमत अन्जाम देकर अपने फ़ैमली सिस्टम को दुरुस्त करे, और अपने घर को संभाले, इसके तो कोई मायने नहीं हैं कि घर का घर उजड़ा पड़ा है, और सारी तवज्जोह बाहर के कामों में सर्फ़

(ख़र्च) हो रही है, बाहर रह कर इन्सान जो कुछ कमाता है वह तो इसलिये कमाता है कि घर के अन्दर आकर इन्सान सुकून हासिल करे, लेकिन घर का सुकून तबाह है, तो उसने जितनी कुछ कमाई की हो, वह कमाई बेकार है, उसका कोई फ़ायदा नहीं है।

बच्चे को मां के प्यार की ज़रूरत है

इसलिये घर के इन्तिज़ाम को दुरुस्त करने के लिये और बच्चों की सही तर्बीयत के लिये और बच्चों को सही फ़िक्र पर ढ़ालने के लिये अल्लाह तआ़ला ने यह फ़राईज़ औरत के सुपुर्द किये हैं, यही वजह है कि बावजूद यह कि बच्चा मां और बाप दोनों का होता है, लेकिन जितना प्यार और जितनी मामता अल्लाह तआ़ला ने मां के दिल में रखी, बाप के दिल में उतनी नहीं रखी, और बच्चे को जितना प्यार अपनी मां से होता है, अपने बाप से उतना नहीं होता, और जब बच्चे को कोई तक्लीफ़ पहुंचती है तो वह चाहे किसी भी जगह पर हो, वह फ़ौरन मां को पुकारेगा, इसलिये कि वह जानता है कि मां मेरी मुसीबत का इलाज कर सकती है, और इसी मुहब्बत के रिश्ते से बच्चे की तर्बियत होती है, और जो काम मां अन्जाम दे सकती है, वह बाप अन्जाम नहीं दे सकता, अगर कोई बाप चाहे कि मां की मदद के बग़ैर बच्चे की परवरिश ख़ुद कर लूं, तो बाप के लिये यह बात मुम्किन नहीं, तजुर्बा करके देख लें, आज कल लोग बच्चों को नर्सरियों के अन्दर पालते हैं, याद रखो! कोई भी नर्सरी बच्चे को मां की मम्ता नहीं दे सकती, बच्चे को किसी पोलट्री फ़ार्म क़िस्म के इदारे की ज़रूरत नहीं, बल्कि बच्चे को मां की मम्ता और उसकी शफ़्क़त की ज़रूरत है, और मां की मम्ता और उसकी शफ़्क़त को हासिल करने के लिये यह लाज़िम है कि औरत घर का निज़ाम संभाले, अगर कोई

औरत घर का निज़ाम नहीं संभाल रही है तो वह फ़ित्रत से बग़ावत कर रही है और फ़ित्रत से बग़ावत का नतीजा वही होता है जे इस वक़्त आंखें देख रही हैं।

बड़े कारनामों की बुनियाद "घर" है

कुरआन करीम ने चौदह सौ साल पहले फ़रमाया था कि "وَقَرْنَ فِي بُيُوتِكُنَّ" यानी अपने घरों में क़रार से रहो, यह घर तुम्हारी दुनिया व आख़िरत है, यह घर तुम्हारी ज़िन्दगी है, और यह ख़्याल मत करो कि मर्द घर से बाहर निकल कर बड़े बड़े काम अन्जाम दे रहा है, इसलिये मैं भी बाहर निकल कर बड़े बड़े काम अन्जाम दूं......अरे यह तो सोचो कि सारे बड़े कारनामें की बुनियाद घर है, अगर तुम ने औलाद की सही तर्बियत कर दी, और उनके दिलों में ईमान पैदा कर दिया, और उनके अन्दर तक़वा और नेक अ़मल पैदा कर लिया तो यक़ीन रखो कि अगर मर्द बाहर निकल कर जितने बड़े बड़े कारनामे अन्जाम दे रहा है, उन तमाम कारनों पर तुम्हारा यह कारनामा फ़ौक़ियत रखेगा कि तुमने एक बच्चे की तर्बीयत दीन के मुताबिक़ कर दी।

पश्चिम के उल्टे प्रोपैगन्डे ने और पश्चिम की अन्धी तक़्लीद ने हमारे मुआ़शरे (समाज) की औ़रतों से औलाद की दीनी तर्बियत की फ़िक्र को रफ़्ता रफ़्ता ख़त्म करना शुरू कर दिया है और जो ख़्वातीन अपने घरों में बैठी हैं, वे भी कभी कभी यह सोचने लगती हैं कि हक़ीक़त में ये लोग दुरुस्त कहते हैं, हम घर की चार दीवारी में मुक़ैयद और बन्द हो गये हैं, और जो ख़्वातीन (औ़रतों) घरों से बाहर निकल रही हैं शायद ये हमसे ज़्यादा तरक़्क़ी याफ़्ता हैं, लेकिन ख़ूब समझ लें कि औ़रत जो ख़िदमत अपने घर में बैठ कर अन्जाम दे रही है, याद रखो उसका कोई बदल नहीं है, और

वह ख़िदमत घर से बाहर निकल कर, बाज़ारों में जाकर, दुकानों पर बैठ कर नहीं अन्जाम दी जा सकती, जो घर में बैठ कर अन्जाम दी जा सकती है।

सुकून व राहत पर्दे के अन्दर है

और ख़्वातीन यह न समझें कि यह पर्दा हमारे लिये दुश्वारी का सबब है, बल्कि औरत की फ़ित्रत में पर्दा दाख़िल है, और "औरत" के मायने "छुपाने वाली चीज़" के हैं, और पर्दा औरत की फ़ित्रत में दाख़िल है, अगर फ़ित्रत ख़राब हो जाये तो इसका तो कोई इलाज नहीं, लेकिन जो सुकून और राहत पर्दे की हालत में होगी, वह सुकून बे पर्दगी और खुल्लम खुल्ला और अलानिया रहने की हालत में नहीं होगी, इसलिये पर्दे का तहफ़्फ़ुज़ हया का एक लाज़मी हिस्सा है।

आज सरों के बालों की हालत

ऐसा मालूम होता है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की निगाहें आजके हालात देख रही थीं, आपने फ़रमाया कि कियामत के क़रीब ऐसी औरतें होंगी उनके सर के बाल ऐसे होंगे कि जैसे कमज़ोर ऊंट के कोहान, ऊंट के कोहान की तरह बाल बनाने का हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में तसव्वुर भी नहीं आ सकता था, आज देख लें कि औरतें ऊंटों के कोहान की तरह बाल बना रही हैं।

लिबास के अन्दर भी बे-लिबास

और फ़रमाया कि वे औरतें ज़ाहिर में लिबास पहनी हुई होंगी, लेकिन वे लिबास ऐसे हैं जिनसे सत्र का मक़्सद हासिल नहीं होता, इसलिये कि वह लिबास इतना बारीक है, या वह लिबास इतना चुस्त है कि उसकी वजह से जिस्म के तमाम नशेब व फ़राज़

(उतार चढ़ाव) ज़ाहिर हो जाते हैं, और यह सब हया के ख़त्म होने का नतीजा है, आज से पहले इसका तसव्वुर और ख़्याल भी नहीं आ सकता था, कि वह ऐसा लिबास पहनेगी, इसलिये कि उसके दिल में हया थी, और उसकी तबीयत ऐसी थी कि वह ऐसा लिबास पहनना पसन्द नहीं करती थी, लेकिन आज सीना खुला हुआ है, गला खुला हुआ है, बाज़ू खुले हैं, यह कैसा लिबास हुआ? लिबास तो सत्र छुपाने के लिये था, जो औरत को उसकी असल फ़ित्रत की तरफ़ लौटाने के लिये था, वह लिबास सत्र छुपाने का काम देने के बजाये जिस्म को और ज़्यादा नुमायां करने का काम अन्जाम दे रहा है।

मख़्लूत तक़रीबात का सैलाब

शादी विवाह की तक़रीबात में बे-हयाई के जो मन्ज़र उन घरानों में भी नज़र आने लगे हैं जो अपने आपको दीनदार कहते हैं, जिनके मर्द मस्जिद में सफ़े अव्वल में बैठ कर नमाज़ पढ़ते हैं, उनके घरानों की शादी विवाह की तक़रीबात में जाकर देखो कि क्या हो रहा है, एक ज़माना वह था जिसमें इस बात का ख़्याल और तसव्वुर नहीं आ सकता था कि शादी विवाह की तक़रीबात में मर्दों और औरतों का मख़्लूत (एक साथ मिला जुला) इज्तिमा होगा, लेकिन अब तो मर्द व औरत की मख़्लूत दावतों का एक सैलाब है, और औरतें बन संवर कर, सिंघार पिटार करके, ज़ेब व ज़ीनत से आरास्ता होकर उन मख़्लूत दावतों में शरीक होती हैं, न पर्दे का कोई तसव्वुर है, न हया का कोई ख़्याल है।

यह बद-अम्नी क्यों न हो

और फिर उन तक़रीबात की वीडियो फ़िल्में बन रही हैं, ताकि जो कोई उस तक़रीब में शरीक न हो सका, और उससे लुत्फ़

अन्दोज़ न हो सका, उसके लिये इस नज़ारे से लुत्फ़ अन्दोज़ होने के लिये वीडियो फ़िल्म तैयार है, उसके ज़रिये वह उसका नज़ारा कर सकता है, यह सब कुछ हो रहा है, लेकिन फिर भी दीनदार, फिर भी नमाज़ी परहेज़गार, यह सब कुछ हो रहा है, लेकिन कान पर जूं नहीं रेंगती, और माथे पर शिकन नहीं आती, और दिल में उसको ख़त्म करने का कोई दाईया (जज़्बा) पैदा नहीं होता, बताइये क्या फिर भी यह फ़ितने न आयें? क्या फिर भी बद–अमनी और बे–सुकूनी पैदा न हो? और आज कल हर एक की जान व माल और इज़्ज़त व आबरू ख़तरे में है, यह सब क्यों न हो, यह तो अल्लाह तआला की तरफ़ से ग़नीमत है और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बरकत है कि ऐसा क़हर हम पर नाज़िल नहीं होता कि हम सब हलाक हो जायें, वर्ना हमारे आमाल तो सारे ऐसे हैं कि एक क़हर और अज़ाब के ज़रिये सब को हलाक कर दिया जाता।

हम अपनी औलाद को जहन्नम के गढ़े में धकेल रहे हैं

और यह सब घर के बड़ों की ग़फ़लत और बेहिसी का नतीजा है कि उनके दिल से एहसास ख़त्म हो गया, कोई कहने वाला और कोई टोकने वाला नहीं रहा, बच्चे जहन्नम की तरफ़ दौड़े हुए जा रहे हैं, कोई उनका हाथ पकड़ कर रोकने वाला नहीं है, किसी बाप के दिल में यह ख़्याल नहीं आता कि हम अपनी औलाद को किस गढ़े में धकेल रहे हैं, और दिन रात सब कुछ अपनी आंखों से देख रहे हैं, अब अगर कोई उनको समझाता है तो उन बड़ों का यह जवाब होता है कि अरे भाई! यह तो नौजवान हैं, लगे रहने दो, इनके कामों में रुकावट न डालो, इसी तरह इन औलाद के सामने

हथियार डाल डाल कर नतीजा यहां तक पहुंच गया।

अभी पानी सर से नहीं गुज़रा

अब भी वक़्त हाथ से नहीं गया, अब भी अगर घर के बड़े और घर के ज़िम्मेदार इस बात का तहिय्या कर लें कि यह चन्द काम नहीं करने देंगे। हमारे घर में मर्द व औरत का मख़्लूत इज्तिमा नहीं होगा, हमारे घर में कोई तक़रीब औरतों की बे पर्दगी के साथ नहीं होगी, वीडियो फ़िल्म नहीं बनेगी, अगर घर के बड़े इन बातें का तहिय्या कर लें, तो अब भी इस सैलाब पर बन्द बांधा जा सकता है, ऐसा नहीं है कि यह सैलाब क़ाबू से बाहर हो गया हो, लेकिन उस वक़्त से डरो कि जब कोई कहने वाला ख़ैर–ख़्वाह इस सूरत को तब्दील करने की कोशिश करेगा, और नहीं कर सकेगा, कम से कम वे घराने जो अपने आपको दीनदार कहते हैं, जो दीन और इस्लाम के नाम लेवा हैं, और बुज़ुर्गों से तअल्लुक़ रखने वाले हैं, वे तो कम से कम इस बात का तहिय्या कर लें कि हम यह मख़्लूत इज्तिमा नहीं होने देंगे।

ऐसे इज्तिमाआत का बायकाट कर दो

हमारे बुज़ुर्गों ने बायकाट वग़ैरह के तरीक़े नहीं सिखाये, लेकिन याद रखो! एक मरहला ऐसा आता है जहां इन्सान को यह फ़ैसला करना पड़ता है कि या तो हमारी यह बात मानी जायेगी, वरना इस तक़रीब में हमारी शिर्कत नहीं होगी, अगर शादी की तक़रीबात हो रही हैं, और मख़्लूत इज्तिमाआत हो रहे हैं, अब अगर उस दावत में नहीं जाते तो शिकायत हो जायेगी, कि आप इस मख़्लूत दावत में शरीक नहीं हुए, अरे यह तो सोचो कि उनकी शिकायत की तो आपको परवाह है, लेकिन उनको आपकी शिकायत की परवाह नहीं, तुम पर्दा नशीन ख़्वातीन हो, और वह तुमको

बुलाना चाहते हैं तो फिर उन्हों ने तुम्हारे लिये पर्दे का इन्तिज़ाम क्यों नहीं किया? जब उन्हों ने तुम्हारा इतना ख़्याल नहीं किया, तो फिर तुम पर भी उनका ख़्याल करना वाजिब नहीं है, उनसे साफ़ कह दो कि हम ऐसी तक़रीब में शरीक नहीं होंगे, जब तक कुछ ख़्वातीन डट कर यह फ़ैसला नहीं करेंगी, यक़ीन रखो कि उस वक़्त तक यह सैलाब बन्द नहीं होगा, कब तक हथियार डालते जाओगे, कब तक उनके आगे सिपर डालते जाओगे? यह सैलाब कहां तक पहुंचेगा?

दुनिया वालों का कब तक ख़्याल करोगे

हमारे बुज़ुर्ग हज़रत मौलाना मुहम्मद इदरीस साहिब कांधलवी रह० अल्लाह उनके दरजात बुलन्द फ़रमाये, आमीन, उस दौर के अन्दर अल्लाह तआला ने जन्नती बुज़ुर्ग पैदा फ़रमाये थे, उनके घर की बैठक में फ़र्शी नशिस्त थी; घर की ख़्वातीन के दिल में यह ख़्याल आया कि अब ज़माना बदल गया है, फ़र्शी नशिस्त का ज़माना नहीं रहा, इसलिये आकर मौलाना से कहा कि अब आप यह फ़र्शी नशिस्त ख़त्म कर दें और सोफ़े वग़ैरह लगा दें, हज़रत मौलाना ने फ़रमाया कि मुझे तो न सोफ़े का शौक़ है, और न मुझे उस पर आराम मिले, मुझे तो फ़र्श पर बैठ कर आराम मिलता है, मैं तो इसी पर बैठ कर काम करूंगा, ख़्वातीन ने कहा कि आपको इस पर आराम मिलता है, मगर दुनिया वालों का तो कुछ ख़्याल कर लिया करो, जो आपके पास मिलने के लिये आते हैं, उनका ही कुछ ख़्याल कर लो, इस पर हज़रत मौलाना ने क्या अजीब जवाब दिया, फ़रमायाः बीबी! दुनिया वालों का तो मैं ख़्याल कर लूं, लेकिन यह तो बताओ कि दुनिया वालों ने मेरा क्या ख़्याल कर लिया? मेरी वजह से किसी ने अपनी ज़िन्दगी के तरीक़े में, या किसी ने

अपने किसी काम में कोई तब्दीली लाई हो, जब उन्हों ने मेरा ख़्याल नहीं किया तो मैं उनका क्यों ख़्याल करूं?

दुनिया वालों के बुरा मानने की परवाह मत करो

जिसके दिल में तुम्हारे पर्दे का एहतिराम नहीं, जिसके दिल में तुम्हारे पर्दे की वक़अ़त और अ़ज़्मत नहीं, वह अगर तुम्हारा ख़्याल नहीं करता तो तुम उनका ख़्याल क्यों करते हो? हालांकि अगर एक बे-पर्दा औ़रत, औ़रतों के अलाहिदा इन्तिज़ाम में शामिल होकर बैठ जाये, और मर्दों के सामने न आये, तो इसमें उसका कोई नुक़सान और कोई ख़राबी नहीं, लेकिन अगर पर्दा दार औ़रत मर्दों के सामने चली जाये, उस पर क़ियामत गुज़र जायेगी। अगर पर्दे का इन्तिज़ाम न होने के बावजूद तुम इसलिये जाती हो ताकि वे बुरा न मानें, कहीं उनको बुरा न लग जाये, अरे! कभी तुम भी तो बुरा माना करो कि हम इस बात पर बुरा मानते हैं कि हमें ऐसी दावत में क्यों बुलाया जा रहा है, हमारे लिये ऐसी दावतें क्यों की जाती हैं, याद रखो! जब तक यह नहीं करेंगे, यह सैलाब नहीं रुकेगा।

इन मर्दों को बाहर निकाल दिया जाये

जहां तक़रीबात में बज़ाहिर ख़्वातीन का इन्तिज़ाम अलग भी है, मर्दों के लिये अलग शामियाने हैं, और औ़रतों के लिये अलग, लेकिन इसमें भी यह होता है कि औ़रतों वाले हिस्से में भी मर्दों का एक तूफ़ान होता है, मर्द आ रहे हैं, जा रहे हैं, हंसी मज़ाक़ हो रहा है, दिल लगी हो रही है, फ़िल्में बन रही हैं, यह सब कुछ वहां हो रहा है, और बज़ाहिर देखने में अलग इन्तिज़ाम है, ऐसे मौक़े पर ख़्वातीन खड़े होकर यह क्यों नहीं कहतीं कि मर्द यहां क्यों आ रहे हैं? हम पर्दा नशीन ख़्वातीन हैं, इसलिये इन मर्दों को बाहर

निकाला जाये।

दीन पर डाका डाला जा रहा है और फिर ख़ामोशी

शादी विवाह में बहुत से मामलात पर लड़ाई झगड़े हो जाते हैं, इस बात पर नाराज़गियां हो जाती हैं कि हमारा फ़लां जगह ख़्याल नहीं किया, हमारा फलां जगह ख़्याल नहीं किया, इसी पर लड़ाई झगड़े खड़े हो जाते हैं, और एक दूसरे के साथ कड़वाहटें पैदा हो जाती हैं, तुम अगर पर्दे वाली हो तो और चीज़ों पर नाराज़गी का इज़हार न करो, तुम्हारी ज़्यादा वक़्त ख़ातिर तवाज़ो नहीं हुई तो इस पर नाराज़गी का इज़हार न करो, लेकिन जब तुम्हारे दीन पर डाका डाला जाये तो वहां तुम्हारे लिये ख़ामोश रहना जायज़ नहीं, खड़े होकर भरी तक़रीब में कह दो कि यह चीज़ हमारे लिये ना क़ाबिले बर्दाश्त है, जब तक कुछ मर्द और ख़्वातीन इस बात का तहिय्या नहीं कर लेंगे, उस वक़्त तक याद रखो, हया का तहफ़्फुज़ नहीं हो सकेगा, और यह सैलाब बढ़ता चला जायेगा।

वर्ना अ़ज़ाब के लिये तैयार हो जाओ

बहर हाल! हम लोग जो कम से कम दीन का नाम लेते हैं, जब तक इसका इरादा और तहिय्या नहीं कर लेंगे, उस वक़्त तक यह सैलाब नहीं रुकेगा, खुदा के लिये इसका अ़ज़्म (इरादा) कर लें, वर्ना फिर अल्लाह के अ़ज़ाब के लिये तैयार रहें, किसी के अन्दर अगर उस अ़ज़ाब के सहारने की हिम्मत है तो वह उसके लिये तैयार हो जाये, या फिर इसका इरादा करलें।

अपना माहौल ख़ुद बानाओ

हमारे वालिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह० बड़े काम की बात फ़रमाया करते थे, याद रखने की है, वह फ़रमाते थे कि तुम कहते हो कि माहौल ख़राब है, मुआ़शरा ख़राब

है, अरे ! तुम अपना माहौल ख़ुद बनाओ, तुम्हारे तअल्लुकात ऐसे लोगों से होने चाहियें जो इन उसूलों में तुम्हारे हम-ख़्याल हों, जो लोग इन उसूलों में तुम्हारे हम-ख़्याल नहीं, उनका रास्ता अलग है और तुम्हारा रास्ता अलग है, इसलिये अपना एक ऐसा दोस्तों का हल्क़ा तैयार करो जो एक दूसरे के साथ इन मामलों में मदद के लिये तैयार हों, और ऐसे लोगों से तअल्लुक़ घटाओ जो ऐसे मामलों में तुम्हारे रास्ते में रुकावट हैं।

आज़ादाना मेल जोल के नतीजे

बहर हाल! औरत के घर से बाहर निकलने से एक ख़राबी तो यह हुई कि फ़ैमली सिस्टम तबाह हो गया, और दूसरे यह कि अल्लाह तआला ने मर्द के दिल में औरत की कशिश रखी है, और औरत के दिल में मर्द की कशिश रखी है। यह फ़ितरी बात है, आप इस पर कितने भी पर्दे डालें, लेकिन यह एक हकीकत है, जिसको झुठलाया नहीं जा सकता, जब इन दोनों के दरमियान आज़ादाना मेल जोल होगा, और आज़ादाना इज्तिमा होगा तो वह कशिश जो इन्सान के अन्दर फ़ितरी तौर पर मौजूद है, किसी न किसी वक़्त रंग लाकर गुनाह पर आमादा करेगी, और जब मर्द और औरत का आज़ादाना मेल जोल होगा, और हर वक़्त मेल मिलाप होगा, और हर वक़्त एक दूसरे को देखेंगे, तो इसके नतीजे में वे यक़ीनन गुनाह की तरफ़ बढ़ेंगे, आप अपनी आंखों से देख रहे हैं, और इसी माहौल में रहते हैं, यहां हर मर्द और औरत के आज़ादाना मेल जोल के नतीजे में क्या हो रहा है, यहां इस वक़्त इस मुल्क में कोई मर्द या औरत ना-जायज़ तरीक़े से अपनी जिन्सी तसकीन करना चाहता है तो उसके दर्वाज़े चोपट खुले हैं, कोई क़ानून उनको रोकने वाला नहीं है, कोई मुआशरा उनको

रोकने वाला नहीं है, कोई समाजी रुकावट उन पर लागू नहीं है, इस के बावजूद इस मुल्क में ज़बरदस्ती ज़िना (बलात्कार) के वाक़िआत सारी दुनिया से ज़्यादा हो रहे हैं, कल ही के अख़बार में मैंने पढ़ा कि इस मुल्क (अमरीका) में हर ४६ सैकन्ड पर एक बलात्कार का वाक़िआ ज़ाहिर होता है, अब बताइये कि जिस मुल्क में रज़ामन्दी के साथ जिन्सी ख़्वाहिश पूरी करने का रास्ता खुला हुआ है, उसके बावजूद बलात्कार इतनी कसरत से हो रहे हैं, इसकी क्या वजह है?

जिन्सी ख़्वाहिश को पूरा करने का रास्ता क्या है?

वजह इसकी यह है कि इन्सान अपनी फ़ितरी हदों से बाहर निकल गया है, जब तक इन्सान फ़ितरी हदों के अन्दर रह कर जिन्सी ख़्वाहिशात को पूरा करने का रास्ता इख़्तियार करेगा, उस वक़्त तक इन्सान जिन्सी ख़्वाहिशात की तक्मील के ज़रिये सुकून हासिल करेगा, लेकिन जब वह फ़ितरी हदों से आगे बढ़ेगा तो फिर वह जिन्सी ख़्वाहिश एक न मिटने वाली भूख और न बुझने वाली प्यास में तब्दील हो जाती है, फिर वह ऐसी भूख है जो कभी नहीं मिटेगी, और ऐसी प्यास है जे कभी नहीं बुझेगी, और उसके बाद फिर इन्सान किसी एक हद पर जाकर क़ानेअ् (बस करने वाला) नहीं हो सकता, बल्कि वह और ज़्यादा का तलबगार रहेगा।

इसलिये मर्द और औरत के आज़ादाना मेल जोल का वही नतीजा होगा जो आप देख रहे हैं, और अपनी आंखों से मुशाहदा कर रहे हैं, और यह सब कुछ उस हुक्म से बग़ावत का नतीजा है जो अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में दिया कि:

"وَقَرْنَ فِیْ بُیُوْتِکُنَّ"

कि अपने घरों में क़रार से रहो, आज यह हुक्म छोड़ कर

दूसरे रास्ते पर चल पड़े हैं।

ज़रूरत के वक़्त घर से बाहर जाने की इजाज़त

अलबत्ता एक सवाल यह पैदा होता है कि आख़िर औरत भी एक इन्सान है, उसको भी घर से बाहर जाने की ज़रूरत पेश आ सकती है, उसके दिल में भी घर से बाहर निकलने की ख़्वाहिश होती है, ताकि वह अपने अज़ीज़ों और रिश्तेदारों से मुलाक़ात करे, और कभी कभी अपनी ज़ाती ज़रूरतें पूरी करने के लिये भी बाहर निकलने की ज़रूरत होती है, और कभी कभी उसको जायज़ तफ़रीह की भी ज़रूरत होती है, इसलिये उसको इन कामों के लिये घर से बाहर जाने की इजाज़त होनी चाहिये।

ख़ूब समझ लीजिये कि यह जो हुक्म है कि घर में क़रार से रहो, इसका यह मतलब नहीं कि घर में ताला लगा कर उसको अन्दर बन्द कर दिया जाये, बल्कि मतलब यह है कि ज़रूरत के वक़्त वह घर से बाहर भी जा सकती है, वैसे तो अल्लाह तआला ने औरत पर किसी ज़माने में भी रोज़ी कमाने की ज़िम्मेदारी नहीं डाली, शादी से पहले उसकी मुकम्मल किफ़ालत बाप के ज़िम्मे है, और शादी के बाद उसकी तमाम किफ़ालत शौहर के ज़िम्मे है, लेकिन जिस औरत का न बाप हो और न शौहर हो, और न आर्थिक देख भाल का कोई ज़रिया मौजूद हो, तो ज़ाहिर है कि उसको मआशी ज़रूरत के लिये घर से बाहर जाना पड़ेगा, इस सूरत में बाहर जाने की इजाज़त है, बल्कि जैसा कि मैंने अर्ज़ किया जायज़ तफ़रीह के लिये भी घर से बाहर जाने की इजाज़त है, आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कभी कभी हज़रत आयशा रज़ि० को अपने साथ घर से बाहर भी लेकर गये।

क्या आयशा रज़ि० की भी दावत है?

हदीस में आता है कि एक मर्तबा एक सहाबी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए, और अर्ज़ किया, या रसूलल्लाह! मैं आपकी दावत करना चाहता हूं, आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जवाब दिया किः

"اعائشة معی؟"

क्या आयशा (रज़ि०) की भी मेरे साथ दावत है या नहीं? चूंकि वह ज़माना सादगी और बे तकल्लुफ़ी का था, और उस वक़्त उनके ज़ेहन में हज़रत आयशा रज़ि० को बुलाने का इरादा नहीं था, इसलिये उन्हों ने साफ़ कह दिया कि या रसूलल्लाह! मैं सिर्फ़ आपकी दावत करना चाहता हूं, आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भी साफ़ जवाब दे दिया, "اذاً فلا" यानी अगर आयशा (रज़ि०) की दावत नहीं तो मैं भी नहीं आता, कुछ अर्सा (समय) के बाद वह सहाबी फिर हाज़िर हुए, और अर्ज़ कियाः या रसूलल्लाह! मैं आपकी दावत करना चाहता हूं, आपने फिर वही सावल किया किः"اعائشة معی؟" क्या आयशा (रज़ि०) की भी मेरे साथ दावत है या नहीं? उन्हों ने फिर वही जवाब दे दिया कि या रसूलल्लह! सिर्फ़ आपकी दावत है, आपने फिर इन्कार फ़रमा दिया कि फिर मैं भी नहीं जाऊंगा, कुछ अर्सा के बाद तीसरी बार आकर फिर दावत दी, और अर्ज़ किया कि या अल्लाह के रसूल! मेरा दिल चाहता है कि मेरी दावत क़बूल फ़रमा लें, आपने फिर वही पूछा किः

"اعائشة معی؟"

क्या आयशा (रज़ि०) की भी मेरे साथ दावत है? अबकी मर्तबा उन्हों ने कहाः "نعم! یارسول الله!" जी हां या रसूलल्लाह! हज़रत आयशा रज़ि० की भी आपके साथ दावत है, आपने फ़रमायाः

"اذا فنعم!"

अब मैं दावत क़ुबूल करता हूं। (सही मुस्लिम)

आपके इस्रार की वजह

रिवायत में तो इसका ख़ुलासा नहीं है, अलबत्ता बाज़ उलमा ने लिखा है कि आम तौर पर आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह मामूल नहीं था कि जब कोई शख़्स आपकी दावत करता तो ज़रूर हज़रत आयशा रज़ि० को साथ ले जाने की शर्त लगाते, बल्कि आपका मामूल यही था कि जब कोई शख़्स आपकी दावत करता तो आप क़ुबूल फ़रमा लेते थे, लेकिन बाज़ उलमा ने लिखा है कि ऐसा मालूम होता है कि इस मौक़े पर जो सहाबी आपकी दावत कर रहे थे, शायद उनके दिल में हज़रत आयशा रज़ि० की तरफ़ से कोई मैल और कदूरत होगी, और आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उनकी उस कदूरत को दूर करना चाहते थे, इसलिये आपने बार बार हज़रत आयशा रज़ि० को साथ ले जाने की शर्त लगाई।

बीवी को जायज़ तफ़रीह की भी ज़रूरत है

यह दावत मदीना तैयबा में नहीं थी, बल्कि मदीना तैयबा से बाहर कुछ फ़ासले पर एक बस्ती में थी, अब आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हज़रत आयशा रज़ि० को साथ लेकर चले, रास्ते में एक खुला मैदान आया, जिसमें कोई दूसरा शख़्स मौजूद नहीं था, उस वक़्त आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत आयशा रज़ि० के साथ दौड़ लगाई, अब ज़ाहिर है कि दौड़ लगाना एक जायज़ तफ़रीह थी, इस जायज़ तफ़रीह का भी आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एहतिमाम फ़रमाया, इसलिये एक ख़ातून को इसकी भी ज़रूरत होती है, इस क़िस्म की तफ़रीह की

इजाज़त है, शरत यह है कि जायज़ हदों में हो, बे पर्दगी के साथ न हो, और ग़ैर महरमों के साथ न हो। (अबू दाऊद)

(इन रवायतों से मालूम होता है कि दावत का वाक़िआ और दौड़ने का वाक़िआ अलग अलग हैं, अलबत्ता बाज़ रिवायतों से मालूम होता है कि दौड़ने का वाक़िआ इसी हदीस में पेश आया।)

बनाव सिंघार के साथ निकलना जायज़ नहीं

इसलिये ज़रूरत के वक़्त औरतों को घर से बाहर निकलने की भी शरीअ़त ने इजाज़त दी, मगर बाहर के लिये यह शर्त लगा दी कि हिजाब (पर्दे) की पाबन्दी होनी चाहिये, और इस तरह खुले आ़म अपने जिस्म की नुमाइश करते हुए न निकलो, इसी लिये कुरआन करीम में अल्लाह तआ़ला ने अगला जुम्ला यह इर्शाद फ़रमाया कि:

"وَلَا تَبَرَّجْنَ تَبَرُّجَ الْجَاهِلِيَّةِ الْأُوْلٰى"

यानी अगर कभी निकलने की ज़रूरत हो तो इस तरह ज़ेब व ज़ीनत (बनाव सिंघार) के साथ नुमाइश करती हुई न निकलो, जैसा कि जाहिलिय्यत की औरतें निकला करती थीं, और ऐसी आराईश और ज़ेब व ज़ीनत के साथ न निकलो जिससे लोगों की तवज्जोह उनकी तरफ़ खिंचे, बल्कि पर्दे की पाबन्दी के साथ पर्दा करके निकलो, और जिस्म ढीले ढाले लिबास में छुपा हुआ हो, हमारे ज़माने में तो बुर्क़े का रिवाज है, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में चादरें इस्तेमाल होती थीं, और वह चादर सर से लेकर पांव तक पूरे जिस्म को छुपा लेती थी, ख़ुलासा यह है कि ज़रूरत के वक़्त औरत को घर से बाहर निकलने की इजाज़त तो दी गयी, लेकिन उसके बाहर निकलने से फ़ितने का जो अन्देशा है, उस फ़ितने का दर्वाज़ा पर्दे के ज़रिये बन्द हो

जायेगा, इसलिये पर्दे का हुक्म लागू किया गया।

क्या पर्दे का हुक्म सिर्फ़ नबी-ए-पाक की बीवियों को है?

बाज़ हज़रात यह कहते हैं कि पर्दे का हुक्म सिर्फ़ अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों) के लिये था, और यह हुक्म उनके अ़लावा दूसरी औ़रतों के लिये नहीं है, और इसी ऊपर लिखी गयी आयत ही से दलील पकड़ते हैं कि इस आयत में ख़िताब सिर्फ़ अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों) को किया जा रहा है, यह बात नक़्ली और अ़क़्ली हर एतिबार से ग़लत है, इसलिये कि एक तरफ़ तो इस आयत में शरीअ़त के बहुत से अहकाम दिये गये हैं, जैसे एक हुक्म तो यही है कि:

"وَلَا تَبَرَّجْنَ تَبَرُّجَ الْجَاهِلِيَّةِ"

जाहिलिय्यत की औ़रतों की तरह ख़ूब ज़ेब व ज़ीनत और बन संवर कर बाहर न निकलो, तो क्या यह हुक्म सिर्फ़ अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों) को है? और क्या दूसरी औ़रतों को इसकी इजाज़त है कि जाहिलिय्यत की औ़रतों की तरह ज़ेब व ज़ीनत करके बाहर निकला करें? ज़ाहिर है कि दूसरी औ़रतों को भी इजाज़त नहीं, और आगे एक हुक्म यह दिया कि:

"وَاَقِمْنَ الصَّلٰوةَ"

"नमाज़ क़ायम करो" तो क्या नमाज़ क़ायम करने का हुक्म सिर्फ़ अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों) के लिये है? दूसरी औ़रतों को नमाज़ का हुक्म नहीं, और उसके बाद एक हुक्म यह दिया गया कि:

"وَاٰتِيْنَ الزَّكٰوةَ"

"ज़कात अदा करो" तो क्या ज़कात देने का हुक्म सिर्फ़ अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों) को है? दूसरी औरतों को नहीं? और आगे फ़रमाया कि:

"وَاَطِعْنَ اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ"

"कि अल्लाह और उसके रसूल की इताअ़त करो" तो क्या अल्लाह और उसके रसूल की इताअ़त का हुक्म सिर्फ़ अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों) को है? दूसरी औरतों को नहीं है? पूरी आयत का अगला और पिछला हिस्सा यह बता रहा है कि इस आयत में जितने अहकाम हैं, वे सब के लिये आ़म हैं, अगरचे बराहे रास्त ख़िताब अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों) को है, लेकिन उनके वासते से पूरी उम्मत को ख़िताब है।

ये पाकीज़ा ख़्वातीन थीं

दूसरी बात यह है कि हिजाब और पर्दे का मक़्सद यह था कि मुआ़शरे के अन्दर बे पर्दगी के नतीजे में जो फ़ितना पैदा हो सकता है उसका दर्वाज़ा बन्द किया जाये, अब सवाल यह है कि क्या फ़ितना सिर्फ़ अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों) के बाहर निकलने से पैदा होगा? ख़ुदा अपनी पनाह में रखे कि हम मुसलमान उनके बारे में (जो हमारी मायें हैं) ऐसा ख़्याल भी अपने दिल में लायें। वे अज़्वाजे मुतह्हरात कि उन जैसी पाकीज़ा ख़्वातीन इस रूए ज़मीन पर पैदा नहीं हुयीं, क्या उन्हीं से फ़ितने का ख़तरा था? क्या दूसरी

औरतों के निकलने से फ़ितने का अन्देशा नहीं है? जब अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पाक बीवियों) को यह हुक्म दिया जा रहा है कि तुम पर्दे के साथ निकलो तो दूसरी औरतों को यह हुक्म बतरीक़े औला दिया जायेगा, इसलिये कि उनसे फ़ितने का अन्देशा ज़्यादा है।

पर्दे का हुक्म तमाम औरतों को है

इसके अलावा दूसरी आयत में पूरी उम्मते मुस्लिमा से ख़िताब है, फ़रमायाः

يَـاأَيُّهَا النَّبِيُّ قُلْ لِأَزْوَاجِكَ وَبَنَاتِكَ وَنِسَاءِ الْمُؤْمِنِيْنَ يُدْنِيْنَ عَلَيْهِنَّ مِنْ جَلَابِيْبِهِنَّ (سورة الاحزاب:٥٩)

ऐ नबी! अपनी बीवियों से भी कह दो, और अपनी बेटियों से भी कह दो, और तमाम मोमिनों की औरतों से कह दो कि वे अपने चेहरों पर अपनी चादरें लटका लिया करें, इससे ज़्यादा साफ़ और स्पष्ट हुक्म कोई नहीं हो सकता "जलाबीब" जमा है "जल्बाब" की, और "जल्बाब" उस चादर को कहा जाता है जो औरत इस तरह पहनती थी कि सर से पांव तक उसका पूरा जिस्म उसमें छुपा होता था, और फिर कुरआन करीम ने सिर्फ़ चादर पहनने का हुक्म नहीं दिया, बल्कि लफ़्ज़ "युद्नी-न" लाये, जिसके मायने यह हैं कि वह चादर आगे ढलका लें, ताकि चेहरा भी नुमायां न हो, और उस चादर में छुप जाये, अब इससे ज़्यादा वाज़ेह और क्या हुक्म हो सकता है।

एहराम की हालत में पर्दे का तरीक़ा

आपको मालूम है कि हज के मौक़े पर एहराम की हालत में औरतों के लिये कपड़े को चेहरे पर लगाना जायज़ नहीं, मर्द सर नहीं ढांप सकते, और औरतें चेहरा नहीं ढांप सकतीं, जब हज का

मौसम आया और आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अज़्वाजे मुतह्हराल (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों) को हज कराने के लिये तशरीफ़ ले गये, उस वक़्त यह मस्अला पेश आया कि एक तरफ़ तो पर्दे का हुक्म है, और दूसरी तरफ़ यह हुक्म है कि हालते एहराम में कपड़ा मुहं पर न लगना चाहिये, हज़रत आ़यशा रज़ि० फ़रमाती हैं कि जब हम हज के सफ़र पर ऊंट पर बैठ कर जा रही थीं, तो रास्ते में जब सामने कोई अज्नबी न होता तो अपने नक़ाब उलटे रहने देतीं, और हमने अपने माथे पर एक लकड़ी लगाये हुए थी, और जब कोई क़ाफ़िला या अज्नबी मर्द सामने दिखाई देता तो हम नक़ाब उस लकड़ी पर डाल देतीं, ताकि वह नक़ाब चेहरे पर न लगे, और जो मर्द सामने आयें उनका सामना न हो, इस रिवायत से मालूम होता है कि एहराम की हालत में भी अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पाक बीवियों) ने पर्दे को तर्क नहीं फ़रमाया।

(अबू दाऊद)

एक ख़ातून का पर्दे का एहतिमाम

अबू दाऊद की रिवायत है कि एक ख़ातून का बेटा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ एक ग़ज़वा में गया हुआ था, जंग के बाद तमाम मुसलमान वापस आये, लेकिन उसका बेटा वापस नहीं आया, अब ज़ाहिर है कि उस वक़्त मां की बेताबी की क्या कैफ़ियत होगी, और उस बेताबी के आ़लम में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में यह पूछने के लिये दौड़ीं कि मेरे बेटे का क्या बना? और जाकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पूछा कि या रसूलल्लाह! मेरे बेटे का क्या हुआ? सहाबा-ए-किराम ने जवाब दिया कि तुम्हारा बेटा

तो अल्लाह के रास्ते में शहीद हो गया, अब बेटे के मरने की इत्तिला उस पर बिजली बन कर गिरी, इस इत्तिला पर उसने जिस सब्र व ज़ब्त से काम लिया, वह अपनी जगह है, लेकिन इसी आलम में किसी शख़्स ने उस ख़ातून से पूछा कि ऐ ख़ातून! तुम इतनी परेशानी के आलम में अपने घर से निकल कर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में आयीं, इस हालत में भी तुमने अपने चेहरे पर नक़ाब डाला हुआ है? और इस वक़्त भी नक़ाब नहीं भूलीं? जवाब में उस ख़ातून ने कहा कि:

"ان أرزا إبنى لم أرزا حيائى"

"मेरा बेटा फ़ौत हुआ है, लेकिन मेरी हया तो फ़ौत नहीं हुई" यानी मेरे बेटे का जनाज़ा निकला है, लेकिन मेरी हया का जनाज़ा तो नहीं निकला, तो इस हालत में भी पर्दे का इतना एहतिमाम फ़रमया। (अबू दाऊद)

पश्चिम वालों के तानों से मरऊब न हों

अर्ज़ यह करना था कि हिजाब का यह हुक्म अल्लाह तआला ने क़ुरआन करीम में नाज़िल फ़रमाया, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अहादीस में इसकी तफ़्सील बयान फ़रमाई, और अज़्वाजे मुतह्हरात (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पाक बीवियों) और सहाबियात ने इस हुक्म पर अमल करके दिखाया, अब अहले मग़रिब (पश्चिम वालों) ने यह प्रोपैगन्डा शुरू कर दिया कि मुसलमानों ने औरतों के साथ बड़ा ज़ालिमाना सुलूक किया है, कि उनको घरों में बन्द कर दिया, उनके चेहरे पर नक़ाब डाल दी, और उनको एक कारटून बना दिया, तो क्या मग़रिब के इस मज़ाक़ और प्रोपैगन्डे के नतीजे में हम अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इन अहकाम को

छोड़ दें? याद रखो! जब ख़ुद हमारे अपने दिलों में यह ईमान और एतिमाद पैदा न हो कि हमने रसूले अक्रम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से जो तरीक़ा सीखा है, वही तरीक़ा बर्हक़ है, कोई मज़ाक़ उड़ाता है तो उड़ाया करे, कोई ताना देता है तो दिया करे, ये ताने तो मुसलमान के गले का ज़ेवर हैं, अंबिया अ़लै० जो इस दुनिया में तशरीफ़ लाये, क्या उन्हों ने कुछ कम ताने सहे? जितने अंबिया अ़लै० इस दुनिया में तशरीफ़ लाये, उनको ये ताने दिये गये कि ये तो पिछड़े हुए लोग हैं, ये दक़्यानूस और बुनियाद परस्त हैं, ये हमें ज़िन्दगी की राहतों से महरूम करना चाहते हैं, ये सारे ताने अंबिया को दिये गये, और तुम जब मोमिन हो तो अंबिया के वारिस हो, जिस तरह विरासत में और चीज़ें मिलेंगी क्या इन तानों से घबरा कर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़ा–ए–कार को छोड़ दोगे? अगर अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान है तो फिर इन तानों को सुनने के लिये कमर मज़बूत करके बैठना होगा।

फिर भी तीसरे दर्जे के शहरी रहोगे

और अगर फ़र्ज़ करो कि इन तानों के नतीजे में उनके कहने पर अ़मल कर लिया, फिर भी तीसरे दर्जे के शहरी रहोगे, वे कहते हैं कि औ़रतों को घर में मत बैठाओ और उनको पर्दा न कराओ, हिजाब न कराओ, अब आपने उनकी बात मानते हुए उस पर अ़मल कर लिया, और औ़रतों को घर से बाहर निकाल दिया, उनका पर्दा भी उतार दिया, दुपट्टा भी उतार दिया, सभी कुछ कर लिया, लेकिन क्या उन्हों ने यह मान लिया कि तुम हमारे हो? और क्या उन्हों ने तुम्हें वही हुक़ूक़ दे दिये? क्या तुम्हें वही इ़ज़्ज़त दे दी? नहीं, बल्कि अब भी तुम रुजअ़त पसन्द और दक़्यानूस हो, और अब भी

जब तुम्हारा नाम आयेगा तो तानों के साथ आयेगा, बावजूद यह कि सर से पांव तक हर चीज़ में उनकी बात मान ली, फिर भी तुम तीसरे दर्जे के शहरी रहोगे।

कल हम उनका मज़ाक़ उड़ायेंगे

लेकिन इसके उलट अगर तुमने इन तानों से एक मर्तबा नज़र फैर ली, और यह सोचा कि ये लोग तो ताने दिया ही करेंगे, और बुरा कहेंगे, लेकिन हमें तो मुहम्मद रसूलुल्लाह के रास्ते पर जाना है, और अज़्वाजे मुतह्हरात के रास्ते पर जाना है तो फिर हज़ारों ताने दें, हमारा मज़ाक़ उड़ायें और हम पर हंसें, लेकिन एक दिन आयेगा कि हम उन पर हसेंगे, चुनांचे क़ुरआन करीम ने फ़रमायाः

"فَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنَ الْكُفَّارِ يَضْحَكُوْنَ عَلَى الْاَرَائِكِ يَنْظُرُوْنَ"

(سورة المطففين:٣٤)

कुफ़्फ़ार के बारे में फ़रमाया कि यह कुफ़्फ़ार मुसलमानें के साथ दुनिया में तो यह मामला करते थे कि उनको देख कर हंसी मज़ाक़ उड़ाते थे, और जब उनके पास से कोई मुसलमान गुजरता तो ये लोग एक दूसरे को इशारा करते कि देखो मुसलमान जा रहा है, लेकिन जब आख़िरत का मर्हला आयेगा तो ये ईमान वाले काफ़िरों पर हंसेंगे, और सोफ़ों पर बैठ कर उनको देख रहे होंगे, इन्शा अल्लाह। यह दुनिया की ज़िन्दगी कितने दिन की है? ये कुफ़्फ़ार कितने दिन हंसी मज़ाक़ उड़ायेंगे? जिस दिन आंख बन्द होगी, उस दिन मालूम होगा कि जो लोग मज़ाक़ उड़ाते थे, उनका क्या अन्जाम हुआ? और जिनका मज़ाक़ उड़ाया जाता था उनका अन्जाम क्या हुआ? बजाये इसके कि हंसी से मरऊब होकर अपना रास्ता छोड़ दो, और अपने तरीक़े को ख़ैरबाद कह दो, नजात का

रास्ता एक ही है, कि वे हंसें, मज़ाक़ उड़ायें, ताना दें, जो कुछ चाहें करें, लेकिन हम अपना तरीक़ा छोड़ने वाले नहीं।

इज़्ज़त इस्लाम को इख़्तियार करने में है

याद रखो! जो शख़्स इस काम के लिये हिम्मत करके अपनी कमर बांध लेता है, वही शख़्स दुनिया से अपनी इज़्ज़त भी कराता है, इज़्ज़त हक़ीक़त में इस्लाम को छोड़ने में नहीं, बल्कि इस्लाम इख़्तियार करने में है, हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने फ़रमाया था कि: "ان اللہ قد اعزنا بالاسلام"

अल्लाह तआ़ला ने हमें जो कुछ इज़्ज़त दी है, वह इस्लाम की बदौलत दी है, अगर हम इस्लाम को छोड़ेंगे तो अल्लाह तआ़ला हमें इज़्ज़त के बजाये ज़िल्लत से दोचार कर देंगे।

दाढ़ी भी गयी और नौकरी भी नहीं मिली

मेरे एक बुज़ुर्ग ने एक सच्चा वाक़िआ़ सुनाया, जो बड़ी इब्रत का वाक़िआ़ है, वह यह कि उनके एक दोस्त लन्दन में थे, और किसी नौकरी की तलाश में थे, नौकरी के लिये एक जगह इन्टरव्यू देने के लिये गये, उस वक़्त उनके चेहरे पर दाढ़ी थी, जो शख़्स इन्टरव्यू ले रहा था, उसने कहा कि दाढ़ी के साथ यहां काम करना मुश्किल है, इसलिये यह दाढ़ी ख़त्म करनी होगी, अब यह बड़े परेशान हुए कि मैं अपनी दाढ़ी ख़त्म कर दूं या न करूं, उस वक़्त तो वापस चले आये, और दो तीन रोज़ तक दूसरी जगह नौकरी तलाश करते रहे, और कश-मकश में मुब्तला रहे, दूसरी नौकरी नहीं मिल रही थी और बेरोज़गार और परेशान भी थे,

आख़िर में फ़ैसला कर लिया कि चलो दाढ़ी कटवा देते हैं, ताकि नौकरी तो मिल जाये, चुनांचे दाढ़ी कटवा दी, और उसी जगह नौकरी के लिये पहुंच गये, जब वहां पहुंचे तो उन्हों ने पूछा

कि कैसे आना हुआ? उन्हों ने जवाब दिया कि आपने कहा था कि यह दाढ़ी कटवा दी तो तुम्हें नौकरी मिल जायेगी, उसने पूछा कि आप मुसलमान हैं? उन्हों ने कहा हां! उसने फिर पूछा कि आप दाढ़ी को ज़रूरी समझते थे या ग़ैर ज़रूरी समझते थे? जवाब दिया कि मैं उसको ज़रूरी समझता था, इसी वजह से रखी थी, उसने कहा कि जब आप जानते थे कि यह अल्लाह का हुक्म है, और अल्लाह के हुक्म के तहत दाढ़ी रखी थी, और अब आपने सिर्फ़ मेरे कहने की वजह से अल्लाह के हुक्म को छोड़ दिया, इसका मतलब यह है कि आप अल्लाह के वफ़ादार नहीं, और जो शख़्स अपने अल्लाह का वफ़ादार न हो, वह अपने अफ़्सर का भी वफ़ादार नहीं हो सकता, इसलिये हम आपको नौकरी पर रखने से माज़ूर हैं। "خسر الدنيا والآخرة" दाढ़ी भी गयी, और नौकरी भी न मिली।

चेहरे का भी पर्दा है

''हिजाब'' के बारे में इतनी बात ज़रूर अर्ज़ कर दूं कि ''हिजाब'' में असल बात यह है कि सर से लेकर पांव तक पूरा जिस्म चादर से या बुरक़े से या किसी ढीले ढाले गोन से ढका हुआ हो, और बाल ढके हुये हों, और चेहरे का हुक्म यह है कि बुनियादी तौर पर चेहरे का पर्दा है, इसलिये चेहरे पर भी नक़ाब होना चाहिये, और जो यह आयत मैंने अभी तिलावत की कि:

"يُدْنِيْنَ عَلَيْهِنَّ مِنْ جَلَابِيْبِهِنَّ"

इस आयत की तफ़्सीर में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० फ़रमाते हैं कि उस ज़माने में ख़्वातीन यह करती थीं कि चादर अपने ऊपर डाल कर उसका एक पल्ला चेहरे पर डाल लेती थीं, और सिर्फ़ आंखें खुली रहती थीं, और बाक़ी चेहरा चादर के अन्दर ढका होता था, तो ''हिजाब'' का असल तरीक़ा यह है,

अलबत्ता चूंकि ज़रूरियात भी पेश आती हैं, इसलिये अल्लाह तआ़ला ने चेहरे की हद तक यह गुन्जायश दी है कि जहां चेहरा खोलने की शदीद ज़रूरत हो, उस वक़्त सिर्फ़ चेहरा खोलने और हाथों को गट्टों तक खोलने की इजाज़त है, और असल यही है कि चेहरे समेत पूरा जिस्म ढका होना चाहिये, लेकिन यह भी ऐसे सख़्त हालात में जहां इसके अ़लावा कोई चारा-ए-कार न हो।

मर्दों की अक़्लों पर पर्दा

बहर हाल! यह "हिजाब" के मुख़्तसर अहकाम हैं, वाक़िआ़ यह है कि एक औ़रत की पाकीज़ा और पारसा ज़िन्दगी के लिये हिजाब एक बुनियादी अहमियत रखता है, इसलिये मर्दों का फ़र्ज़ है कि वे ख़्वातीन को इस पर आमादा करें और ख़्वातीन का फ़र्ज़ है कि वे इसकी पाबन्दी करें, अफ़्सोस उस वक़्त है कि जब बहुत सी बार ख़्वातीन "हिजाब" करना चाहती हैं लेकिन मर्द रास्ते में रुकावट बन जाते हैं, अक्बर इलाहाबादी मर्हूम ने बड़ा अच्छे शेर कहे हैं कि:

बे पर्दा कल जो नज़र आयीं चन्द बीबियां
अक्बर ज़मीन में ग़ैरते क़ौमी से गड़ गया
पूछा जो उनसे पर्दा तुम्हारा कहां गया
कहने लगीं अक़्ल पे मर्दों की पड़ गया

आज हक़ीक़त में मर्दों की अक़्लों पर पर्दा पड़ गया, वे पर्दे के रास्ते में रुकावट बन रहे हैं, अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से हम सबको ग़लत ख़्यालात से नजात अ़ता फ़रमायें, अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अहकाम के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमायें, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

दीन की हक़ीक़त

तस्लीम व रिज़ा

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْم

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

عن ابی موسی الاشعری رضی الله عنه قال:قال رسول الله صلی الله علیه وسلم اذا مرض العبد اوسافر کتب له مثل ما کان یعمل مقیما صحیحا. (صحیح بخاری)

बीमारी और सफ़र में नेक आमाल का लिखा जाना

हज़रत अबू मूसा अश्अरी रज़ि० हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बड़े सहाबा और फुक़हा सहाबा में से हैं और उन हज़रात में से हैं जिन्हों ने दो मर्तबा हिज्रत फ़रमाई, एक मर्तबा हबशा की तरफ़ और दूसरी मर्तबा मदीना तैयबा की तरफ़, वह रिवायत करते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया: जब कोई बन्दा बीमार होता है या सफ़र की हालत में होता है तो जो इबादतें और नेक आमाल सेहत की हालत में या वतन में रहने की हालत में किया करता था जब बीमारी या सफ़र की वजह से छूट जाते हैं तो अल्लाह तआला वे सारे आमाल उसके आमाल नामे में लिखते रहते हैं बावजूद यह कि वह बीमारी या सफ़र की वजह से वे आमाल नहीं कर पा रहा है इस लिये कि

अगर वह तन्दुरुस्त होता या अपने घर में होता तो ये आमाल करता।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कितनी बड़ी तसल्ली और नेमत की बात बता दी कि बीमारी में माज़ूरी और मजबूरी की वजह से जो मामूलात छूट रहे हैं तो इस पर बहुत सदमा करने की ज़रूरत नहीं कि अगर तन्दुरुस्त होता तो यह काम कर लेता, इसलिये कि अल्लाह तआ़ला उनको लिख रहे हैं।

नमाज़ किसी हालत में माफ़ नहीं

लेकिन इसका तअ़ल्लुक़ सिर्फ़ नफ़्ली इबादतों से है जो इबादतें फ़र्ज़ हैं उनमें अल्लाह तआ़ला ने जो कमी कर दी उस कमी के साथ उनको अन्जाम देना ही है, जैसे नमाज़ है इंसान कितना ही बीमार हो मौत के बिस्तर पर हो और मौत के क़रीब हो तब भी नमाज़ माफ़ नहीं होती, अल्लाह तआ़ला ने यह आसानी तो फ़रमा दी कि खड़े होकर नमाज़ पढ़ने की ताक़त नहीं तो बैठ कर पढ़ लो, बैठ कर पढ़ने की ताक़त नहीं तो लेट कर पढ़ लो, वुज़ू नहीं कर सकते तो तयम्मुम करलो, अगर कपड़े पाक रखना बिल्कुल मुम्किन नहीं तो इसी हालत में पढ़ लो, लेकिन नमाज़ किसी हालत में माफ़ नहीं जब तक इन्सान के दम में दम है। हाँ! अगर कोई बेहोश हो जाए या ग़शी तारी हो जाए और इसी हालत में छः नमाज़ों का वक़्त गुज़र जाये तो उस वक़्त नमाज़ माफ़ हो जाती है, लेकिन जब तक होश में है और दम में दम है उस वक़्त तक नमाज़ माफ़ नहीं।

बीमारी में परेशान होने की ज़रूरत नहीं

बहुत सी बार ऐसा होता है कि इन्सान बीमार हुआ और अब खड़े होने की बजाये बैठ कर नमाज़ पढ़ रहा है, बैठ कर पढ़ने की

ताक़त नहीं तो लेट कर पढ़ रहा है, ऐसे मौक़े पर बहुत से लोगों को देखा कि वे दिल तंग करते रहते हैं कि इस हालत में अब खड़े होकर पढ़ने का मौक़ा नहीं मिल रहा है, और बैठ कर पढ़ने का भी मौक़ा नहीं मिल रहा है, लेटे लेटे नमाज़ पढ़ रहा हूं, पता नहीं कि वुज़ू भी ठीक हो रही है या नहीं, तयम्मुम भी सही हो रहा है या नहीं, इन चीज़ों में परेशान रहते हैं, हालांकि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तसल्ली दे रहे हैं कि जब तुम मजबूरी की वजह से इन चीज़ों को छोड़ रहे हो तो अल्लाह तआला उनको तुम्हारे आमाल नामे में लिख रहे हैं जो तन्दुरुस्ती की हालत में तुम किया करते थे।

अपनी पसंद को छोड़ दो

एक हदीस में है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

"ان الله يحب ان تؤتى رخصة كما يحب ان تؤتى عزائمه"

(مجمع الزوائد)

यानी जिस तरह अज़ीमत जो आला दरजे का काम है उस पर अमल करना अल्लाह तआला को पसंद है इसी तरह मजबूरी की वजह से अगर रुख़्सत (गुन्जाइश) पर अमल करें तो अल्लाह तआला उसको भी पसंद करते हैं, लिहाज़ा अपनी पसंद की फ़िक्र न करो अल्लाह तआला को जो हालत पसंद है वही हालत मतलूब है।

आसानी इख़्तियार करना सुन्नत है

बाज़ लोगों की तबीयत सख़्ती को पसंद करने की होती है वे चाहते हैं कि ज़्यादा से ज़्यादा मशक़्क़त का काम करें बल्कि मशक़्क़त ढूंढते हैं इस लिये ढूंढते हैं कि वे समझते हैं कि इसमें

ज़्यादा सवाब है, चूंकि बहुत से बुज़ुर्गों से भी इस क़िस्म की बातें नक़ल की गई हैं, इसलिये उनकी शान में कोई गुस्ताख़ी का कलिमा नहीं कहना चाहिये लेकिन सुन्नत का तरीक़ा वो नहीं है, सुन्नत का तरीक़ा यह है जो हदीस में नक़ल किया गया है:

"ماخير رسول الله صلى الله عليه وسلم بين امرين قط الا اخذ ايسرهما" (صحيح بخارى)

जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को दो चीज़ों के दरमियान इख़्तियार दिया जाता तो आप उनमें से ज़्यादा आसान को इख़्तियार फ़रमाते। अब सवाल यह है कि क्या हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का आसानी इख़्तियार करना (अल्लाह अपनी पनाह में रखे) आसानी ढूंढने के लिये था, और क्या मशक़्क़त और तक्लीफ़ से बचने के लिये या दुनियावी राहत व आराम हासिल करने के लिये था? ज़ाहिर है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में यह तसव्वुर भी नहीं हो सकता कि आप आसानी ढूंढने और राहत व आराम हासिल करने के लिये आसान रास्ता इख़्तियार फ़रमाते थे, लिहाज़ा इसकी वजह यही है कि आसान रास्ता इख़्तियार करने में अ़ब्दियत (बन्दगी) की शान ज़्यादा है, अल्लाह तआ़ला के सामने बहादुरी नहीं है बल्कि इंकिसारी है, कि मैं तो आ़जिज़ बन्दा हूं, नाकारा हूं, मैं तो आसान रास्ता इख़्तियार करता हूं यह बन्दगी का इज़्हार है। और अगर मुश्किल रास्ता इख़्तियार किया तो इसके मायने यह हैं कि अल्लाह तआ़ला के सामने बहादुरी जताता है।

दीन "इत्तिबा" का नाम है

दीन की सारी बुनियाद यह है कि किसी ख़ास अ़मल का नाम दीन नहीं है, किसी ख़ास शौक़ का नाम दीन नहीं है, अपने

मामूलात पूरे करने का नाम दीन नहीं है, अपनी आदत पूरी करने का नाम दीन नहीं, दीन नाम है उनकी इत्तिबा (पैरवी) का, वह जैसा कहें वैसा करने का नाम दीन है, उनको जो पसंद है उसको इख़्तियार करने का नाम दीन है, और अपने आपको उनके हवाले कर देने का नाम दीन है, वह जैसा करा रहे हैं वही बेहतर है, यह जो सदमा और हस्रत रहती है कि हम तो बीमार हो गये, इस वासते खड़े होकर नमाज़ नहीं पढ़ी जा रही है, लेट कर पढ़ रहे हैं, यह सदमा करने की बात नहीं, अरे अल्लाह तआला को यही पसंद है और जब यही पसंद है तो इस वक़्त का तक़ाज़ा यही है कि यह करो और उनको वैसा ही करना पसंद है, अगरचे उस वक़्त तुम को ज़बरदस्ती खड़े होकर नमाज़ पढ़ना पसंद है लेकिन अपनी तजवीज़ को फ़ना कर देने और अल्लाह तआला ने जैसा मुक़द्दर कर दिया उस पर राज़ी रहने का नाम बन्दगी है, अपनी तरफ़ से तजवीज़ करना कि यों होता तो यों कर लेता यह कोई बन्दगी नहीं।

अल्लाह तआला के सामने बहादुरी मत दिखाओ

जब अल्लाह तआला यह चाह रहे हैं कि बन्दा थोड़ा सा हाय हाय करे तो हाय हाय करो। एक बुज़ुर्ग दूसरे बुज़ुर्ग के पास अ़ियादत (मिज़ाज पूछने) के लिये गये तो देखा कि वे बुज़ुर्ग बड़ी सख़्त तक्लीफ़ में हैं लेकिन बजाये कुछ कराहने के अल्लाह अल्लाह और अल्हम्दु लिल्लाह–अल्हम्दु लिल्लाह का विर्द कर रहे हैं, इन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया भाई! यह तुम्हारा अल्हम्दु लिल्लाह कहना बड़ा क़ाबिले मुबारक बाद है लेकिन यह मौक़ा अल्लाह तआला से दुआ मांगने का है कि "या अल्लाह! मुझे आफ़ियत अ़ता फ़रमा दीजिये" इस वक़्त में "अल्हम्दु लिल्लाह" कहना यह अल्लाह

तआ़ला के सामने बहादुरी दिखाना है, कि अल्लाह मियां ! आप तो मुझे बीमार कर रहे हैं लेकिन मैं इतना बहादुर हूं कि मेरी ज़ुबान पर कभी आह नहीं आएगी, तो अल्लाह तआ़ला के सामने बहादुरी दिखाना यह कोई बन्दगी नहीं, अल्लाह तआ़ला के सामने आ़जज़ी दिखाना बन्दगी है, वे जब चाह रहे हैं कि बन्दा थोड़ा सा हाय हाय करके पुकारे तो आ़जिज़ और बेबस बन कर अल्लाह मियां को पुकारो। कैसे पुकारो? जैसे हज़रत अय्यूब अ़लै० ने पुकारा था :—

"انی مسنی الضروانت ارحم الراحمین"(سورۃ الانبیاء)

पैग़म्बर से ज़्यादा कौन बहादुर होगा इतनी ज़बरदस्त बीमारी और इतनी ज़बरदस्त तक्लीफ़ लेकिन अल्लाह मियां को पुकार रहे हैं कि: "مسنی الضر" ऐ अल्लाह ! मुझे तकलीफ़ पहुंच गई है: وانت ارحم الراحمین लिहाज़ा वह जब चाह रहे हैं कि उनको पुकारा जाये और आदमी थोड़ा सा कराहे तो फिर कराहने में ही मज़ा है, वह जैसा कहे उसी के करने में मज़ा है। अल्लाह मियां के सामने इतनी बर्दाश्त भी अच्छी नहीं यह भी बन्दगी के ख़िलाफ़ है ।

इन्सान का आला तरीन मक़ाम

याद रखो! इंसान का सब से ऊंचा मक़ाम जिससे ऊंचा मक़ाम कोई और नहीं हो सकता, वो अ़ब्दियत और अल्लाह तआ़ला की बन्दगी का मक़ाम है। अल्लाह तआ़ला ने कुरआन करीम में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के कितने औसाफ़ ब्यान फ़रमाये, फ़रमाया कि :

انا ارسلناك شاهدا ومبشرا ونذيرا وداعيا الى الله باذنه
وسرا جا منيرا (سورۃ الاحزاب)

यानी हमने आपको शाहिद, मुबश्शिर, नज़ीर, दाई और सिराजे मुनीर बना कर भेजा, देखिये इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की कितनी सिफ़तें ज़िक्र फ़रमायीं लेकिन जहां मेराज का ज़िक्र आया और अपने पास बुलाने का ज़िक्र फ़रमाया वहां हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिए "अब्द" का लफ़्ज़ ज़िक्र किया, फ़रमाया :

"سبحان الذی اسری بعبدہ" (سورۃ بنی اسرائیل)

यानी वह ज़ात पाक है जो अपने बन्दे को ले गया, यहां "शाहिद" "मुबश्शिर" और "सिराजे मुनीर" के अल्फ़ाज़ नहीं लाए बल्कि सिर्फ़ एक लफ़्ज़ "अब्द" (बन्दा) लाये यह बतलाने के लिये कि इंसान का सबसे ऊंचा मक़ाम अब्दियत (बन्दगी) का मक़ाम है अल्लाह तआला के सामने अपनी बन्दगी शिकस्तगी और आजज़ी का मक़ाम है।

तोड़ना है हुस्न का पिन्दार क्या ?

हमारे बड़े भाई थे मुहम्मद ज़की कैफ़ी मर्हूम अल्लाह तआला उनके दरजे बुलंद फ़रमाए। शेर बहुत अच्छे कहा करते थे, उन्हों ने एक बहुत अच्छा शेर कहा है लोग इसका सही मतलब नहीं समझते, इस बात को उन्होंने बड़े ख़ूबसूरत अंदाज़ में कहा है, कहते हैं कि :

इस क़दर भी ज़ब्ते ग़म अच्छा नहीं
तोड़ना है हुस्न का पिन्दार क्या । (कैफ़ियात)

यह जो ग़म को इतना ज़ब्त कर रहे हो कि मुंह से "आह" भी न निकले "कराह" भी न निकले तो क्या तुम उसके पिन्दार को तोड़ना चाहते हो जो तुम्हें इस ग़म में मुब्तला कर रहा है, उसका पिन्दार तोड़ना मक़सूद है? उसके आगे बहादुरी दिखाना चाहते हो? यह बन्दे का काम नहीं, बन्दे का काम तो यह है कि जब उसने एक तकलीफ़ दी तो उस तकलीफ़ का तक़ाज़ा यह है कि उस

तकलीफ़ के ख़ात्मे के लिये उसको पुकारा जाये, अगर उसने ग़म दिया है तो उस ग़म का इज़हार शरई हदों में रह कर किया जाये, जैसा कि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने किया कि जब बच्चे का इन्तिकाल हो गया तो फ़र्माया:

انا بفراقك يا ابراهيم لمحزونون (صحيح بخارى)

(ऐ इब्राहीम! हम तुम्हारी जुदाई पर बड़े ग़मगीन हैं)

बात यह है कि जिस हालत में अल्लाह तआला रखते हैं वही हालत पसंदीदा है, जब वह चाह रहे हैं कि लेट कर नमाज़ पढ़ो तो फिर लेट कर ही नमाज़ पढ़ो, उस वक़्त लेट कर पढ़ने ही में वह सवाब और वह अज्र है जो आम हालत में ख़ड़े होकर पढ़ने में है।

रमज़ान का दिन लौट आएगा

हमारे हज़रत डॉ० मुहम्मद अब्दुल हई साहिब रह० हज़रत थानवी रह० की बात नक़ल फ़रमाते थे कि एक शख़्स रमज़ान में बीमार हो गया और बीमारी की वजह से रोज़ा छोड़ दिया, अब उसको ग़म हो रहा है कि रमज़ान का रोज़ा छूट गया, हज़रत रह० फ़रमाते हैं कि ग़म करने की कोई बात नहीं यह देखो कि तुम रोज़ा किसके लिये रख रहे हो? अगर यह रोज़ा अपनी ज़ात के लिये रख रहे हो, अपनी ख़ुशी के लिये और अपना शौक़ पूरा करने के लिये रोज़ा रख रहे हो तो बेशक इस पर सद्मा करो कि बीमारी आ गई और रोज़ा छूट गया, लेकिन अगर अल्लाह तबारक व तआला के लिये रोज़ा रख रहे हो और अल्लाह तआला ने फ़रमा दिया की बीमारी में रोज़ा छोड़ दो तो मक़्सद फिर भी हासिल है। इसलिये कि हदीस शरीफ़ में है :

ليس من البر الصيام فى السفر (صحيح بخارى)

सफ़र की हालत में जब कि सख़्त मशक़्क़त हो उस वक़्त रोज़ा रखना कोई नेकी का काम नहीं, लेकिन क़ज़ा करने के बाद जब आम दिनों में रोज़ा रखोगे तो उसमें वे तमाम अनवार व बरकतें हासिल होंगी जो रमज़ान के महीने में हासिल होती थीं, गोया कि उस शख़्स के हक़ में रमज़ान का दिन लौट आएगा और रमज़ान के दिन रोज़ा रखने में जो फ़ायदा हासिल होता वह फ़ायदा उस दिन क़ज़ा करने में हासिल हो जाएगा। इसलिये अगर शरई उज़्र की वजह से रोज़े क़ज़ा हो रहे हैं, जैसे बीमारी है, सफ़र है या ख़्वातीन (औरतों) की तबई मजबूरी है, उसकी वजह से रोज़े क़ज़ा हो रहे हैं तो ग़मगीन होने की कोई बात नहीं, उस वक़्त में रोज़ा छोड़ देना और खाना पीना ही अल्लाह को पंसद है, और लोगों को जो रोज़ा रखने का सवाब मिल रहा है तुम्हें रोज़ा न रख कर वही सवाब मिल रहा है, और आम लोगों को भूखा रह कर जो सवाब मिल रहा है तुम्हें खाना खाकर मिल रहा है, और अल्लाह तआ़ला वही अनवार व बरकतें अ़ता फ़रमा रहे हैं जो आ़म रोज़ेदारों को अ़ता फ़रमा रहे हैं। और फिर जब बाद में उस रोज़े की क़ज़ा करोगे तो क़ज़ा के दिन रमज़ान की सारी बरकतें और सारे अनवार हासिल होंगे, घबराने की कोई बात नहीं।

अल्लाह तआ़ला टूटे हुए दिल में रहते हैं

और अल्लाह तआ़ला टूटे हुए दिलों के साथ होते हैं, बीमारी के अन्दर जो सदमा हो रहा है कि रोज़ा छूट गया उस सदमे से दिल टूटा दिल शकिस्ता हुआ दिल के इस टूटने के बाद अल्लाह तआ़ला उसको नवाज़ देते हैं चाहे सदमों से दिल टूटे या ग़मों से टूटे या इन्कार से टूटे या ख़ौफ़े ख़ुदा से टूटे या फ़िक्र से, किसी भी तरह हो बस जब दिल टूटता है तो अल्लाह तबारक व तआ़ला

की रहमतों के नाज़िल होने का मक़ाम बन जाता है एक रिवायत में है के अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि :–

انا عند المنكسرة قلوبهم من اجلى

मैं उन लोगों के पास हूँ जिनके दिल मेरी वजह से टूटे हों (अगरचे मुहद्दिसीन ने हदीस की हैसियत से इसको बे असल कहा है, लेकिन जो मायने इस में ब्यान किये गये हैं वे सही हैं) दिल पर ये जो चोटें पड़ती रहती हैं, इस तरह कि कभी कोई तक्लीफ़ आ गई, कभी कोई सदमा आ गया, कभी कोई परेशानी आ गयी यह दिल को तोड़ा जा रहा है, क्यों तोड़ा जा रहा है? इसको इसलिये तोड़ा जा रहा है कि इसको अपनी रहमतों और अपने फ़ज़्ल व करम के नाज़िल होने की जगह बनाया जा रहा है।

तू बचा बचा कर न रख इसे कि यह आईना है वह आईना
जो शिकस्ता हो तो अज़ीज़ तर है निगाहे आईना साज़ में।

यह दिल जितना टूटेगा उतना ही आईना साज़ यानी अल्लाह तआला की निगाह मैं अज़ीज़ होगा, हमारे हज़रत डॉक्टर मुहम्मद अ़ब्दुल हई साहिब रह० एक शेर सूनाया करते थे, फ़रमाते थे कि जब अल्लाह तआला किसी बन्दे के दिल को तोड़ते हैं तो उसके ज़रिये उसको बुलन्दी तक पहुंचा देते हैं, ये सदमे, ये फ़िक्रें ये ग़म जो इन्सान को आते हैं ये मुजाहदाते इज़्तिरारी (बे इख़्तियारी) होते हैं, जिसकी वजह से इन्सान के दर्जों मैं इतनी तरक़्क़ी होती है कि आ़म हालात में इतनी तरक़्क़ी नहीं होती, चुनांचे यह शेर अक्सर सूनाते थे।

यह कह के कासा साज़ ने प्याला पटक दिया
अब और कुछ बनाएंगे इसको बिगाड़ के।

जब यह दिल टूट टूट कर बिगड़ता है तो फिर वह अल्लाह

तआ़ला की तजल्लियात और उसकी रहमतों का मौरद (नाज़िल होने की जगह) बनता है, एक गज़ल का शेर हज़रते वाला सुनाया करते थे, फ़रमाते थे।

बुताने माह व शम्स उजड़ी हुई मन्ज़िल में रहते हैं
जिसे बरबाद करते हैं उसी के दिल में रहते हैं।

अल्लाह तबारक व तआ़ला टूटे हुए दिल में तजल्ली फ़रमाते हैं, इसलिये इन ग़मों और सदमों से डरो नहीं, ये आसूं जो गिर रहे हैं। यह दिल जो टूट रहा है। आहें जो निकल रही हैं। अगर अल्लाह जल्ल शानुहू पर ईमान है। अगर अल्लाह तआ़ला की तस्दीक़ दिल में है, तो ये सब चीज़ें तुम्हें कहीं से कहीं पहुंचा रही हैं।

वादी–ए–इश्क़ बसे दूर व दराज़ अस्त वले
तै शवद जादा सद साला बह आहे गाहे
(इक़बाल)

इश्क़ की वादी का रास्ता बड़ा लम्बा चौड़ा रास्ता है, लेकिन कभी कभी सौ साल का फ़ासला एक आन में तै हो जाता है। इसलिये इन सदमों और ग़मों और परेशानियों से घबराना नहीं चाहिये।

दीन तसलीम व रिज़ा के अ़लावा कुछ नहीं

अल्लाह तआ़ला हमारे दिलों में यह बात उतार दे कि दीन अपना शौक़ पूरा करने का नाम नहीं, अपनी आ़दत पूरी करने का नाम दीन नहीं। दीन इसका नाम है कि जिस वक़्त जो काम करने को कहा जा रहा है वह करें। न किसी अ़मल में कुछ रखा है, न नमाज़ में कुछ रखा है, न रोज़े में कुछ रखा है। किसी अ़मल में कुछ नहीं रखा। जो कुछ है वह उनकी रिज़ा में है।

इश्क़ तसलीम व रिज़ा के मा सिवा कुछ भी नहीं
वह वफ़ा से ख़ुश न हों तो फिर वफ़ा कुछ भी नहीं
(कैफ़ियात, ज़की कैफ़ी)

अल्लाह तबारक व तआ़ला जिस काम से खुश हों। वही काम करने का है। उसी काम में मज़ा है।

न तो है हिज्र ही अच्छा न विसाल अच्छा है
यार जिस हाल में रखे वही हाल अच्छा है
(ग़ालिब)

अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से यह बात हमारे दिलों में जमा दे तो दीन को समझने के रास्ते खुल जायें।

तीमार दारी में मामूलात का छूटना

और यह जो बताया कि बीमारी की हालत में अगर मामूलात छूट जायें तो उस पर वही कुछ लिखा जा रहा है जो सेहत की हालत में करने से मिलता। उलमा-ए-किराम ने फ़रमाया कि इसमें जिस तरह अपनी बीमारी दाख़िल है, उन लोगों की बीमारी भी दाख़िल है जिनकी तीमार दारी और ख़िदमत इन्सान के फ़राईज़ में शामिल है। किसी के माँ बाप बीमार हो गये। अब दिन रात उनकी ख़िदमत में लगा हुआ है। उनकी ख़िदमत में लगे रहने की वजह से मामूलात छूट गये, अब न तिलावत हो रही है, न नवाफ़िल हो रहे हैं। न ज़िक्र है न तसबीह है। सब कुछ छूटा जा रहा है। और दिन रात माँ बाप की ख़िदमत में लगा हुआ है। उसका भी यही हुक्म है। अगरचे खुद बीमार नहीं है, लेकिन फिर भी जो आमाल छूट रहे हैं वे आमाल अल्लाह तआ़ला के यहाँ लिखे जा रहे हैं। क्यों?

वक़्त का तक़ाज़ा देखो

इसलिये कि हमारे हज़रत डा० मुहम्मद अबदुल हई साहिब रह० बड़े काम की बात फ़रमाया करते थे। हक़ीक़त यह है कि बुज़ुर्गों की छोटी छोटी बातों से इंसान की ज़िन्दगी दुरूस्त करने के दरवाज़े खुल जाते हैं। फ़रमाते थे मियां! हर वक़्त का तक़ाज़ा देखो। उस वक़्त का तक़ाज़ा क्या है? यह न सोचो कि इस वक़्त मेरा किस काम को दिल चाह रहा है। दिल चाहने की बात नहीं। बल्कि यह देखो उस वक़्त तक़ाज़ा किस काम का है? उस तक़ाज़े को पूरा करो। यही अल्लाह तबारक व तआला की मर्ज़ी है। तुमने तो अपने ज़ेहन मे बिठा रखा था कि रोज़ाना तहज्जुद पढ़ा करूंगा, रोज़ाना इतने पारे तिलावत किया करूंगा। रोज़ाना इतनी तसबीहात पढ़ा करूंगा, अब जब इन कामों का वक़्त आया तो दिल चाह रहा है कि ये काम मैं पूरे करूं, और ज़ेहन पर उस काम का बोझ है। अब बिल्कुल वक़्त पर घर में से बीमार हो गयीं। और इसके नतीजे में उसकी तीमार दारी, इलाज और दवा दारू में लगना पड़ा। और उसमें लगने की वजह से वह मामूल छूटने लगा। उस वक़्त बड़ा दिल कुढ़ता है। कि क्या हो गया। मेरा तो आज का मामूल क़ज़ा हो जायेगा। इस वक़्त तो मैं बैठ कर तिलावत करता। ज़िक्र व तसबीह करता, अब मारा मारा फिर रहा हूँ कि कभी डाक्टर के पास, कभी हकीम के पास, कभी दवाख़ाने, यह में किस चक्कर में फंस गया। अरे! अल्लाह तआला ने जिस चक्कर में डाला, उस वक़्त का तक़ाज़ा यह है कि वह करो, अगर उस वक़्त वह काम छोड़ कर तिलावत करने बैठ जाओगे तो वह अल्लाह तआला को पसन्द नहीं। अब वक़्त का तक़ाज़ा यह है कि यह काम करो। अब इसी में वह सवाब मिलेगा जो तिलावत करने में मिलता। इसी में

वह सवाब मिलेगा जो तसबीहों में मिलता। यह है असल दीन।

अपना शौक़ पूरा करने का नाम दीन नहीं

हमारे हज़रत मौलाना मसीहुल्लाह साहिब रह० अल्लाह उनके दर्जे बुलन्द फ़रमाए, आमीन। उन हज़रात में से थे जिनके दिल में अल्लाह तआला कांटे की बात डाला करते थे, वह फ़रमाया करते थे कि भाई : अपना शौक़ पूरा करने का नाम दीन नहीं, अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पैरवी का नाम दीन है, इसका नाम दीन नहीं कि फ़लां काम का शौक़ हो गया, लिहाज़ा अब तो वही काम करोगे, जैसे इल्मे दीन पढ़ने और आलिम बनने का शौक़ हो गया – इससे नज़र हटा कर कि तुम्हारे लिये आलिम बनना जायज़ भी है या नहीं? घर में माँ बीमार पड़ी है बाप बीमार पड़ा है– और घर में दूसरा कोई तीमार दारी करने वाला और उनकी देख भाल करने वाला मौजूद नहीं लेकिन आपको शौक़ हो गया कि आलिम बनेंगे चुनांचे मां बाप को बीमार छोड़ कर मदरसे में पढ़ने चले गए यह दीन का काम नहीं है, यह अपना शौक़ पूरा करना है दीन का काम तो यह है कि यह सब छोड़ कर मां की ख़िदमत करो बाप की ख़िदमत करो।

मुफ़्ती बनने का शौक़

या जैसे तख़स्सुस पढ़ने और मुफ़्ती साहिब बनने का शौक़ हो गया, बहुत से तलबा मुझसे कहते हैं कि हमें तख़स्सुस पढ़ने का बड़ा शौक़ है और हम फ़त्वा लिखना सीखना चाहते हैं, उनसे पूछा कि आपके वालिदैन की क्या मन्शा है? जवाब दिया कि वालिदैन तो राज़ी नहीं हैं। अब देखिये कि वालिदैन तो राज़ी नहीं हैं और यह मुफ़्ती साहिब बनना चाहते हैं यह दीन नहीं है यह अपना शौक़ पूरा करना है।

तबलीग़ करने का शौक़

या जैसे तबलीग़ करने का और चिल्ले में जाने का शौक़ हो गया, वैसे तो तबलीग़ करना बड़ी फ़ज़ीलत का और सवाब का काम है लेकिन घर में बीवी बीमार पड़ी है, कोई देख भाल करने वाला नहीं है और आपको चिल्ला करने का शौक़ हो गया, यह दीन नहीं है यह अपना शौक़ पूरा करना है, अब उस वक़्त दीन का तक़ाज़ा और वक़्त का तक़ाज़ा यह है कि उस बीमार की तीमार दारी करो और उसका ख़्याल करो और उसका इलाज करो यह दुनिया नहीं है यह भी दीन है।

मस्जिद में जाने का शौक़

हज़रत मौलाना मसीहुल्लाह ख़ान साहिब रह० ने एक मर्तबा मज्लिस में इस पर यह मिसाल दी कि एक शख़्स जंगल और वीराने में अपनी बीवी के साथ रहता है और आस पास में कोई आबादी भी नहीं, बस यही मियां बीवी दोनों अकेले रहते हैं, अब मियां साहिब को आबादी की मस्जिद में जाकर जमाअ़त के साथ नमाज़ पढ़ने का शौक़ लग गया, अब बीवी कहती है कि यह तो जंगल और वीराना है अगर तुम नमाज़ पढ़ने आबादी की मस्जिद में चले गये तो मुझे इस वीराने में डर लगेगा, और डर के मारे मेरी जान निकल जाएगी, इसलिये बजाए मस्जिद जाने के आज तुम यहीं नमाज़ पढ़ लो, हज़रत फ़रमाते हैं कि वह मियां साहिब तो थे शौक़ीन चुनांचे शौक़ में आकर अपनी बीवी को वहीं जंगल में अकेला छोड़ छाड़ कर चले गये, फ़रमाया कि यह शौक़ पूरा करना है, यह दीन नहीं है, इसलिये कि उस वक़्त का तक़ाज़ा यह था कि वह घर में नमाज़ पढ़ता और अपनी बीवी की यह परेशानी दूर करता।

यह उस वक़्त है जहां बिल्कुल वीराना है कोई आबादी नहीं है, अलबत्ता जहां आबादी हो तो वहां मस्जिद में जाकर नमाज़ पढ़नी चाहिये।

लिहाज़ा अपना शौक़ पूरा करने का नाम दीन नहीं है कसी को जिहाद में जाने का शौक़, किसी को तबलीग़ में जाने का शौक़, कसी को मौलवी बनने का शौक़ और उस शौक़ को पूरा करने के नतीजे में उन हुकूक़ का कोई ख़्याल नहीं जो उस पर लागू हो रहे हैं, इस बात का कोई ख़्याल नहीं कि उस वक़्त में उन हुकूक़ का तक़ाज़ा क्या है?

यह जो कहा जाता है कि किसी शेख़ से ताल्लुक़ क़ायम करो यह हक़ीक़त में इसी लिये है, वह बताता है कि इस वक़्त क्या तक़ाज़ा है? इस वक़्त तुम्हें कौन सा काम करना चाहिये? अब ये बातें जो इस वक़्त कह रहा हूं इसको कोई आगे इस तरह नक़ल कर देगा कि वह मौलाना साहिब तो यह कह रहे थे कि मुफ़्ती बनना बुरी बात है, या तबलीग़ करना बुरी बात है, वह साहिब तो तबलीग़ के मुख़ालिफ़ हैं कि तबलीग़ में और चिल्ले में नहीं जाना चाहिये या जिहाद में नहीं जाना चाहिये। अरे भाई ये सब काम अपने अपने वक़्त पर अल्लाह तआला की रिज़ा के काम हैं। यह देखो कि किस वक़्त का क्या तक़ाज़ा है? तुम से किस वक़्त क्या मुतालबा हो रहा है? उस मुतालबे और तक़ाज़े पर अ़मल करो, अपने दिल व दिमाग़ से एक रास्ता मुताय्यन कर लिया और उस पर चल खड़े हुए यह दीन नहीं है, दीन यह है कि यह देखो कि वह क्या कह रहा है वह इस वक़्त किस बात का हुक्म दे रहा है?

सुहागन वह जिसे पिया चाहे

मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह०

हिन्दी ज़ुबान की एक मिसाल बहुत कसरत से सुनाया करते थे फ़रमाते किः

"सुहागन वह जिसे पिया चाहे"

किस्सा यों है कि एक लड़की को दुल्हन बनाया जा रहा था और उसका सिंघार पिटार किया जा रहा था, अब जो कोई आता उसकी तारीफ़ करता कि तू बड़ी अच्छी लग रही है, तू बड़ी ख़ूबसूरत लग रही है, तेरा चेहरा इतना ख़ूबसूरत है, तेरा जिस्म इतना ख़ूबसूरत है, तेरा ज़ेवर इतना ख़ूबसूरत है। उसकी एक एक चीज़ की तारीफ़ की जा रही थी लेकिन वह लड़की हर एक की तारीफ़ सुनती लेकिन ख़ामोश रहती और सुनी अनसुनी कर देती, किसी ख़ुशी का इज़हार न करती। लोगों ने उससे कहा कि ये तेरी सहेलियां तेरी इतनी तारीफ़ कर रही हैं तुझे इससे कोई ख़ुशी नहीं हो रही है? उस लड़की ने जवाब दिया कि इनकी तारीफ़ से क्या ख़ुशी हो, इसलिये कि ये जो कुछ तारीफ़ें करेंगी वे हवा में उड़ जाएंगी, बात जब है कि जिसके लिये मुझे संवारा जा रहा है वह तारीफ़ करे, वह पसंद करके कह दे कि हां! तू अच्छी लग रही है, तब तो फ़ायदा है और इसके नतीजे में मेरी ज़िन्दगी संवर जायेगी, लेकिन अगर ये औरतें तो तारीफ़ करके चली गयीं और जिसके लिये मुझे संवारा गया था उसने ना पसंन्द कर दिया तो फिर दुल्हन बनने और इस सिंघार पिटार का क्या फ़ायदा?

बन्दा दो आलम से ख़फ़ा मेरे लिये

यह किस्सा सुनाने के बाद हज़रत वालिद साहिब ने फ़रमाया कि यह देखो कि जो काम तुम कर रहे हो, जिसके लिये कर रहे हो उसको पंसद है या नहीं? लोगों ने तो तारीफ़ कर दी कि बड़े मुफ़्ती साहिब हैं, बड़े आलिम और बड़े मौलाना साहिब हैं। लोगों ने

तारीफ़ कर दी कि तबलीग़ में बहुत वक़्त लगाया और अल्लाह के रास्ते में निकलता है, किसी के बारे में कह दिया कि यह मुजाहिदे आज़म हैं, अरे इन लोगों के कहने से क्या हासिल! जिसके लिये कर रहे वह यह कह दे कि :

तौहीद तो यह है कि ख़ुदा हश्र में कह दे
यह बन्दा दो आलम से ख़फ़ा मेरे लिये है।

(ज़फ़र अली ख़ान)

उस वक़्त फ़ायदा है। इसलिये जब हर काम का मक़्सद उनको राज़ी करना है तो फिर हर वक़्त इन्सान को यह फ़िक्र होनी चाहिये कि इस वक़्त मुझसे क्या मुतालबा हो रहा है?

अज़ान के वक़्त ज़िक्र छोड़ दो

अच्छे ख़ासे अल्लाह के ज़िक्र में मश्गूल थे लेकिन जैसे ही अज़ान की आवाज़ कान में पड़ी हुक्म आ गया कि ज़िक्र छोड़ दो और ख़ामोश होकर मुअज़्ज़िन की आवाज़ सुनो और उसका जवाब दो। अगरचे वक़्त ज़ाया हो रहा है, अज़ान के वक़्त अगर ज़िक्र करते रहते तो कई तस्बीहें और पढ़ लेते मगर ज़िक्र से रोक दिया गया, जब रोक दिया तो अब रुक जाओ, अब ज़िक्र में फ़ायदा नहीं, अब अज़ान सुनने और उसका जवाब देने में फ़ायदा है।

जो कुछ है वह हमारे हुक्म में है

अल्लाह तआला ने हज बड़ी अजीब व ग़रीब इबादत बनाई है, अगर आप हज की आशिक़ाना इबादत को शुरु से आख़िर तक देखेंगे तो यह नज़र आएगा कि अल्लाह तबारक व तआला ने क़दम क़दम पर क़ायदों के बुत तोड़े हैं, अब देखें कि मस्जिदे हराम में एक नमाज़ का सवाब एक लाख नमाज़ों के बराबर है लेकिन आठ ज़िलहिज्जा को यह हुक्म दिया जाता है कि मस्जिदे

हराम छोड़ दो और मिना में जाकर पड़ाव डालो, वहां न हरम न काबा और न वहां पे कोई काम, न वुकूफ़ है न रमी–ए–जमरात है बस यह हुक्म दे दिया कि एक लाख नमाज़ों का सवाब छोड़ दो और मिना के जंगल में जाकर पांच नमाज़ें अदा करो। यह सब क्यों है? इसलिये कि यह बताना ज़रुरी है कि न इस काबे में कुछ रखा है और न हरम में कुछ रखा है, न मस्जिदे हराम में कुछ रखा है जो कुछ है वह हमारे हुक्म में है जब हमने कह दिया कि मस्जिदे हराम में जाकर नमाज़ पढ़ो तो अब एक लाख नमाज़ों का सवाब मिलेगा। और जब हमने कह दिया कि मस्जिदे हराम को छोड़ दो अब अगर कोई शख़्स मस्जिदे हराम में नमाज़ पढ़ेगा तो एक लाख नमाज़ों का सवाब तो क्या मिलेगा बल्कि उल्टा गुनाह होगा, इसलिये कि उसने हमारे हुक्म को तोड़ दिया है।

नमाज़ अपनी ज़ात में मक़सूद नहीं

कुरआन व सुन्नत में नमाज़ वक़्त पर पढ़ने की बहुत ताकीद आयी है फ़रमाया कि :

إِنَّ الصَّلَاةَ كَانَتْ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ كِتَابًا مَّوْقُوْتًا (سورة النساء ١٠٣)

नमाज़ को वक़्त के साथ पाबन्द किया गया है वक़्त गुज़रने से पहले नमाज़ पढ़ लो, मग़रिब की नमाज़ के बारे में हुक्म दे दिया कि जल्दी करो जितनी जल्दी हो सके पढ़ लो देर न हो, लेकिन अरफ़ात के मैदान में मग़रिब की नमाज़ जल्दी पढ़ोगे तो नमाज़ ही न होगी। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मग़रिब के वक़्त अरफ़ात के मैदान से निकल रहे हैं और हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु बार बार फ़रमाते हैं कि "अस्सलातु या रसूलल्लाह "अस्सलातु या रसूलल्लाह" और हुज़ूरे अक़्दस सल्ल–ल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमा रहे हैं कि "अस्सलातु अमामक"

(नमाज़ तुम्हारे आगे है) सबक़ यह दिया जा रहा है कि यह मत समझ लेना कि इस मग़रिब के वक़्त में कुछ रखा है, अरे भाई! जो कुछ है वह हमारे हुक्म में है, जब हमने कहा कि जल्दी पढ़ो तो जल्दी पढ़ना सवाब का सबब था और जब हमने कहा कि मग़रिब का यह वक़्त गुज़ार दो और मग़रिब की नमाज़ इशा की नमाज़ के साथ मिला कर पढ़ो तो अब तुम्हारे ज़िम्मे वही फ़र्ज़ है, हज में क़दम क़दम पर अल्लाह तबारक व तआला ने क़ायदों के बुत तोड़े हैं, असर की नमाज़ में जल्दी करा दी और मग़रिब की नमाज़ में देर करा दी, हर काम उल्टा कराया जा रहा है और तरबियत इस बात की दी जा रही है कि किसी चीज़ को अपनी ज़ात में मक़्सूद न समझना, न नमाज़ अपनी ज़ात में मक़्सूद है न रोज़ा अपनी ज़ात में मक़्सूद है, न कोई और इबादत अपनी ज़ात में मक़्सूद है, मक़्सूद अल्लाह जल्ल शानुहू की फ़रमांबरदारी है।

इफ़्तार में जल्दी क्यों?

यह जो हुक्म दिया गया कि इफ़्तार में जल्दी करो और बिला वजह इफ़्तार में देर करना मुक्रूह है, क्यों? इसलिये कि अब तक तो भूखा रहना और न खाना सवाब का काम था, प्यासा रहना सवाब का सबब था, इसकी बड़ी फ़ज़ीलत और बड़ा अज्र व सवाब था लेकिन जब हमने कह दिया कि खाओ, अब खाने में देर करना गुनाह है, इसलिये कि अब अगर खाने में देर करोगे तो अपनी तरफ़ से रोज़े में इज़ाफ़ा करना लाज़िम आएगा।

सहरी में देर क्यों?

सहरी में देर अफ़्ज़ल है, अगर कोई शख़्स पहले से सहरी खाकर सो जाये तो यह सुन्नत के ख़िलाफ़ है बल्कि बिल्कुल वक़्त पर जब सहरी का वक़्त ख़त्म हो रहा हो उस वक़्त खाना अफ़्ज़ल

है, क्यों? इसलिये अगर पहले से कोई शख़्स सहरी खा कर सो जाए तो उसने अपनी तरफ़ से रोज़े की मिक्दार में इज़ाफ़ा कर दिया, वह फ़रमांबरदारी में नहीं कर रहा है बल्कि अपनी तरफ़ से कर रहा है, ख़ुलासा यह है कि सारी बात उनकी फ़रमांबरदारी में है, हम उनके बन्दे हैं और बन्दे के मायने यह हैं कि जो कहें वह करो।

"बन्दा" अपनी मरज़ी का नहीं होता

हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद हसन साहिब रह० फ़रमाया करते थे कि भाई! एक होता है 'मुलाज़िम' और 'नौकर' मुलाज़िम और नौकर ख़ास वक़्त और ख़ास ड्यूटी का होता है, जैसे एक मुलाज़िम का काम सिर्फ़ झाड़ू देना है कोई दूसरा काम उसके ज़िम्मे नहीं, या एक मुलाज़िम आठ घन्टे का मुलाज़िम है आठ घन्टे के बाद उसकी छुट्टी, और एक होता है 'ग़ुलाम' जो न वक़्त का होता है और न ड्यूटी का होता है, वह तो हुक्म का है, अगर मालिक उससे कहे कि तुम यहां क़ाज़ी और जज बन कर बैठ जाओ और लोगों के दरमियान फ़ैसले करो तो वह क़ाज़ी बन कर फ़ैसले करेगा, और अगर मालिक उससे कह दे कि पाख़ाना उठाओ तो वह पाख़ाना उठाएगा, उसके लिये न वक़्त की क़ैद है और न काम की क़ैद है बल्कि मालिक जैसा कह दे ग़ुलाम को वैसा ही करना होगा।

'ग़ुलाम' से आगे भी एक दर्जा और है वह है 'बन्दा' वह ग़ुलाम से भी आगे है इसलिये कि 'ग़ुलाम' कम से कम अपने मालिक की प्रस्तिश (पूजा) तो नहीं करता है लेकिन 'बन्दा' अपने आक़ा की इबादत और प्रस्तिश भी करता है और 'बन्दा' अपनी मरज़ी का नहीं होता है बल्कि अपने आक़ा की मर्ज़ी का होता है, वह जो कहे वह करे, दीन की रूह और हक़ीक़त यही है।

बताओ! यह काम क्यों कर रहे हो?

मैंने सुबह से शाम तक का एक निज़ाम बना रखा है कि उस वक़्त तस्नीफ़ करनी है उस वक़्त दर्स देना है, उस वक़्त फ़लाँ काम करना है। तस्नीफ़ के वक़्त जब तस्नीफ़ करने बैठे मुताला किया और अभी ज़ेहन को लिखने के लिये तैयार किया और क़लम उठाया ही था, यह सोच कर कि यों लिखना चाहिये कि इतने में एक साहिब आ गये और आकर 'अस्सलामु अ़लैकुम' कहा और मुसाफ़े के लिये हाथ बढ़ा दिया, अब उस वक़्त बड़ा दिल कुढ़ता है कि यह ख़ुदा का बन्दा ऐसे वक़्त आ गया बड़ी मुश्किल से अभी तो किताबें देख कर लिखने के लिये ज़ेहन बनाया था और यह साहिब आ गये और उसके साथ पांच दस मिन्ट बातें कीं इतने में जो कुछ ज़ेहन में आया था वह सब निकल गया, अब उसको नये सिरे से ज़ेहन में जमा किया इस तरह सुबह से शाम तक यह धन्धा होता रहता है। ऐसे वक़्त मैं बड़ी कुढ़न होती है कि हमने सोचा था कि इस वक़्त में इतना काम हो जाएगा दो तीन सफ़े (पेज) लिख लेंगे लेकिन सिर्फ़ चन्द लाइनों से ज़्यादा काम नहीं हुआ, अल्लाह तआ़ला हज़रत डॉक्टर मुहम्मद अ़ब्दुल हई साहिब के दरजों को बुलन्द करे, फ़रमाते थे कि मियां! यह बताओ कि यह काम क्यों कर रहे हो? यह तस्नीफ़ यह तदरीस यह फ़त्वा किसके लिये है? क्या यह सब इसलिये है कि तुम्हारी सवानेह हयात (जीवनी) में लिखा जाये कि इतने हज़ार सफ़्हात तस्नीफ़ कर गया और इतनी बहुत सी तसानीफ़ और किताबें लिखीं, या इतने बहुत शागिर्द पैदा कर दिये, अगर ये सब काम इसलिये कर रहे हो तो बेशक इस पर अफ़्सोस करो कि उस शख़्स की मुलाक़ात की वजह से हरज हुआ और तायदाद में इतनी कमी हो गयी, जितने सफ़्हात लिखना

चाहते थे उतने न लिख सके, जितने शागिरदों को पढ़ाना चाहते थे उतनों को न पढ़ाया, इस पर अफ़सोस करो, लेकिन यह सोचो की इसका हासिल क्या है? सिर्फ़ लोगों की तरफ़ से तारीफ़, ख़ूबी, शोहरत, फिर तो ये सब काम अकारत हैं, अल्लाह तबारक व तआला के यहां उसकी एक धेला क़ीमत नहीं और अगर मक़्सूद उनकी रिज़ा है कि वह राज़ी हो जाऐ, यह क़लम इसलिये हिल रहा है कि वह राज़ी हो जाएं, उनके यहां यह अमल मक़बूल हो जाए तो जब मक़्सूद उनकी रिज़ा है वह क़लम हिले य न हिले, वह क़लम हिलने से राज़ी हों तो क़लम हिलाना बेहतर है अगर क़लम न हिलने से राज़ी हो जाएं तो वही बेहतर है। बस देखो कि वक़्त का क्या तक़ाज़ा है, तुमने बेशक अपने ज़ेहन में यह मनसूबा बनाया था कि आज दो सफ़े (पेज) हो जाएं लेकिन वक़्त का तक़ाज़ा यह हुआ कि एक ज़रुरत–मंद आ गया, वह कोई मस्अला पूछ रहा है, कोई अपनी ज़रुरत लेकर आया है, उसका भी हक़ है उसका हक़ अदा करो, अब वह उसका हक अदा करने में राज़ी है, उससे बात करने में उसको मस्अला बताने में वह राज़ी है तो फिर घबराने की क्या ज़रुरत है, कि मेरा यह मामूल रह गया, अब तुम्हारी तस्नीफ़ में इतना सवाब नहीं जितना उस शख़्स की हाजत पूरी करने में सवाब है। बस! यह देखो कि वक़्त का तक़ाज़ा क्या है? जिस वक़्त का जो तक़ाज़ा हो उसके मुताबिक़ अमल करो, यह है दीन की समझ, कि अपनी तरफ़ से कोई तज्वीज़ नहीं हर बात उनके हवाले है वह जैसा करा रहे हैं इन्सान वैसा कर रहा है। अल्लाह तबारक व तआला की रिज़ा किस में है उसके मुताबिक़ अमल करो, बीमारी हो तो, सफ़र हो तो, हज़र हो तो, सेहत हो तो, हर हालत में उनकी रिज़ा की फ़िक्र करो, इसलिये यह नही सोचना

चाहिये कि हमने मन्सूबे बनाये थे वे मन्सूबे टूट गये, अरे वे मन्सूबे तो थे ही टूटने के लिये, इन्सान क्या? और उसका मन्सूबा क्या? मन्सूबा तो उन्हीं का चलता है, किसी का मन्सूबा नहीं चलता। जब बीमारी आ गयी तो मन्सूबा टूटेगा, सफ़र आ गया तो मन्सूबा टूटेगा, जब आरज़े पेश आयेंगे तो मन्सूबा टूटेगा। मन्सूबे के पीछे मत चलो, उनकी रिज़ा को देखो इन्शा अल्लाह मक़्सद हासिल हो जायेगा।

हज़रत उवैस क़रनी रह०

हज़रत उवैस क़रनी रह० को सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का दीदार (देखना) न मिला, कौन मुसलमान ऐसा होगा जिसको सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत और दीदार की ख़्वाहिश न हो ख़्वाहिश तो क्या? तड़प न हो, जब कि दीदार हो भी सकता हो, आपके ज़माना-ए-मुबारक में मौजूद भी हो, लेकिन सरकार की तरफ़ से हुक्म यह हो गया कि तुम्हें दीदार नहीं करना तुम्हें अपनी मां की ख़िदमत करनी है, अब मां की ख़िदमत हो रही है और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का दीदार छोड़ा जा रहा है, क्यों? इसलिये कि उनको यह फ़रमा दिया कि फ़ायदा इसमें है कि हमारा हुक्म मानो, हमारा हुक्म यह है कि मदीना न जाओ, हमारा हुक्म यह है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में न हाज़िर हो, हुज़ूर की ज़ियारत न करो बल्कि हुज़ूर की कही हुई बात पर अ़मल करो, अब मां की ख़िदमत कर रहे हैं और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिदायत पर अ़मल किया और दीदार से महरूम हैं। इसका नतीजा क्या हुआ? कि जब हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिदायत पर अ़मल किया और दीदार से महरूम रहे तो जो लोग दीदार से

मुशर्रफ़ हुए थे जिनको सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का दीदार हुआ था, यानी सहाबा–ए–किराम वे आ आ कर हज़रत उवैस रह० से दुआएं कराते थे कि खुदा के वासते हमारे लिये दुआ कर दो, बल्कि हदीस में आता है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि० से फ़रमाया था कि वहां कर्न में मेरा एक उम्मती है जिसने मेरे हुक्म की खातिर और अल्लाह की रिज़ा की ख़ातिर मेरे दीदार को कुरबान किया है, ऐ उमर वह जब कभी मदीना आएं तो जाकर उनसे अपने हक़ में दुआ कराना, अगर कोई शौकीन होता तो कहता कि मुझे तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दीदार का शौक़ है और यह देखे बग़ैर कि मेरी मां बीमार है और उसको मेरी ख़िदमत की हाजत है दीदार के शौक़ में चल खड़ा होता। क्यों? सिर्फ़ अपना शौक़ पूरा करने के लिये, लेकिन वह अल्लाह के बन्दे हैं और हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाये हुए हैं इसलिये जो आपने फ़रमाया वह करते हैं, मेरा शौक़ कुछ नहीं, मेरी तजवीज़ कुछ नहीं, मेरी राये कुछ नहीं, बल्कि जो उन्हों ने फ़रमाया वही बर्हक़ है, उस पर अ़मल करना है। (मुस्लिम शरीफ़)

तमाम बिद्अ़तों की जड़ यह है

और ये सारी बिद्अ़तें जितनी रिवाज में हैं उन सब की जड़ यहां से कटती है, अगर यह समझ दिल में पैदा हो जाये कि हमारा शौक़ कुछ नहीं वह जो हुक्म दें उस पर अ़मल करना है। बिद्अ़त के मायने क्या हैं? बिद्अ़त के मायने यह हैं कि हम खुद रास्ता निकालेंगे कि अल्लाह को राज़ी करने का क्या रास्ता है? अल्लाह तआ़ला से नहीं पूछेंगे, हमें यह समझ में आ रहा है कि १२ रबीउल

अव्वल को ईद मीलादुन्नबी मनाना और मीलाद पढ़ना यह सही तरिक़ा है, अपने दिमाग़ से यह रास्ता निकाला और उस पर अ़मल शुरू कर दिया, न हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया न अल्लाह तआ़ला ने कहा और न सहाबा –ए–किराम ने इस पर अ़मल किया बल्कि हमने अपने दिमाग़ से निकाल दिया कि यह सवाब का ज़रिया है, कसी के मरने के बाद उसका तीजा करना अपने दिमाग़ से निकाल लिया अल्लाह और उसके रसूल से पूछे बग़ैर उस पर चल खड़ा हुआ, इसी का नाम बिद्अ़त है, इसी के बारे में फ़रमायाः

كل محدث بدعة وكل بدعة ضلالة (نسائى شريف)

यानी हर बिद्अ़त गुमराही है, अब बज़ाहिर देखने में तीजा एक अच्छा अ़मल है कि बैठ कर कुरआन शरीफ़ पढ़ रहे हैं खाना पका कर लोगों में तक़्सीम कर रहे हैं, इसमें क्या हरज है? और इसमें क्या गुनाह है? गुनाह इसमें यह है कि अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल से पूछे बग़ैर किया है और जो काम ज़ाहिर में नेक हो लेकिन उनके बताए हुए तरीक़े के ख़िलाफ़ किया जाए वह अल्लाह के यहां कुबूल नहीं।

मेरे महबूब मेरी ऐसी वफ़ा से तौबा
जो तेरे दिल की कदूरत का सबब बन जाये।

(कैफ़ियाते ज़की कैफ़ी ७८)

यानी जो चीज़ ज़ाहिर में वफ़ादारी नज़र आ रही है लेकिन हक़ीक़त में तेरे दिल की कदूरत का सबब बन रही है ऐसी वफ़ादारी से तौबा मांगता हूँ और इसी का नाम बिद्अ़त है, जिस हाल में अल्लाह तआ़ला रखें बस उसी हाल में खुश रहो और उसका तक़ाज़ा पूरा करो।

अपना मामला अल्लाह मियां पर छोड़ दो

मौलाना रूमी रह० ने क्या अच्छी बात इरशाद फ़रमाई किः

चूंकि बर मेख़्त ब—बन्दद बस्ता बाश
चूं कुशायद चाबुक बर्जस्ता बाश

वह अगर तुम्हें हाथ पावं बांध कर डाल दें तो बंधे पड़े रहो और जब खोल दें तो फिर छलांगें लगाओ और नबी—ए—करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम भी यही तलक़ीन फ़रमाते हैं कि बीमारी की वजह से घबराओ नहीं, रुख़्सत पर अ़मल करना भी बड़ा सवाब का काम है और अल्लाह तआ़ला को बहुत पंसद है कि मेरे बन्दे ने मेरी दी हुई रुख़्सत (छूट) पर अ़मल किया और उस रुख़्सत को भी पूरे एहतिमाम के साथ इसतेमाल करो। अल्लाह तआ़ला यह बात हमारे दिलों में उतार दे —आमीन—

शुक्र की अहमियत और उसका तरीक़ा

इस बाब की आख़री हदीस हैः

عن انس رضی الله عنه قال قال رسول الله صلی الله علیه وسلم ان الله لیرضی عن العبدان یاکل الاکلة فیحمده علیها او یشرب الشربة فیحمده علیها (مسلم شریف)

हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि नबी करीम सल्ल—ल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला उस बन्दे को बहुत पंसद करते हैं और उस से राज़ी हो जाते हैं जो बन्दा कोई लुक़्मा खाता है तो अल्लाह का शुक्र अदा करता है और पानी का कोई घूंट पीता है तो अल्लाह का शुक्र अदा करता है, अल्लाह तआ़ला उस से राज़ी हो जाता है।

यह बात बार बार अर्ज़ कर चुका हूँ कि एक शुक्र सौ इबादतों की एक इबादत है और हमारे हज़रत डॉक्टर अ़बदुल हई साहिब

रह० फ़रमाया करते थे कि कहां करोगे मुजाहदे और रियाज़तें और कहां वे मशक़्क़तें उठाओगे जैसी सूफ़या–ए–किराम न उठाई हैं? लेकिन यह एक चुटकला इख़्तियार करलो कि हर बात पर शुक्र अदा करने की आदत डाल लो। खाना खाओ तो शुक्र, पानी पियो तो शुक्र, हवा चले तो शुक्र, बच्चा सामने आये, अच्छा लगे तो शुक्र, घर वालों को देखो और देख कर राहत हो तो शुक्र अदा करो, शुक्र अदा करने की आदत डालो और रट लगाओ

اَلْحَمْدُلِلّٰهِ اَللّٰهُمَّ لَكَ الْحَمْدُ وَ لَكَ الشُّكْرُ اَللّٰهُمَّ لَكَ الْحَمْدُ وَ لَكَ الشُّكْرُ

अल्हम्दु लिल्लाहि अल्लाहुम्–म लकल् हम्दु व लकश्शुक्रु अल्लाहुम्–म लकल् हम्दु व लकश्शुक्र

याद रखो कि यह शुक्र की आदत ऐसी चीज़ है कि यह बहुत सारे बातिनी मरज़ों की जड़ काट देती है, यह तकब्बुर यह हसद यह घमंड़ इन सब की जड़ काट देती है। जो आदमी कसरत से शुक्र अदा करता है वह आम तौर से तकब्बुर में मुब्तला नहीं होता, यह बजुर्गों का तजुर्बा है बल्कि इसके बारे में रिवायात आई हैं।

शैतान का बुनियादी दाव ना शुक्री पैदा करना

जब अल्लाह तआला ने शैतान को मरदूद किया और निकाल दिया तो कम्बख़्त ने जाते जाते कह दिया कि मुझे सारी उमर की मोहलत दे दी जाये, अल्लाह तआला ने उसको मोहलत दे दी, उसने कहा कि अब मैं तेरे बन्दों को गुमराह करूंगा और उनको गुमराह करने के लिये दायीं तरफ़ से आऊंगा, बायीं तरफ़ से आऊंगा, आगे से आऊंगा, पीछे से आऊंगा। चारों तरफ़ से उन पर हमले करूंगा और उनको तेरे रास्ते से भटकाऊंगा और आख़िर में उसने कहा कि:

وَلَا تَجِدُ اَكْثَرَهُمْ شَاكِرِيْنَ

यानी मेरे बहकाने के नतीजे में आप बन्दों में से अक्सर को ना शुक्रा पायेगें ।

शैतानी दाव का तोड़ शुक्र का अदा करना

हज़रत थानवी रह० फ़रमाते हैं: इस से मालूम हुआ कि शैतान का जो बुनियादी दाव है वह है ना शुक्री पैदा करना, अगर ना शुक्री पैदा हो गयी तो मालूम नहीं कितने मरज़ों में मुब्तला हो गया, और इस दाव का तोड़ शुक्र करना है, जितना अल्लाह का शुक्र अदा करोगे उतना ही शैतान के हमलों से महफ़ूज़ रहोगे, इसलिये रूहानी बीमारी से बचने का असर्दार तरीक़ा यह है कि हर वक़्त उठते बैठते चलते फिरते दिन रात सुबह शाम रट लगाओ "ऐ अल्लाह तेरा शुक्र है " इस से इन्शा अल्लाह शैतान के हमलों का दरवाज़ा बन्द हो जाएगा।

पानी ख़ूब ठन्डा पिया करो

हज़रत हाजी इमदादुल्लाह साहिब मुहाजिरे मक्की रह० फ़रमाते थे कि मियां अशरफ़ अली! जब पानी पियो तो ख़ूब ठन्डा पियो ताकि रुएं रुएं से अल्लाह तआ़ला का शुक्र निकले। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह जो फ़रमाया कि मुझे दुनिया की तीन चीज़ें पसंद हैं उनमें से एक ठन्डा पानी है, और किसी खाने पीने की चीज़ के बारे में यह बात साबित नहीं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये कोई ख़ास चीज़ कहीं से मंगवाई जा रही है लेकिन सिर्फ़ ठन्डा पानी था जो सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये तीन मील के फ़ासले से आया करता था, बीरे ग़रस नाम का कुआं जो अब भी मदीना तैयबा में मौजूद है उस से नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये ख़ास तौर पर ठन्डा पानी मंगवाया जाता था, हज़रत हाजी

साहिब रह० फ़रमाते हैं कि इसमें हिक्मत यह है कि जब प्यास की हालत में ठण्डा पानी पिया जाएगा तो वह रुएं रुएं से शुक्र निकालेगा।

सोने से पहले नेमतों का ज़ेहन में ख़्याल और उन पर शुक्र

और रात को सोने से पहले बैठ कर सारी नेमतों का ध्यान कर लो कि घर आफ़ियत का है "अल्लाह का शुक्र है" बिस्तर आराम देह है "अल्लाह का शुक्र है" मैं आफ़ियत से हूँ "अल्लाह का शुक्र है" बच्चा आफ़ियत से है "अल्लाह का शुक्र है" एक एक नेमत को ख़्याल करके रट लगाओ।

हज़रत डॉक्टर अबदुल हई साहिब रह० फ़रमाते थे कि मैंने यह चीज़ अपने नाना से सीखी है, एक मरतबा मैं उनके घर गया तो रात को मैंने देखा कि वह सोने से पहले बिस्तर पर बैठे हुए हैं और बार बार बार बार "या अल्लाह तेरा शुक्र है" "या अल्लाह तेरा शुक्र है" पढ़ रहे हैं और अजीब कैफ़ियत में यह अमल कर रहे हैं, मैंने पूछा कि हज़रत! यह क्या कर रहे हैं? फ़रमाने लगे भाई! सारे दिन तो मालूम नहीं किस हालत में रहता हूँ और यह पता नहीं लगता कि शुक्र अदा हो रहा है या नहीं, इस वक़्त बैठ कर दिन भर की सारी नेमतों का ध्यान करता हूँ और फिर हर नेमत पर "या अल्लाह तेरा शुक्र है" कहता जाता हूँ। हज़रत डॉक्टर साहिब रह० फ़रमाते हैं कि जब मैंने यह देखा तो उसके बाद "अल्लाह शुक्र है" मैंने भी इसको अपने मामूल में शामिल कर लिया कि रात को सोते वक़्त सब नेमतों का ध्यान करके शुक्र अदा करता हूँ।

शुक्र अदा करने का आसान तरीक़ा

और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर कुर्बान जाएं आपने हर हर चीज़ के तरीक़े बता दिये हैं, कहाँ तक इन्सान शुक्र अदा करेगा। शेख़ सअ़्दी रह० के क़ौल के मुताबिक़, फ़रमाते हैं कि एक सांस पर दो शुक्र वाजिब हैं, सांस अन्दर जाए और बाहर न आए तो मौत और अगर सांस बाहर आए फिर अन्दर न जाए तो मौत, तो एक सांस पर दो नेमतें और हर नेमत पर एक शुक्र वाजिब है, इस तरह हर सांस पर दो शुक्र वाजिब हो गये। इसलिये अगर इन्सान सांस ही की नेमत का शुक्र अदा करना चाहे तो कहाँ तक करेगा "अगर तुम उसकी नेमतों को शुमार करने लगो तो नहीं कर सक्ते" इसलिये सरकार-ए-दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने शुक्र अदा करने का एक आसान तरीक़ा बता दिया और चन्द कलिमात तलक़ीन फ़रमा दिये हर मुसलमान को याद कर लेने चाहियें फ़रमाया कि:

اللهم لك الحمد حمدا دآئمامع دوامك وخالد امع خلودك ولك الحمد حمدا لا منتهى له دون مشيتك ولك الحمد حمدا لا يريد قائله الا رضاك

"ऐ अल्लाह आपका शुक्र है ऐसा शुक्र कि जब तक आप हैं उस वक़्त तक वह शुक्र जारी रहे और जिस तरह आप हमेशा हैं इसी तरह वह शुक्र भी हमेशा रहे, और आपकी मशीयत (चाहत) के आगे जिसकी कोई इन्तिहा न हो और आपकी ऐसी तारीफ़ करता रहूँ जिसके कहने वाले को सिवाये आपकी रिज़ा के कुछ और मतलूब नहीं" (कन्ज़ुल उम्माल जि० २ हदीस न० ३८५७)

और दूसरी हदीस में इर्शाद फ़रमाया:

اللهم لك الحمدو زنة عرشك و مداد كلماتك وعدد خلقك ورضا نفسك

(ابوداؤد)

फ़रमाया "मैं आपका शुक्र करता हूँ जितना आपके अ़र्श का वज़न है और इतना शुक्र अदा करता हूँ जितनी आपके कलिमात की सियाही है, कुरआन करीम में है कि अगर कोई शख़्स अल्लाह तआ़ला के तमाम कलिमों को लिखना चाहे और सातों के सातों समुन्दर उसके लिये ख़ुश्क हो जायें और उससे अल्लाह तआ़ला के कलिमात लिखे जायें तो सारे समुन्दर ख़ुश्क हो जायें लेकिन अल्लाह तआ़ला के कलिमे ख़त्म नहीं होंगे, तो आपके कलिमे लिखने के लिये जितनी सियाही हो सकती है उसके बराबर शुक्र अदा करता हूँ और जितनी आपकी मख़लूक़ात हैं यानी इन्सान 'जानवर 'दरख़्त' पत्थर' जमादात 'घांस फूंस' जितनी मिक़्दार में हैं उसके बराबर शुक्र अदा करता हूँ और आख़िर में फ़रमाया की इतना शुक्र अदा करता हूँ जिस से आप राज़ी हो जाएं (अबू दाऊद)

अब इस से ज़्यादा इन्सान और क्या कह सकता है, इसलिये रात को सोते वक़्त हर शख़्स को अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करना चाहिये और यह कलिमे कह लेने चाहियें।

اللهم لك الحمد ولك الشكر عند طرفة كل عين و تنفس نفس

(كنز العمال)

ऐ अल्लाह! आपकी तारीफ़ और आपका शुक्र है हर आंख झपकने के वक़्त और हर सांस लेने के वक़्त।

बहर हाल! यह शुक्र के कलिमे जो नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तलक़ीन फ़रमाये हैं याद कर लेने चाहियें और रात को सोते वक़्त इन कलिमों को पढ़ लेना चाहिये, अल्लाह तआ़ला हम सब को इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

बिद्अ़त एक संगीन गुनाह

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

عن جابر رضی الله عنه قال: كان رسول الله صلى الله عليه وسلم اذا خطب احمرت عيناه وعلا صوته واشتد حتى كانه منذرين جيش. يقول صبحكم ومساكم. ويقول: بعثت انا والساعة كهاتين. ويقرن بين أصبعيه السبابة والوسطى. ويقول امابعد: فان الخير الحديث كتاب الله وخير الهدى هدى محمد صلى الله عليه وسلم، وشر الامور محدثاتها، وكل بدعة ضلالة، ثم يقول: انا اولى بكل مؤمن من نفسه من ترك مالًا فلا هله، ومن ترك دينًا اوضياعًا فالى وعلى.

(صحيح مسلم)

लफ्ज़ "जाबिर" और "जब्बार" के मायने

यह हदीस हज़रत जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह रज़ि० से रिवायत है, यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मख़्सूस सहाबा–ए–किराम में से हैं, और अन्सारी सहाबी हैं, मदीना तैयबा के रहने वाले थे, इनका नाम "जबिर" है, बाज़ लोगों को शुबह होता है कि "जाबिर" तो ज़ालिम आदमी को कहते हैं, तो फिर इनका नाम "जाबिर" कैसे रख दिया गया? और अल्लाह तआ़ला के पाक नाम "जब्बार" के बारे में भी यही शुबह होता है इसलिये कि अल्लाह

तआ़ला के निन्नानवे असमा–ए–हुस्ना में से एक नाम "जब्बार" भी है, और उर्दु में "जब्बार" के मायने हैं बहुत ज़ुल्म करने वाला, इसलिये आ़म तौर पर लोगों को यह शुबह् होता है कि अल्लाह तआ़ला के लिये "जब्बार" का लफ़्ज़ कैसे इस्तेमाल किया गया?

इस शुबह् का जवाब यह है कि अ़रबी ज़बान में "जाबिर" के वह मायने नहीं हैं जो उर्दू में हैं, उर्दू में "जाबिर" के मायने ज़ालिम के आते हैं, लेकिन अ़रबी में "जाबिर" कहते हैं टूटी हुयी चीज़ को जोड़ने वाला, टूटी हुई हड्डी जोड़ने को "जब्र" कहते हैं, और जो शख़्स टूटी हड्डी को जोड़े उसको "जाबिर" कहते हैं, तो "जाबिर" के मायने हुए टूटी हुयी चीज़ को जोड़ने वाला, और यह कोई ग़लत मायने नहीं है, बल्कि बहुत अच्छे मायने हैं, इसी तरह "जब्बार" के मायने हुये बहुत ज़्यादा टूटी हुयी चीज़ों को जोड़ने वाला, तो अल्लाह का जो नाम "जब्बार" है, उसके मायने मआ़ज़–ल्लाह (ख़ुदा की पनाह) ज़ुल्म करने वाले या अ़ज़ाब देने वाले के नहीं हैं, बल्कि इसके मायने यह हुये, कि जो चीज़ टूट गयी हो, उसको अल्लाह तआ़ला जोड़ने वाले हैं।

टूटी हड्डी जोड़ने वाली ज़ात सिर्फ़ एक है

इसी लिये आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जो बहुत सी दुआयें, तलक़ीन फ़रमायी हैं, उनमें से एक में अल्लाह तबारक व तआ़ला को इस नाम से पुकारा गया है कि:

"ياجابر العظيم الكسير"

"ऐ टूटी हुयी हड्डी को जोड़ने वाले" (अल हिज़्बुल आज़म)

इस नाम से ख़ास तौर पर इसलिये पुकारा कि दुनिया के तमाम तबीब, इलाज करने वाले और डाक्टर इस बात पर मुत्तफ़िक़ हैं कि अगर हड्डी टूट जाये तो कोई दवा और कोई इलाज ऐसा

नहीं है जो उसको जोड़ सके, इन्सान का काम सिर्फ़ इतना है कि वह टूटी हुयी हड्डी को उसकी सही पोज़ीशन पर रख दे, लेकिन कोई मरहम, कोई लोशान, कोई दवा, कोई माजून ऐसी नहीं है जो हड्डी पर लगा दी जाये और वह जुड़ जाये, जोड़ने वाली ज़ात तो सिर्फ़ वही है, इस मायने में अल्लाह तआ़ला को "जब्बार" कहा जाता है, न कि इस मायने में जैसा कि लोग समझते हैं।

लफ़्ज़ "क़ह्हार" के मायने

इसी तरह बारी तआ़ला के असमा-ए-हुसना में एक नाम "क़ह्हार" है, उर्दू की इस्तिलाह में "क़ह्हार" उसको कहते हैं जो लोगों पर बहुत क़हर करे, ग़ुस्सा करे और लोगों को बहुत तक्लीफ़ पहुंचाये, लेकिन बारी तआ़ला के पाक नामों में जो लफ़्ज़ "क़ह्हार" है वह अ़रबी ज़बान वाला क़ह्हार है, उर्दू ज़बान का नहीं है, और अ़रबी ज़बान में "क़ह्हार" के मायने हैं ग़लबा पाने वाला, ग़ालिब, जो हर चीज़ पर ग़ालिब हो, उसको "क़ह्हार" कहते हैं, यानी वह ज़ात जिसके सामने हर चीज़ मग़लूब है, और वह सब पर ग़ालिब है।

अल्लाह तआ़ला का कोई नाम अ़ज़ाब पर दलालत नहीं करता

बल्कि बारी तआ़ला के असमा-ए-हुसना में कोई ऐसा नाम नहीं है जो अ़ज़ाब पर दलालत करता हो, सारे असमा-ए-पाक या रहमत पर दलालत करते हैं या रबूबियत पर दलालत करते हैं, या कुदरत पर दलालत करते हैं, लेकिन जहां तक मुझे याद है असमा-ए-हुसना में कोई ऐसा नाम नहीं है जो अ़ज़ाब पर दलालत करने वाला हो, और यह इस बात की अ़लामत है कि अल्लाह तबारक व तआ़ला की असल सिफ़त रहमत की है, वह अपने बन्दों पर रहीम

है, वह रहमान है, वह करीम है, हां: जब बन्दे हद से गुज़र जायें तो फिर बेशक उसका ग़ज़ब भी नाज़िल होता है, उसका अज़ाब भी बर्हक़ है जैसा कि कुरआन करीम की बहुत सी आयात में बयान हुआ है, लेकिन बारी तआला की जो सिफ़ात ब्यान की गयी हैं और जो असमा-ए-हुसना से मौसूम हैं, उनमें अज़ाब का ज़िक्र स्पष्ट मौजूद नहीं है।

ख़ुतबे के वक़्त आपकी कैफ़ियत

बहर हाल! हज़रत जाबिर रज़ि० रिवायत करते हैं कि:

"كان رسول الله صلى الله عليه وسلم اذا خطب احمرت عيناه وعلا صوته، واشتد غضبه"

जब नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सहाबा-ए-किराम से ख़िताब फ़रमाते थे तो ज़्यादा तर आपकी मुबारक आंखें सुर्ख़ हो जाती थीं, और आवाज़ बुलन्द हो जाती थी, यह इसलिये होता था कि जो बात कहते थे वह दिल की आवाज़ थी, और दिल में यह जज़्बा था कि किसी तरह सुनने वाले के दिल में उतर जाये, और उसको समझ ले और उस पर अमल करना शूरू कर दे, इस जज़्बे के तहत कभी कभी आपकी मुबारक आंखें सुर्ख़ हो जातीं, और आपकी आवाज़ बुलन्द हो जाती और आपका जोश ज़्यादा हो जाता था।

आपका तबलीग़ का अन्दाज़

"حتى كانه منذرين جيش يقول صبحكم ومساكم"

कभी कभी ऐसा लगता था कि आप लोगों को किसी आने वाले लश्कर से डरा रहे हैं, कि भाई तुम्हारे ऊपर दुश्मन का लश्कर हमला करने वाला है, ख़ुदा के लिये उस से बचने का सामान करो, और यह फ़रमाते थे कि वह लश्कर सुबह पहुंचा या शाम पहुंचा,

यानी वह लश्कर जल्द ही पहुंचने वाला है, उसके पहुंचने में देर ज़्यादा नहीं है इसलिये तुम उस लश्कर से बचाव का सामान करो।

उस लश्कर से मुराद क़ियामत का दिन और हिसाब व किताब, और अल्लाह तबारक व तआला के सामने जवाब दही, और उस जवाब दही के नतीजे में दोज़ख़ के अ़ज़ाब, अल्लाह तआ़ला हमें महफ़ूज़ रखे, इस से डराते थे कि यह वक़्त सुबह या शाम किसी भी वक़्त आ सकता है, उस से डरो, और उस से बचने की कोशिश करो।

आप हज़रात ने सुना होगा कि सब से पहले जब आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी क़ौम को सफ़ा पहाड़ पर चढ़ कर दावत दी, जितने ख़ानदान मक्का में थे, उन सब का नाम लेकर पुकारा और उनको जमा किया और उनसे पूछा कि अगर मैं तुमसे यह कहूं कि इस पहाड़ के पीछे एक लश्कर छुपा बैठा है, और वह हमला करना चाहता है, तो क्या तुम मेरी इस बात की तसदीक़ करोगे या नहीं? सबने एक ज़बान होकर कहा कि ऐ मुहम्मद! हम आपकी इस बात की तसदीक़ करेंगे, इसलिये कि आपने अपनी ज़िन्दगी में कभी कोई ग़लत बात नहीं कही, और कभी झूठ नहीं बोला, आप "सादिक़" और "अमीन" की हैसियत से मश्हूर हैं। उसके बाद आपने फ़रमाया कि मैं तुम्हें ख़बर देता हूं कि आख़िरत में अल्लाह तबारक व तआ़ला का बहुत सख़्त अ़ज़ाब तुम्हारा इन्तिज़ार कर रहा है, उस अ़ज़ाब से अगर बचना चाहते हो तो अल्लाह तआ़ला की वह्दानियत (एक होने) पर ईमान लाओ।

(बुख़ारी शरीफ़)

अ़रब वालों का मानूस उन्वान

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ख़ुतबात में यह

तसव्वुर कसरत से पाया जाता है कि "मैं तुम को दुश्मन के लश्कर से डराने वाला हूं जो तुम पर हमला करने वाला है, डराने के लिये यह ताबीर और यह उन्वान अ़रब वालों के लिये बड़ा मानूस था, क्योंकि अ़रब के लोग आपस में हर वक़्त लड़ते झगड़ते रहते थे, एक क़बीला दूसरे पर हमला कर रहा है, दूसरा तीसरे पर हमला कर रहा है, दिन रात यही सिलसिला रहता था। जो शख़्स उनको आकर यह बता दे कि फ़लां दुश्मन तुम्हारी घात में है, और तुम्हारे ऊपर हम्ला करने वाला है, वह ख़बर देने वाला बड़ा हमदर्द समझा जाता था, हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसकी मिसाल देते हुए फ़रमाया कि जैसे तुमको कोई शख़्स दुश्मन के लश्कर से बा–ख़बर करता है, ऐसे ही में तुमको बा–ख़बर कर रहा हूं कि एक बहुत बड़ा अ़ज़ाब तुम्हारा इन्तिज़ार कर रहा है, वह अ़ज़ाब सुबह पहुंचा या शाम।

आपका आना और क़ियामत की नज़्दीकी

फिर आगे फ़रमायाः

"بعثت انا والساعة كهاتين و يقرن بين اصبعيه السابة والوسطى"

मैं और क़ियामत इस तरह भेजे गये हैं जैसे शहादत की उंगली और बीच की उंगली, और दोनों उंगलियां उठा कर आपने फ़रमाया कि जिस तरह इन दोनों उंगलियों के दरमियान ज़्यादा फ़ासला नहीं, बल्कि दोनों मिली मिली हैं, इसी तरह मैं और क़ियामत इस तरह भेजे गये हैं, कि दोनों के दरमियान ज़्यादा फ़ासला नहीं, वह क़ियामत बहुत जल्द आने वाली है, बल्कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पहले जो उम्मतें गुज़री हैं, उनको अंबिया अ़लै० क़ियामत से डराते थे तो क़ियामत की एक बहुत बड़ी निशानी नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी बन

कर ज़ाहिर होने का ज़िक्र फ़रमाते थे, कि क़ियामत की एक अलामत यह है कि आख़री दौर में नबी–ए–करीम सरदारे आलम मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाने वाले हैं। (तफ़्सीर दुर्रे मन्सूर लिस्सुयूती)

एक इश्काल का जवाब

अब लोगों को इश्काल होता है कि चौदह सौ साल तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को गुज़र गये अब तक तो क़ियामत आई नहीं। बात दर असल यह है कि सारी दुनिया की उमर के लिहाज़ से अगर देखोगे, और जब से दुनिया पैदा हुई है, इसका लिहाज़ करके अगर देखोगे तो हज़ार दो हज़ार साल की कोई हैसियत नहीं होती, इसलिये आपने फ़रमाया कि मेरे और क़ियामत के दरमियान कोई ज़्यादा फ़ासला नहीं है, वह क़ियामत बहुत क़रीब आने वाली है।

हर इन्सान की मौत उसकी क़ियामत है

और सारी दुनिया की जो मजमूई क़ियामत आने वाली है, वह चाहे कितनी दूर हो, लेकिन हर इन्सान की क़ियामत तो क़रीब है, क्योंकि:

"من مات فقد قامت قيامتة" (رواه الديلمى)

जो मर गया और जिसको मौत आ गयी, उसकी क़ियामत तो उसी दिन क़ायम हो गयी, इस वासते जब क़ियामत आने वाली है, चाहे वह मजमूई क़ियामत हो, या इन्फ़िरादी और उसके बाद ख़ुदा जाने क्या मामला होने वाला है, इसलिये मैं तुमको डरा रहा हूं कि वह क़ियामत आने से पहले तैयारी कर लो, और उस वक़्त के आने से पहले होशियार हो जाओ, और अपने आपको अज़ाबे जहन्नम और अज़ाबे क़ब्र से बचा लो।

बेहतरीन कलाम और बेहतरीन तर्ज़े ज़िन्दगी

फिर फ़रमाया कि:

"فان خير الحديث كتاب الله، وخير الهدى هدى محمد صلى الله عليه وسلم."

इस रूए ज़मीन पर बेहतरीन कलाम और सब से अच्छा कलाम अल्लाह की किताब है, इससे बढ़ कर, इससे आला, इससे ज़्यादा अफ़ज़ल, इस से ज़्यादा बेहतर कलाम कोई नहीं। और ज़िन्दगी गुज़ारने के जितने तरीक़े हैं, जितने तर्ज़े ज़िन्दगी हैं, उनमें से सब से बेहतरीन तर्ज़े ज़िन्दगी मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का तर्ज़े ज़िदगी है यह बात हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपने बारे में खुद फ़रमा रहे हैं, कोई भी अपने बारे में नहीं कहता कि मेरा तरीक़ा सब से आला है, मुझसे ज़्यादा बेहतर कोई नहीं, लेकिन चूंकि अल्लाह तआ़ला ने आपको भेजा ही इसलिये है कि लोगों के लिये आप नमूना हों, ज़िन्दगी गुज़ारनी है तो इस तरह गुज़ारो, अगर ज़िन्दगी गुज़ारने का तरीक़ा इख़्तियार करना है तो यह तरीक़ा इख़्तियार करो, इस वासते दावत व तबलीग़ की ज़रूरत के तहत इरशाद फ़रमा रहे हैं कि बेहतर तरीक़ा वह है जो जनाब मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमारे वासते छोड़ा है, उठने बैठने में, खाने पीने में, सोने जागने में, दूसरों के साथ मामलात करने में, अल्लाह तआ़ला के साथ तअ़ल्लुक़ क़ायम करने में जो तरीक़ा मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमा दिया, उस से बेहतर कोई और तरीक़ा नहीं हो सकता।

बिदअ़त बद तरीन गुनाह है

फिर आगे जिन चीज़ों से गुमराही के इम्कानात (संभावनाएं) हो

सकते थे, उनकी जड़ें बता दीं, फ़रमाया कि:

"شر الامور محدثاتها وكل بدعة ضلالة"

इस रूए ज़मीन पर बद्तरीन काम वे हैं जो नये नये तरीक़े दीन में ईजाद किये जायें, हदीस में "बद्तरीन काम" का लफ़्ज़ इस्तेमाल किया है, क्यों? इसलिये कि बिद्अ़त एक ऐसी चीज़ है जो एक लिहाज़ से ज़ाहिरी गुनाहों से भी बद्तर है, इस लिये कि ज़ाहिरी फ़िस्क़ व फुजूर और गुनाह वे हैं कि जिस शख़्स के दिल में ज़र्रा बराबर ईमान होगा वह उनको बुरा समझेगा, कोई मुसलमान अगर किसी गुनाह में मुब्तला है, जैसे शराब पीता है, बदकारी करता है, झूठ बोलता है, ग़ीबत करता है, उस से अगर पूछा जाये कि ये काम तुम्हारे ख़्याल में कैसे हैं? जवाब में यही कहेगा कि ये काम हैं तो बुरे लेकिन मैं क्या करूं, मैं मुब्तला हो गया। इसलिये इन बुराईयों को करने वाला बुरा समझेगा, और जब बुरा समझेगा तो अल्लाह तआ़ला उसको कभी न कभी तौबा की तौफ़ीक़ भी अ़ता फ़रमा देंगे।

लेकिन बिद्अ़त, यानी जो चीज़ दीन में नई ईजाद की गयी है, उसकी ख़ासियत यह है कि हक़ीक़त में तो गुनाह होती है, लेकिन जो शख़्स बिद्अ़त को कर रहा होता है, वह उसको बुरा नहीं समझता, वह तो यह समझता है कि यह तो बहुत अच्छा अ़मल है, और दूसरा कोई अगर उससे यह कहे कि यह बुरी बात है तो बहस करने को तैयार हो जाता है, और उससे मुनाज़रा करने को तैयार हो जाता है, कि इसमें क्या ख़राबी और क्या हर्ज है, और जब एक शख़्स गुनाह को गुनाह समझता ही नहीं है, और बुराई को बुराई समझता ही नहीं है तो इसके नतीजे में वह गुमराही में और ज़्यादा पुख़्ता हो जाता है, इसी लिये आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम ने फ़रमाया कि "शर्रुल उमूरे" जिसके मायने यह हैं कि जितने बुरे काम हैं उनमें सब से बद्तर काम बिद्अ़त है, जो दीन में ऐसा नया तरीक़ा ईजाद करे, जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम के तरीक़े से अलग हो, और फिर आगे उसकी वजह भी बता दी कि हर बिद्अ़त गुमराही है, इसलिये जो शख़्स किसी बिद्अ़त के अन्दर मुब्तला है, वह लाज़मी तौर पर गुमराही के अन्दर मुब्तला है।

बिद्अ़त, ऐतक़ादी गुमराही है

एक होती है अ़मली कोताही, यानी एक शख़्स किसी अ़मली कोताही के अन्दर मुब्तला है, उससे ग़लतियां हो रही हैं, गुनाह हो रहे हैं, और एक होती है ऐताक़ादी गुमराही कि कोई शख़्स किसी नाहक़ को हक़ समझ रहा है, और गुनाह को सवाब समझ रहा है, कुफ़्र को ईमान समझ रहा है। पहली चीज़ यानी अ़मली कोताही का इलाज तो आसान है, कि कभी न कभी तौबा कर लेगा तो माफ़ हो जायेगी, लेकिन जो शख़्स गुनाह को सवाब समझ रहा हो, उसकी हिदायत बहुत मुश्किल है, इसी लिये आपने फ़रमाया कि बद्तरीन गुनाह बिद्अ़त का गुनाह है, इसी लिये हज़राते सहाबा रज़ि० बिद्अ़त से इतना भागते थे कि कोई हद नहीं।

बिद्अ़त की सब से बड़ी ख़राबी

बिद्अ़त की सब से बड़ी ख़राबी यह है कि आदमी ख़ुद दीन का मूजिद (ईजाद करने वाला) बन जाता है, हालांकि दीन का मूजिद कौन है? सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला, अल्लाह तआ़ला ने हमारे लिये जो दीन बनाया वह हमारे लिये क़ाबिले इत्तिबा है, लेकिन बिद्अ़त करने वाला ख़ुद दीन का मूजिद बन जाता है, और यह समझता है कि दीन का रास्ता मैं बना रहा हूं, और दर पर्दा वह

इस बात का दावा करता है कि जो मैं कहूं वह दीन है, और अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दीन का जो रास्ता बताया, और जिस पर सहाबा-ए-किराम रज़ि० ने अमल किया, मैं उनसे बढ़ कर दीनदार हूं, मैं दीन को उनसे ज़्यादा जानता हूं, तो यह शरीअत की इत्तिबा नहीं है, बल्कि अपनी ख़्वाहिशे नफ़्स की इत्तिबा है।

दुनिया में भी घाटा और आख़िरत में भी घाटा

हिन्दू मज़्हब में कितने लोग गंगा के किनारे अल्लाह को राज़ी करने के लिये ऐसी ऐसी रियाज़तें और ऐसी ऐसी मेहनतें करते हैं, जिनको देख कर इन्सान हैरान हो जाता है। कोई आदमी अपना हाथ बुलन्द करके सालों साल तक उसी तरह खड़ा है, हाथ भी नीचे नहीं करता, किसी आदमी ने सांस खींचा हुआ है, और घन्टों तक सांस नहीं ले रहा है, और सांस रोक रहा है। उससे अगर पूछा जाये कि तू यह काम क्यों कर रहा है? जवाब देगा कि यह मैं इसलिये कर रहा हूं कि मेरा अल्लाह राज़ी हो जाये, अब चाहे वह अल्लाह को भगवान का नाम दे या कुछ और कहे, लेकिन बताईये उसके इस अमल की कोई क़ीमत है? हालांकि उस की नियत बज़ाहिर दुरुस्त मालूम होती है, लेकिन फिर भी अल्लाह तआला के यहां उसकी कोई क़ीमत नहीं, इसलिये कि अल्लाह को राज़ी करने का जो तरीक़ा इख़्तियार किया है, वह अल्लाह और अल्लाह के रसूल का बताया हुआ नहीं है, बल्कि वह तरीक़ा उसने अपने दिल और दिमाग़ से घड़ लिया है, इस वासते अल्लाह के यहां उसका कोई अमल मक़बूल नहीं, ऐसे आमाल के बारे में क़ुरआन करीम का इरशाद है:

"وَقَدِمْنَاإِلَىٰ مَاعَمِلُوْا مِنْ عَمَلٍ فَجَعَلْنَاهُ هَبَاءً مَّنْثُوْرًا" (الفرقان:٢٣)

जो लोग ऐसे अ़मल करते हैं, हम उनके अ़मल को इस तरह उड़ा देते हैं जैसे हवा में उड़ाई हुई मिट्टी और गर्द व गुबार, अ़मल किया लेकिन अकारत हो गया, मेहनत भी की लेकिन बेकार गयी, और दूसरी जगह पर कितने प्यार और शफ़्क़त भरे अन्दाज़ से क़ुरआन करीम ने फ़रमायाः

"قُلْ هَلْ نُنَبِّئُكُمْ بِالْاَخْسَرِيْنَ اَعْمَالًا، اَلَّذِيْنَ ضَلَّ سَعْيُهُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَهُمْ يَحْسَبُوْنَ اَنَّهُمْ يُحْسِنُوْنَ صُنْعًا" (الكهف:١٠٤)

क़ुरआन करीम नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ख़िताब करते हुये कहता है कि आप लोगों से कहें! क्या मैं तम्हें बताऊं कि इस दुनिया में सब से ज़्यादा ख़सारे में कौन हैं? फिर फ़रमाया कि ये वे लोग हैं जिनका अ़मल इस दुनिया में अकारत हो गया, और दिल में यह समझ रहे हैं कि वे बहुत अच्छा काम कर रहे हैं, ये लोग इसलिये ख़सारे में हैं कि जो फ़ासिक़ व फ़ाजिर था, या जो काफ़िर था, उसने कम से कम दुनिया में ऐश कर लिये, आख़िरत अगरचे तबाह हुई, लेकिन दुनिया में तो ऐश कर गया, और यह शख़्स तो अपनी दुनिया के ऐश व आरम भी ख़राब कर रहा है, और मेहनत उठा रहा है, और आख़िरत भी बिगाड़ रहा है, इस वासते कि उसने इबादत का वह तरीक़ा इख़्तियार किया हुआ है जो अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने नहीं बताया।

इसी लिये बिद्अ़त के बारे में फ़रमाया, "शर्रुल उमूरे" सारे कामों में बद्तरीन काम बिद्अ़त है, इसलिये कि आदमी मेहनत तो करता है, लेकिन हासिल कुछ नहीं।

दीन नाम है इत्तिबा का

अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से हमारे और आपके दिलों में

यह बात बिठा दे कि दीन असल में अल्लाह और अल्लाह के रसूल की इत्तिबा का नाम है, अपनी तरफ़ से कोई बात घड़ने का नाम दीन नहीं है। अरबी ज़बान में दो लफ़्ज़ इस्तेमाल होते हैं, एक इत्तिबा और इब्तिदाअ्, इत्तिबा के मायने हैं कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल के हुक्म की पैरवी करना, और इब्तिदाअ् के मायने हैं अपनी तरफ़ से कोई चीज़ ईजाद करके उसके पीछे चल पड़ना। जब हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ि० ख़लीफ़ा बने तो सबसे पहला जो ख़ुतबा दिया, उसमें यह अल्फ़ाज़ इरशाद फ़रमाये कि:

"انی متبع ولست بمبتدع" (طبقات ابن سعدج۳ص۱۸۲)

"मैं अल्लाह और अल्लाह के रसूल के अहकाम का इत्तिबा करने वाला हूं, मुब्तदेअ् नहीं," यानी कोई नया रास्ता ईजाद करने वाला नहीं हूं, इसलिये सारी क़ीमत अल्लाह के हुक्म के आगे सर झुकाने की है, अपनी तरफ़ से जो बात की जाये उसका कोई वज़न कोई क़दर व क़ीमत नहीं।

एक अजीब वाकिआ

एक वाक़िआ आपने कसरत से सुना होगा हदीस शरीफ़ में आता है कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कभी कभी रात के वक़्त मुख़्तलिफ़ सहाबा-ए-किराम रज़ि० के हालात देखने के लिये निकलते थे, कि कौन क्या कर रहा है, एक मर्तबा तहज्जुद के वक़्त सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपने घर से निकले, और हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ि० के पास से गुज़रे, आपने देखा कि वह आजज़ी के साथ निहायत आहिस्ता आवाज़ से तहज्जुद की नमाज़ में तिलावत कर रहे हैं, आगे जाकर देखा कि हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि० तहज्जुद पढ़ रहे थे, और बुलन्द आवाज़ से कुरआन करीम की तिलावत कर रहे हैं, और उनकी

तिलावत की आवाज़ बाहर तक सुनाई दे रही थी। ख़ैर, आप यह देखते हुए वापस तशरीफ़ ले आये।

बाद में आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत सिद्दीक़े अक्बर और हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ि० दोनों को अपने पास बुलाया, और पहले सिद्दीक़े अक्बर रज़ि० से फ़रमया कि मैं रात को तहज्जुद के वक़्त तुम्हारे पास से गुज़रा तो तुम आहिस्ता आहिस्ता आवाज़ से तिलावत कर रहे थे, आप इतनी आहिस्ता आवाज़ से क्यों तिलावत कर रहे थे?

उसके जवाब में हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ि० ने क्या ख़ूबसूरत जुम्ला इरशाद फ़रमाया कि:

"اسمعت من ناجیت"

या रसूलल्लाह! जिस ज़ात से मैं मुनाजात कर रहा था, जिस से तअल्लुक़ क़ायम किया था, जिस ज़ात को मैं सुनाना चाहता था, उसको सुना दिया अब आवाज़ बुलन्द करने की क्या ज़रूरत है? इसलिये मैं आहिस्ता तिलावत कर रहा था।

फिर हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ि० से पूछा कि तुम ज़ोर ज़ोर से तिलावत कर रहे थे, इसकी क्या वजह थी? उन्हों ने जवाब में फ़रमाया कि:

"انی اوقظ الوسنان واطرد الشیطان"

मैं ज़ोर से इसलिये तिलावत कर रहा था कि जो लोग पड़े सो रहे हैं वे जाग जायें, और शैतान भाग जाये, इसलिये जितनी ज़ोर से तिलावत करूंगा शैतान भागेगा, इसलिये मैं ज़ोर से तिलावत कर रहा था।

अब ज़रा देखिये कि दोनों की बातें अपनी अपनी जगह दुरुस्त हैं, सिद्दीक़े अक्बर रज़ि० की बात भी सही कि मैं तो अल्लाह मियां को सुना रहा हूं, किसी दूसरे को सुनाने की क्या ज़रूरत? और

फ़ारूके आज़म रज़ि० की बात भी दुरुस्त कि मैं सोने वालों को जगा रहा था, शैतान को भगा रहा था, लेकिन उसके बाद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन दोनों से खिताब करते हुये फ़रमाया कि ऐ अबू बकर! तुमने अपनी समझ से यह रास्ता इख़्तियार किया कि बहुत आहिस्ता तिलावत करनी चाहिये, और ऐ फ़ारूक़! तुमने अपनी समझ से यह रास्ता इख़्तियार किया कि ज़ोर से तिलावत करनी चाहिये, लेकिन तुम दोनों ने चूंकि अपनी अपनी समझ से यह रास्ता इख़्तियार किया था, इसलिये यह पसन्दीदा नहीं है, लेकिन अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि न ज़्यादा ज़ोर से तिलावत करो, और न ज़्यादा आहिस्ता तिलावत करो, बल्कि मोत-दिल (दरमियाना) आवाज़ से तिलावत करो, इसी में ज़्यादा नूर और बरकत है, और इसी में फ़ायदा ज़्यादा है, इसको इख़्तियार करो।

(अबू दाऊद)

मालूम हुआ कि इबादत के अन्दर अपनी तरफ़ से कोई रास्ता इख़्तियार कर लेना, अल्लाह तआला के नज़्दीक ज़्यादा पसन्दीदा नहीं, जितना अल्लाह और अल्लाह के रसूल का बताया हुआ रास्ता पसन्दीदा है, बस जो रास्ता हमने बताया है वह रास्ता इख़्तियार करो, इसमें जो नूर और फ़ायदा है वह किसी और में नहीं।

दीन की सारी रूह यह है कि इताअत और इबादत अल्लाह और अल्लाह के रसूल के बाताये हुए तरीक़े के मुताबिक़ करनी है, अपनी तरफ़ से कोई रास्ता घड़ लेना दुरुस्त नहीं।

एक बुज़ुर्ग का आंखें बन्द कर के नमाज़ पढ़ना

हज़रत हाजी इम्दादुल्लाह मुहाजिरे मक्की रह० ने एक वाक़िआ बयान किया है जो हज़रत थानवी रह० ने अपने मवाइज़ में बयान किया कि उनके क़रीब के ज़माने में एक बुज़ुर्ग थे, वह जब नमाज़

पढ़ा करते थे तो आंखे बन्द करके नमाज़ पढ़ते थे, और फ़ुक़हा-ए-किराम ने लिखा है कि नमाज़ में वैसे तो आंख बन्द करना मक्रूह है, लेकिन अगर किसी शख़्स को इसके बग़ैर ख़ुशू हासिल न होता हो, तो उसके लिये आंख बन्द करके नमाज़ पढ़ना जायज़ है, कोई गुनाह नहीं, तो वह बुज़ुर्ग नमाज़ बहुत अच्छी बढ़ते थे, तमाम अर्कान में सुन्नत की रियायत के साथ पढ़ते थे, लेकिन आंख बन्द करके नमाज़ पढ़ते थे, और लोगों में उनकी नमाज़ मशहूर थी, क्योंकि निहायत ख़ुशू व ख़ुज़ू और आजज़ी के साथ नमाज़ पढ़ते थे, वह बुज़ुर्ग साहिबे कश्फ़ भी थे, एक मर्तबा उन्हों ने अल्लाह तआला से दरख़्वास्त की कि या अल्लाह! मैं जो यह नमाज़ पढ़ता हूं मैं इसको देखना चाहता हूं कि आपके यहां मेरी नमाज़ कुबूल है या नहीं? और किस दर्जे में कुबूल है? और उसकी क्या सूरत है? वह मुझे दिखा दें। अल्लाह तआला ने उनकी यह दरख़्वास्त कुबूल फ़रमाई और एक निहायत हसीन व जमील औरत सामने लाई गयी, जिसके सर से पांव तक तमाम आज़ा (अंगों) में निहायत तनासुब और तवाज़ुन था, लेकिन उसकी आंखें नहीं थी, बल्कि अन्धी थी, और उनसे कहा गया कि यह है तुम्हारी नमाज़, उन बुज़ुर्ग ने पूछा कि या अल्लाह! यह इतने आला दर्जे के हुस्न व जमाल वाली ख़ातून है मगर इसकी आंखें कहां हैं? जवाब में फ़रमाया कि तुम जो नमाज़ पढ़ते हो, वह आंख बन्द करके पढ़ते हो, इस वासते तुम्हारी नमाज़ एक अन्धी औरत की शक्ल में दिखाई गयी है।

नमाज़ में आंख बन्द करने का हुक्म

यह वाक़िआ हाजी साहिब रह० ने बयान फ़रमाया, और हज़रत थानवी रह० इस वाक़िए पर तब्सरा (टिप्पणी) करते हुये फ़रमाते हैं कि: बात असल में यह थी कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल ने

नमाज़ पढ़ने का जो सुन्नत तरीक़ा बताया वह यह था कि आंखें खोल कर नमाज़ पढ़ो, सज्दे की जगह पर निगाह होनी चाहिये, यह हमारा बताया हुआ तरीक़ा है, अगरचे दूसरा तरीक़ा जायज़ है, गुनाह नहीं है, लेकिन सुन्नत का नूर उसमें हासिल नहीं हो सकता, अगरचे फ़ुक़हा-ए-किराम ने यह फ़रमाया है कि अगर नमाज़ में ख़्यालात बहुत आते हैं, और ख़ुशू हासिल करने के लिये और ख़्यालात को दफ़ा करने के लिये कोई शख़्स आंखें बन्द करके नमाज़ पढ़ता है तो कोई गुनाह नहीं जायज़ है, मगर फिर भी सुन्नत के ख़िलाफ़ है, क्योंकि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सारी उमर कभी कोई नमाज़ आंखें बन्द करके नहीं पढ़ी, उसके बाद सहाबा-ए-किराम रज़ि० ने कभी कोई नमाज़ आंख बन्द करके नहीं पढ़ी, इसलिये फ़रमाया कि ऐसी नमाज़ में सुन्नत का नूर नहीं होगा,

(لم يكن من هديه صلى الله وسلم تغميض عينيه في الصلاة، زاد المعاد لابن قيم ج١ ص ٧٥)

नमाज़ में वस्वसे और ख़्यालात

और यह जो ख़्याल हो रहा है कि चूंकि नमाज़ में ख़्यालात व वस्वसे बहुत आते हैं, इसलिये आंख बन्द करके नमाज़ पढ़ लो, तो भाई, अगर ख़्यालात ग़ैर इख़्तियारी तौर पर आते हैं तो अल्लाह तआ़ला के यहां इस पर कोई पकड़ नहीं, वह नमाज़ जो आंख खोल कर इत्तिबा-ए-सुन्नत में पढ़ी जा रही है, और उसमें ग़ैर इख़्तियारी ख़्यालात आ रहे हैं, वह नमाज़ फिर भी उस नमाज़ से अच्छी है जो आंख बन्द करके पढ़ी जा रही है और उसमें ख़्यालात भी नहीं आ रहे हैं, इसलिये कि वह नमाज़ नबी-ए-करीम सल्ल-ल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इत्तिबा में अदा की जा रही है, और

यह दूसरी नमाज़ इत्तिबा–ए–रसूल में नहीं है।

भाई, यह सारा मामला इत्तिबा का है, अपनी तरफ़ से कोई तरीक़ा घड़ने का नहीं, इसी का नाम दीन है, अब हमने यह जो सोच लिया है कि फ़लां इबादत इस तरह होगी, और फ़लां इस तरह होगी, तो यह सब अल्लाह तआला के यहां ग़ैर मक़बूल है, इसलिये फ़रमा दिया: "كل بدعة ضلالة" कि हर बिद्अत गुमराही है।

बिद्अत की सही तारीफ़ और तश्रीह्

एक बात और अर्ज़ कर दूं जिसके बारे में लोग कसरत से पूछा करते हैं, वह यह है कि जब हर नई बात गुमराही है, तो यह पंखा भी गुमराही है, यह ट्यूब लाईट भी गुमराही है, यह बस भी यह मोटर भी गुमराही है, इसलिये कि ये चीज़ें तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में नहीं थीं, बाद में पैदा हुई हैं, इनके इस्तेमाल को बिद्अत क्यों नहीं कहते?

ख़ूब समझ लीजिये, अल्लाह तआला ने बिद्अत को जो ना जायज़ और हराम क़रार दिया, यह वह बिद्अत है जो दीन के अन्दर कोई नयी बात निकाली जाये, दीन का जुज़ और हिस्सा बना लिया जाये, कि यह भी दीन का हिस्सा है, जैसे यह कहना कि ईसाले सवाब इस तरह होगा, जिस तरह हमने बता दिया यानी तीसरे दिन तीजा होगा, फिर चेहलुम होगा, और जो इस तरीक़े से ईसाले सवाब न करे वह मर्दूद है।

मय्यित के घर में खाना बना कर भेजो

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीम यह है कि अगर किसी के घर में सदमा हो तो दूसरे लोगों को चाहिये कि उसके घर में खाना तैयार करके भेजें, हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब रज़ि० ग़ज़वा–ए–मौता के मौक़े पर शहीद हुए, तो आं

हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने घर वालों से फ़रमाया कि:

"اصنعوا لآل ابی جعفر طعامًا فانه اتاهم امر شغلهم" (ابوداؤد)

जाफ़र के घर वालों के लिये खाना बना कर भेजो, इसलिये कि वे बेचारे मश्गूल हैं और सदमे के अन्दर हैं, तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीम यह है कि उसके लिये खाना बनाओ जिसके घर सदमा हो गया, ताकि वह खाना पकाने में मश्गूल न हो, उनको सदमा है।

आज कल उल्टी गंगा

आज कल उल्टी गंगा यह बहती है कि जिसके घर सदमा है, वह खाना तैयार करे, और न सिर्फ़ यह कि खाना तैयार करे, बल्कि दावत करे, शामियाने लगाये, देगें चढ़ाये, और अगर दावत नहीं देगा तो, बिरादरी में नाक कट जायेगी, यहां तक कि सुनने में आया है कि जो बेचारा मर गया है उसको भी नहीं बख़्शते, उसको भी बुरा भला कहना शुरू कर देते हैं, जैसे यह कहा जाता है कि:

मर गया मर्दूद न फ़ातिहा न दुरूद

अगर मरने वाले के घर में दावत न हुई तो फिर उस की बख़्शिश नहीं होगी, मआज़ल्लाह, (ख़ुदा की पनाह) और फिर वह दावत भी मरने वाले के तर्के से होगी, जिसमें अब सारे वारिसों का हक़ हो गया, उनमें ना बालिग़ भी होते हैं, और ना बालिग़ के माल को ज़र्रा बराबर छूना शरीअत में हराम है, नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीमात के सरासर ख़िलाफ़ है, फिर भी यह सब कुछ हो रहा है, और जो शख़्स यह सब न करे वह मर्दूद है।

दीन का हिस्सा बनाना बिद्अ़त है

इसलिये दीन का हिस्सा बनाकर, लाज़िम और ज़रूरी क़रार देकर दीन में कोई चीज़ ईजाद की जाये, वह बिद्अ़त है, हां! अगर कोई चीज़ दीन का हिस्सा नहीं है, बल्कि किसी ने अपने इस्तेमाल और आराम के लिये कोई चीज़ अपना ली, जैसे हवा हासिल करने के लिये पंखा बना लिया, रोशनी हासिल करने के लिये बिजली इस्तेमाल कर ली, सफ़र के लिये कार इस्तेमाल कर ली, यह कोई बिद्अ़त नहीं, क्योंकी दुनिया के कामों में अल्लाह तआ़ला ने खुली छूट दे रखी है कि मुबाह (जिस में न सवाब हो न गुनाह) के दायरे में रहते हुये जो चाहो करो, लेकिन दीन का हिस्सा बना कर, या किसी ग़ैर मुस्तहब को मुस्तहब क़रार देकर, या किसी ग़ैर सुन्नत को सुन्नत कह कर, या किसी ग़ैर वाजिब को वाजिब कह कर जब कोई ईजाद की जायेगी तो वह बिद्अ़त होगी, और हराम होगी।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर का बिद्अ़त से भागना

हज़राते सहाबा-ए-किराम बिद्अ़त से इन्तिहा दर्जे का परहेज़ करते थे, हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० एक बार एक मस्जिद में नमाज़ पढ़ने के लिये तशरीफ़ ले गये, अज़ान हो गयी, अभी जमाअ़त नहीं खड़ी हुयी थी कि उस मुअज़्ज़िन ने लोगें को जमा करने के लिये आवाज़ दे दी: "अस्सलातु जामिअ़तुन" कि नामाज़ खड़ी हो रही है, आ जाओ, और एक बार शायद "हय्य अ़लस्सला:" भी कह दिया, ताकि जो लोग अब तक नहीं आये हैं, वे जल्दी से आ जायें, जब हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० ने ये अल्फ़ाज़ सुने तो फ़ौरन अपने साथियों से फ़रमाया कि:

"اخرجنا بنا من عند هذا المبتدع" (سنن ترمذی)

मुझे इस बिद्अ़ती के पास से निकालो, इसलिये कि यह शख़्स

बिद्अ़त कर रहा है, अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जो अज़ान का तरीक़ा तबाया था वह तो एक मर्तबा होती है, और वह हो चुकी, दोबारा ऐलान करना यह हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का तरीक़ा नहीं, यह तरीक़ा बिद्अ़त है, इसलिये मुझे इस मस्जिद से निकालो, मैं जा रहा हूं।

क़ियामत और बिद्अ़त दोनों डरने की चीज़ें हैं

इसलिये सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस हदीस के अन्दर जहां अपनी उम्मत को इस बात से डरा रहे हैं कि एक लश्कर सुबह या शाम तुम पर हमला करने वाला है, वहां साथ ही आइन्दा आने वाली गुमराहियों से बचाने के लिये यह जुम्ला इरशाद फ़रमाया कि: बद्तरीन चीज़ें वे हैं जो इन्सानों ने अपनी तरफ़ से घड़ ली हैं, और उनको दीन का हिस्सा बना दिया है, जब्कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दीन का वह तरीक़ा नहीं बताया, इस से परहेज़ करो, वर्ना वह तुम्हें गुमराही की तरफ़ ले जायेगी।

हमारे हक़ में सब से ज़्यादा ख़ैर-ख़्वाह कौन?

फिर अगला जुम्ला फ़रमाया कि:

"انا اولی بکل مؤمن من نفسه"

मैं हर मोमिन से उसकी जान से ज़्यादा क़रीब हूं, यानी इंसान ख़ुद अपनी जान का इतना ख़ैर-ख़्वाह नहीं हो सकता जितना मैं तुम्हारा ख़ैर-ख़्वाह हूं, जैसे बाप अपने बच्चे पर शफ़्क़त करता है कि अपने ऊपर मशक़्क़त झेल लेगा, मेहनत उठा लेगा, लेकिन औलाद की तक्लीफ़ बर्दाश्त नहीं कर सकता, इस लिये आपने फ़रमाया, मैं तुम्हारे लिये तुम्हारी जान से ज़्यादा क़रीब हूं, जो कुछ मैं तुम से कह रहा हूं, वह कोई अपने मफ़ाद की ख़ातिर नहीं कह

रहा हूं, बल्कि तुम्हारे फ़ायदे के लिये कह रहा हूं इसलिये कि मैं देख रहा हूं कि कहीं यह क़ौम गुमराही में मुब्तला होकर अपने आप को जहन्नम का हक़दार न बनाले, आगे फ़रमाया कि:

"من ترك مالا فلاهله، ومن ترك دينا اوضياعًا فالي وعلى"

यानी आख़िरत में तो मैं तुम्हारा ख़ैर-ख़्वाह हूं ही, दुनिया के अन्दर भी यह मामला है कि अगर कोई शख़्स कुछ माल बतौर तर्के के छोड़ गया है, तो वह मीरास उसके घर वालों के लिये है, शरीअ़त के मुताबिक़ वह मीरास आपस में तक़्सीम कर लें, लेकिन अगर कोई शख़्स अपने ऊपर क़र्ज़ा छोड़ गया है, और तर्के में इतना माल नहीं है कि उससे क़र्ज़ा अदा किया जा सके, या औलाद छोड़ गया, जिसकी कोई परवरिश करने वाला नहीं है, तो वे क़र्ज़े और वह औलाद मेरे पास ले आओ, मैं ज़िन्दगी भर उनकी देख भाल करूंगा, यह सब इसलिये फ़रमाया ताकि यह यक़ीन हो जाये कि मुझे तुम्हारी ख़ैर-ख़्वाही मतलूब है, तुम्हारा रुपया पैसा मतलूब नहीं है। जैसा कि पिछली हदीस में फ़रमाया कि मैं तुम्हारी कमरें पकड़ पकड़ कर जहन्नम से रोकना चाहता हूं, और तुम उसमें गिरे जा रहे हो, और मैं तुम्हें बचा रहा हूं कि ख़ुदा के लिये इन गुनाहों से रुक जाओ, ख़ुदा के लिये इन बिद्अ़तों से बाज़ आ जाओ, ताकि इस अ़ज़ाबे जहन्नम से नजात पा जाओ।

"فانا آخذ بحجزكم عن النار وانتم تقتحمون فيها" (صحیح بخاری)

सहाबा की ज़िन्दगी में इन्क़िलाब कहां से आया?

यह हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वे बातें थीं जिन्हों ने सहाबा-ए-किराम रज़ि० की ज़िन्दगी में इन्क़िलाब पर्बा किया, और ऐसी तब्दीलियां लायीं कि एक एक सहाबी कहां से कहां पहुंच गया, जब बात दिल से निकलती थी, दिल पर असर करती थी,

इसलिये सरकरे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के एक एक जुम्ले ने लोगों की ज़िंदगियां बदल दीं, आज हम घन्टों तक़रीर करते हैं, घन्टों दीन की बातें करते हैं, लेकिन कोई तब्दीली और इन्क़िलाब नहीं आता, कोई टस से मस नहीं होता, इसलिये कि बहुत सी बार कहने वाला ख़ुद उस पर कार बन्द नहीं होता, और हमारे दिल में वह जज़्बा और दर्द नहीं, जिसकी वजह से सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बातों से सहाबा की ज़िन्दगियों में इन्क़िलाब बर्पा हुआ, आज भी जितना असर बराहे रास्त किताबुल्लाह के कलिमात में है, और बराहे रास्त नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के कलिमात में है, कितनी ही लच्छे दार तक़रीरें कर लो, उसमें वह असर नहीं होता, अल्लाह तआला हम लोगों को इसकी क़द्र करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमायें।

बिद्अत क्या है?

बाज़ हज़रात यह कहते हैं कि बिद्अत की दो क़िस्में होती हैं, एक "बिद्अते हसना" और एक "बिद्अते सैयआ", यानी बाज़ काम बिद्अत तो होते हैं, लेकिन अच्छे होते हैं, और बाज़ काम बिद्अत भी हैं और बुरे भी हैं, इसलिये अगर कोई अच्छा काम शुरू किया जाये तो उसको "बिद्अते हसना" कहा जायेगा, और उसमें कोई ख़राबी नहीं है।

बिद्अत के लुग्वी मायने

ख़ूब समझ लीजिये कि बिद्अत कोई अच्छी नहीं होती, जितनी बिद्अतें हैं, वे सब बुरी हैं, असल बात यह है कि बिद्अत के दो मायने होते हैं, एक लुग्वी, और एक इस्तिलाही। अगर आप लुग़त और डिक्शनरी में बिद्अत के मायने देखेंगे तो आपको नज़र आयेगा कि लुग़त में उसके मायने नई चीज़ के हैं, इसलिये जो भी

नई चीज़ है उसको लुग़्वी एतिबार से बिद्अ़त कह सकते हैं. जैसे यह पंखा, यह बिजली, यह ट्रेन और हवाई जहाज़ वग़ैरह लुग़त और डिक्शनरी के एतिबार से सब बिद्अ़त हैं, क्योंकि ये चीज़ें हमारे दौर की ही पैदावार हैं मुसलमानें के अव्वलीन दौर में इनका वजूद न था ये सब नई चीज़ें हैं।

लेकिन शरीअ़त की इस्तिलाह में हर नई चीज़ को बिद्अ़त नहीं कहते, बल्कि बिद्अ़त के मायमे यह हैं कि दीन में कोई नया तरीक़ा निकालना, और उस तरीक़े को ख़ुद से मुस्तहब या लाज़िम या मस्नून क़रार देना, जिसको नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और ख़ुलफ़ा–ए–राशिदीन ने मस्नून क़रार नहीं दिया, इसको बिद्अ़त कहेंगे, इस इस्तिलाही मायने के लिहाज़ से जिन चीज़ों को बिद्अ़त कहा गया है उनमें से कोई बिद्अ़त अच्छी नहीं होती, और ऐसी कोई बिद्अ़त "हसना" नहीं है बल्कि हर बिद्अ़त बुरी ही है।

शरीअ़त की दी हुई आज़ादी को किसी क़ैद का पाबन्द बनाना जायज़ नहीं

अलबत्ता कुछ चीज़ें अल्लाह तआ़ला ने मुबाह क़रार दे दी हैं, या कुछ चीज़ें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मस्नून और अज्र व सवाब का सबब तो क़रार दी हैं, लेकिन उन चीज़ों में शरीअ़त ने कोई ख़ास तरीक़ा मुक़र्रर नहीं किया कि इस तरह करोगे तो सवाब ज़्यादा मिलेगा, और इस तरह करोगे तो सवाब कम मिलेगा। एसे कामों को जिस तरीक़े से भी अन्जाम दे लिया जाये वह मूजिबे सवाब होता है।

सवाब पहुंचाने का तरीक़ा

जैसे किसी मुर्दे को ईसाले सवाब करना बड़ी फ़ज़ीलत की चीज़ है, जो शख़्स किसी मरने वाले को सवाब पहुंचाये तो उसको दुगना सवाब मिलता है, एक उसके अ़मल करने का सवाब, और दूसरे एक मुसलमान के साथ हमदर्दी करने का सवाब, लेकिन शरीअ़त ने सवाब पहुंचाने के लिये कोई तरीक़ा मुक़र्रर नहीं किया कि ईसाले सवाब (सवाब पहुंचाना) सिर्फ़ कुरआन शरीफ़ पढ़ कर ही करो, या नामज़ पढ़ कर ही करो, बल्कि जिस वक़्त जिस नेक काम की तौफ़ीक़ हो जाये उस नेक काम का ईसाले सवाब जायज़ है, तिलावते कलाम पाक का ईसाले सवाब कर सकते हैं, सदक़ा भी कर सकते हैं, नफ़्ली नमाज़ पढ़ कर उसका ईसाले सवाब कर सकते हैं, ज़िक्र व तसबीह का भी कर सकते हैं, यहां तक कि अगर कोई किताब लिखी है, और कोई तसनीफ़ व तालीफ़ की है, उसका भी ईसाले सवाब किया जा सकता है, अगर कोई वअ़्ज़ व नसीहत की है तो उसका भी ईसाले सवाब किया जा सकता है। ग़र्ज़ यह कि जितने भी नेक काम हैं, सब का ईसाले सवाब किया जा सकता है, और इसी तरह शरीअ़त ने ईसाले सावब के लिये कोई दिन मुक़र्रर नहीं किया कि फ़लां दिन करो, और फ़लां दिन न करो, बल्कि जिस वक़्त उस शख़्स का इन्तिक़ाल हुआ है, उसके बाद जिस वक़्त चाहें ईसाले सवाब कर सकते हैं, चाहे पहले दिन करे, चाहे दूसरे दिन करे, चाहे तीसरे दिन करे, जब चाहे करे, कोई दिन मुक़र्रर नहीं है, अब अगर कोई शख़्स ईसाले सवाब का कोई भी तरीक़ा इख़्तियार करे जिसकी शरीअ़त ने इजाज़त दी है, तो इसमें कोई ख़राबी नहीं।

किताब तसनीफ़ करके ईसाले सवाब कर सकते हैं

जैसे मैंने आम मुसलमानों के लिये एक किताब लिखी, और किताब लिखने का मक़्सद तबलीग़ व दावत है, और कितबा लिखने के बाद दुआ करता हूं कि या अल्लाह! किताब लिखने का सवाब फ़लां शख़्स को पुंचा दीजिये, तो ये ईसाले सवाब दुरुस्त है, हालां कि किताब लिख कर ईसाले सवाब करने का अ़मल न तो कभी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने किया और न साहबा –ए–किराम ने किया, लेकिन आपने ईसाले सवाब करने की फ़ज़ी–लत बयान फ़रमाई, इसलिये यह जो मैं ईसाले सवाब कर रहा हूं यह बिद्अ़त नहीं, लेकिन अगर मैं यह कहूं कि किताब लिख कर ईसाले सवाब करने का तरीक़ा दूसरे तरीक़ों से अफ़ज़ल और बेहतर है, और यही तरीक़ा सुन्नत है, इस सूरत में मेरा यही अ़मल जो मूजिबे अज्र व सवाब था, बिद्अ़त हो जायेगा, इसलिये कि मैंने अपनी तरफ़ से दीन में एक ऐसी चीज़ दाख़िल कर दी जो दीन का हिस्सा नहीं थी।

तीसरा दिन लाज़िम कर लेना बिद्अ़त है

इसी तरह हर दिन ईसाले सवाब करना जायज़ था, पहले दिन भी, दूसरे दिन भी और तीसरे दिन भी, फ़र्ज़ करो कि एक शख़्स तीसरे दिन घर पर बैठे ईसाले सवाब कर रहा है तो इसमें कोई हर्ज नहीं, जायज़ है, लेकिन अगर कोई यह कहे कि यह तीसरा दिन ख़ास तौर पर ईसाले सवाब के लिये मुक़र्रर है, और इस तीसरे दिन में ईसाले सवाब करना ज़्यादा फ़ज़ीलत का सबब है, या यह सुन्नत है, या यह कहे कि अगर कोई शख़्स तीसरे दिन ईसाले सवाब नहीं करेगा तो उसको ना वाक़िफ़ों की लानत व मलामत का शिकार होना पड़ेगा, अब यह ईसाले सवाब बिद्अ़त हो

जायेगा, इसलिये कि इस अमल को अपनी तरफ़ से एक ख़ास दिन में लाज़िम और ज़रूरी क़रार दे दिया।

जुमे के दिन रोज़े की मुमानअत फ़रमा दी

हुज़ूर अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जुमे के दिन की कितनी फ़ज़ीलत बयान फ़रमाई है, और हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० फ़रमाते हैं किः

"قل ماكان يفطر يوم الجمعة" (ترمذی شریف)

यानी बहुत कम ऐसा होता था कि जुमे के रोज़ आपने रोज़ा न रखा हो, बल्कि अक्सर जुमे के दिन रोज़ा रखा करते थे, इस लिये यह फ़ज़ीलत वाला दिन रोज़े के साथ गुज़रे तो अच्छा है, लेकिन आपको देख कर रफ़्ता रफ़्ता लोगों ने भी जुमे के दिन रोज़ा रखना शुरू कर दिया और जुमे के दिन को रोज़े के साथ मख़्सूस कर दिया, जिस तरह यहूदी लोग हफ़्ते के दिन को मख़्सूस करते हैं, इसलिये यहूदियों के यहां हफ़्ते (शनिवार) के दिन रोज़ा रखा जाता था, और उनके ज़ेहनों में हफ़्ते के दिन रोज़ा रखने की ख़ास फ़ज़ीलत और अहमियत थी। चुनांचे जब हुज़ूरे पाक सल्ल–ल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह देखा तो आपने जुमे के दिन रोज़ा रखने से मना फ़रमा दिया, और बाक़ायदा हदीस में आता है कि आपने फ़रमाया कि जुमे के रोज़ कोई शख़्स रोज़ा न रखे, यह आपने इसलिय फ़रमाया कि कहीं ऐसा न हो कि जिस दिन को अल्लाह तआ़ला ने मुताय्यन नहीं किया, लोग उसको अपनी तरफ़ से मुताय्यन कर दें, और वह अ़मल दूसरों की नज़र में ज़रूरी न समझा जाने लगे। इसलिये आपने रोज़े के लिये जुमे को मुताय्यन कर लेने से मना फ़रमा दिया कि ख़ुद आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इसको ज़रूरी और लाज़मी नहीं समझते थे, न

दूसरों के लिये इस तरह का कोई एहतिमाम व पाबंदी जारी कराना चाहते थे। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

तीजा, दसवां, चालीसवां क्या हैं?

बहर हाल! मैं जो यह अर्ज़ कर रहा था कि यह तीजा, दसवां, बीसवां और चालीसवां जायज़ नहीं है, यह इसलिये कि लोगों ने इन दिनों को ईसाले सवाब के लिये मख़्सूस कर दिया है, लेकिन अगर कोई शख़्स ईसाले सवाब के लिये कोई दिन मख़्सूस न करे, बल्कि इत्तिफ़ाक़न वह तीसरे दिन ईसाले सवाब करले, तो इसमें कोई ख़राबी नहीं, अलबत्ता चूंकि आज कल तीसरे दिन ही को बाज़ लोगों ने लाज़िम समझ रखा है इसलिये उनकी मुशाबहत से बचने के लिये बतौर ख़ास तीसरे दिन यह काम न करे तो ज़्यादा बेहतर है।

अंगूठे चूमना क्यों बिद्अ़त है?

आपने मस्जिद से अज़ान की आवाज़ सुनी, और अज़ान के अन्दर जब "अश्हदु अन्न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह" सुना, आपके दिल में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत का जज़्बा पैदा हुआ, और मुहब्बत से बेइख़्तियार होकर आपने अंगूठे चूम कर आंखों से लगाये, बज़ाते ख़ुद यह अ़मल कोई गुनाह और बिद्अ़त नहीं, इसलिये कि उसने यह अ़मल बेइख़्तियार सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत में किया, और सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत और अ़ज़्मत एक क़ाबिले तारीफ़ चीज़ है और ईमान की अ़लामत है, और इन्शा अल्लाह इसी मुहब्बत पर अज्र व सवाब मिलेगा, लेकिन अगर कोई शख़्स सारी दुनिया के लोगों से यह कहना शुरू कर दे कि जब कभी अज़ान में "अश्हदू अन्न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह" पढ़ा जाये तो

तुम सब उस वक़्त अपने अंगूठों को चूमा करो, इसलिये कि उस वक़्त अंगूठों को चूमना मुस्तहब या सुन्नत है और जो शख़्स अंगूठों को न चूमे, वह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मुहब्बत करने वाला नहीं है, तो वही अ़मल जो मुहब्बत के जज़्बे से बिल्कुल जायज़ था, अब बिद्अ़त बन गया, इसमें बारीक फ़र्क़ है कि अगर यह जायज़ अ़मल सही जज़्बे से किया जा रहा है और इसमें अपनी तरफ़ से कोई क़ैद नहीं है तो वह बिद्अ़त नहीं है, और जब उसी अ़मल को अपने ऊपर लाज़िम कर लिया, या उसको सुन्नत समझ लिया, और अगर कोई दूसरा शख़्स वह अ़मल न करे तो उसको लान तान करना शुरू कर दिया,बस वही अ़मल बिद्अ़त बन जायेगा।

या रसूलल्लाह! कहना कब बिद्अ़त है?

मैं तो यहां तक कहता हूं कि एक शख़्स के सामने किसी मज्लिस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मुबारक नाम आया, और उसको बेइख़्तियार यह तसव्वुर आया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सामने मौजूद हैं, और उसने यह तसव्वुर करके कह दिया कि "अस्सलातु वस्सलामु अ़लैक या रसूलल्लाह" और हाज़िर नाज़िर का अ़क़ीदा उसके दिल में नहीं था, बल्कि जिस तरह एक आदमी ग़ायब चीज़ का तसव्वुर कर लेता है कि यह चीज़ मेरे सामने मौजूद है, तो उस तसव्वुर करने में और ये अल्फ़ाज़ कहने में भी कोई हरज नहीं।

लेकिन अगर कोई शख़्स यह अल्फ़ाज़ इस अ़क़ीदे के साथ कहे कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यहां पर इस तरह हाज़िर व नाज़िर हैं जिस तरह अल्लाह तआ़ला हाज़िर व नाज़िर हैं, तो यह शिर्क हो जायेगा, मआ़ज़ल्लाह, (ख़ुदा की पनाह)

और अगर इस अक़ीदे के साथ तो नहीं कहे, लेकिन यह सोचा कि "अस्सलातु वस्सलामु अ़लै-क या रसूलल्लाह" कहना सुन्नत है, और इस तरह दुरूद पढ़ना ज़रूरी है, और जो शख़्स इस तरह यह अल्फ़ाज़ न कहे गोया उसके दिल में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत नहीं है, तो फिर यही अ़मल बिद्अ़त और गुमराही है।

अ़मल का ज़रा सा फ़र्क़

इसलिये अ़क़ीदे और अ़मल के ज़रा से फ़र्क़ से एक जायज़ चीज़ ना जायज़ और बिद्अ़त बन जाती है, आप जितनी बिद्अ़तें देखेंगे, उनमें अक्सर ऐसी हैं जो बज़ाते ख़ुद मुबाह थीं और जायज़ थीं, लेकिन जब उसे फ़र्ज़ की तरह लाज़िम कर लिया गया तो उससे वह बिद्अ़त बन गयी।

ईद के दिन गले मिलना कब बिद्अ़त है?

ईद के दिन आपने ईद की नमाज़ पढ़ी और ईद की नमाज़ के बाद दो मुसलमान भाई ख़ुशी के जज़्बे में आ कर आपस में एक दूसरे से गले मिल लिये, तो असल में गले मिलना कोई ना' जायज़ फ़ेल नहीं, या जैसे अभी आप मज्लिस से उठें, और किसी से गले मिल लें तो कोई गुनाह की बात नहीं, जायज़ है, लेकिन अगर कोई शख़्स यह सोचे कि ईद की नमाज़ के बाद गले मिलना ईद की सुन्नत है, और यह भी ईद की नमाज़ का हिस्सा है और जब तक गले नहीं मिलेंगे उस वक़्त तक ईद नहीं होगी, तो यही अ़मल उस वक़्त बिद्अ़त बन जायेगा, इसलिये कि एक ऐसी चीज़ को सुन्नत क़रार दिया जिसको नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सुन्नत क़रार नहीं दिया, और सहाबा-ए-किराम ने उसको सुन्नत क़रार नहीं दिया, और न उसकी पाबन्दी की, अब अगर कोई शख़्स

गले मिलने से इन्कार कर दे कि मैं तो नहीं मिलता, और आप उससे कहें कि आज ईद का दिन है क्यों गले नहीं मिलते? इसका मतलब यह है कि आपने ईद के दिन गले मिलने को लाज़मी क़रार दे दिया, और ख़ुद से लाज़िम क़रार दे लेना ही उसको बिद्अ़त बना देता है, लेकिन वैसे ही इत्तिफ़ाक़ी तौर पर गले मिलने को दिल चाहा, और गले मिल लिये तो यह अपने आप में बिद्अ़त नहीं। बहर हाल! किसी भी मुबाह अ़मल को लाज़िम क़रार देने या उसको सुन्नत या वाजिब क़रार देने से वह बिद्अ़त बन जाता है।

क्या "तबलीग़ी निसाब" पढ़ना बिद्अ़त है?

एक साहब मुझसे पूछने लगे कि यह तबलीग़ी जमाअ़त वाले तबलीग़ी निसाब पढ़ते हैं, और लोग उस पर एतिराज़ करते हैं कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में और सहाबा-ए-किराम के ज़माने में तबलीग़ी निसाब कौन पढ़ता था? और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के ज़माने में कौन पढ़ता था, इस लिये यह तबलीग़ी निसाब पढ़ना भी बिद्अ़त हो गया, लेकिन मैंने आपके सामने जो तफ़्सील बयान की, उससे यह बात वाज़ेह हो गयी कि इल्म और दीन की बात कहना और उसकी तबलीग़ करना हर वक़्त और हर आन जायज़ है। जैसे हम और आप जुमे के रोज़ असर के बाद यहां जमा होते हैं, और दीन की बातें सुनते और सुनाते हैं, अब अगर कोई शख़्स यह कहे कि हुज़ूरे अक़्दस सल्ल-ल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में तो ऐसा नहीं होता था कि लोग ख़ास तौर पर जुमे के रोज़ असर के बाद जमा होते हों, और फिर उनके सामने दीन की बात की जाती हो, इसलिये यह हमारा जमा होना भी बिद्अ़त है, ख़ूब समझ लीजिये कि यह इसलिये बिद्अ़त नहीं कि दीन की तालीम व तबलीग़ हर वक़्त और हर

आन जायज़ है, लेकिन अगर हम में से कोई शख़्स यह कहने लगे कि जुमे के दिन असर के बाद मस्जिदे बैतुल मुकर्रम ही में यह इज्तिमा मसनून है, और अगर कोई शख़्स इस इज्तिमे में शरीक न हो तो उसको तो दीन का शौक़ नहीं है, उसके दिल में दीन की अज़्मत और मुहब्बत नहीं है, इसलिये बैतुल मुकर्रम में जुमे के दिन नहीं आता, तो इस सुरत में यही इज्तिमे का अ़मल जो हम और आप कर रहे हैं, बिद्अ़त बन जायेगा, अल्लाह तआ़ला महफ़ूज़ रखे। अब एक आदमी यहां आने के बजाये किसी दूसरी जगह पर चला जाता है, और वहां जाकर दीन की बातें सुनता है, तो वह भी सवाब का काम कर रहा है, अब अगर कोई श्ख़्स उस से कहे कि बैतुल मुकर्रम ही में दीन की बातें सुनने के लिये आये, और जुमा के दिन ही आये, और असर के बाद ही आये, और बयान भी फ़लां शख़्स का ही हो तो इस सूरत में यही अ़मल बिद्अ़त बन जायेगा।

इसी तरह लोग तबलीग़ी निसाब पढ़ते हैं और दीनी आमाल की फ़ज़ीलतें सुनाते हैं, यह बड़े सवाब का काम है, अब अगर कोई शख़्स इसको मुताय्यन करे कि तब्लीग़ी निसाब ही पढ़ना ज़रूरी है, और यही सुन्नत है और इसके अ़लावा अगर कोई दूसरी किताब पढ़ी जायेगी तो वह मक़बूल नहीं, तो इस सूरत में यह तबलीग़ी निसाब पढ़ना भी बिद्अ़त बन जायेगा, इस लिये किसी भी अ़मले मुबाह को या अज्र व सवाब वाले अ़मल को ख़ास वक़्त और ख़ास हालात के साथ जोड़ कर के लाज़िम क़रार दे दिया जाये तो वही बिद्अ़त बना देता है।

सीरत के बयान के लिये ख़ास तरीक़ा मुक़र्रर करना

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सीरत बयान करना कितने अज्र व फ़ज़ीलत का काम है, वे लमहात जिनमें हुज़ूरे

अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ज़िक्र किसी भी हैसियत से हो, वह हासिले ज़िन्दगी है।

"औक़ात हमा बूद कि बयान बसर कर्द"

हक़ीक़त में क़ाबिले क़दर औक़ात (समय) वही हैं जो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़िक्रे मुबारक में ख़र्च हो जायें, लेकिन अगर कोई शख़्स इसके लिये कोई ख़ास वक़्त मुक़र्रर कर दे, ख़ास दिन मुताय्यन करे, या ख़ास मज्लिस मुताय्यन कर ले, और यह कहे कि इसी ख़ास दिन और इसी सूरत में अज्र व सवाब मुन्हसिर है तो यही क़ैदें इस जायज़ और मुबाह अ़मल को बिद्अ़त बना देंगी।

दुरूद शरीफ़ पढ़ना भी बिद्अ़त बन जायेगा

इसकी आसान सी मिसाल समझ लीजिए कि हमें नमाज़ में अत्तहिय्यात पढ़ने के बाद दुरूद शरीफ़ पढ़ने की तलक़ीन की गयी है, "अल्लाहुम्म सल्लि अ़ला मुहम्मदिन व अ़ला आलि मुहम्मदिन कमा सल्लै–त अ़ला इब्राही–म व अ़ला आलि इब्राही–म इन्न–क हमीदुम् मजीद" यह दुरूद शरीफ़ पढ़ना हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमें सिखा दिया, इसको पढ़ना जायज़ और मसनून है, अब अगर कोई शख़्स दूसरा दुरूद शरीफ़ पढ़े जिसके अल्फ़ाज़ इससे अलग हों, जैसेः "अल्लाहुम्म सल्लि अ़ला मुहम्मदिन् नबिय्यिल उम्मिय्यि व अ़ला आलिही व स–हबिही व बारिक व सल्लिम" पढ़े तो यह भी जायज़ है, कोई गुनाह नहीं, और दुरूद पढ़ने की सुन्नत अदा हो जायेगी, लेकिन अगर कोई शख़्स यह कहे कि वह दुरूद शरीफ़ न पढ़ो, बल्कि यह दूसरे वाला दुरूद शरीफ़ पढ़ो और यही पढ़ना सुन्नत है, तो इस सूरत में दुरूद शरीफ़ पढ़ना जो बड़ी फ़ज़ीलत वाला अ़मल था, बिद्अ़त बन

जायेगा।

दुनिया की कोई ताक़त इसको सुन्नत नहीं क़रार दे सकती

अच्छी तरह समझ लीजिये कि लोगों ने जो बिद्अ़त की क़िस्में निकाल ली हैं कि एक "बिद्अ़ते हसना" होती है और एक "बिद्अ़ते सैयआ" होती है, एक अच्छी होती है, और एक बुरी होती है, याद रखो, बिद्अ़त कोई हसना नहीं, कोई बिद्अ़त अच्छी नहीं, जो तरीक़ा नबी करीम सरवरे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने और हज़रात ख़ुलफ़ा–ए–राशिदीन और सहाबा–ए–किराम रज़ि० ने ज़रूरी क़रार नहीं दिया, और सुन्नत क़रार नहीं दिया, दुनिया की कोई ताक़त उसको वाजिब, सुन्नत और मुस्तहब क़रार नहीं दे सकती, अगर कोई ऐसा करेगा तो वह ज़लालत और गुमराही होगी, इसलिये कि इसका मतलब यह होगा कि सहाबा–ए–किराम दीन को इतना नहीं समझते थे, जितना हम समझते हैं।

एक अ़जीब कहावत

मेरे वालिद माजिद क़द्दसल्लाहू सिर्रहू हिन्दी ज़बान की एक कहावत सुनाया करत थे कि:

"बनिये से सियाना सो बावला"

हिन्दू बनिये ताजिर हुआ करते थे, और उनके बारे में यह मशहूर था कि यह हिन्दू बनिया तिजारत और पैसे बढ़ाने में बहुत सियाना, चालाक और होशियार होता है। तो उनके बारे में यह कहावत मशहूर थी कि "बनिये से सियाना सो बावला" यानी अगर कोई शख़्स यह दावा करे कि मैं तिजारत और पैसे बढ़ाने में बनिये से ज़्यादा सियाना हूं तो वह हक़ीक़त में बावला और पागल है, बेवकूफ़ और अहमक़ है, इसलिये कि कारोबारी मामलात में तजुर्बा

यह है कि बर्रे सग़ीर (भारत, पाकिस्तान और बंगलादेश वग़ैरह) में बनिये से ज़्यादा सियाना कोई नहीं, इस कहावत से हज़रत वालिद साहिब रह० यह नतीजा निकाला करते थे कि सहाबा-ए-किराम रज़ि० दीन के सियाने थे, अब अगर कोई शख़्स यह दावा करे कि मैं दीन में उनसे ज़्यादा सियाना हूं, यानी जिन कामों को उन्हों ने ज़रूरी और लाज़िम क़रार नहीं दिया मैं उनको लाज़िम और ज़रूरी क़रार देता हूं, तो हक़ीक़त में वह बावला, बेवक़ूफ़ और अहमक़ है।

ख़ुलासा

ख़ुलासा यह है कि कुछ नयी चीज़ें तो वे होती हैं जिन को कोई भी शख़्स दीन का हिस्सा नहीं समझता, जैसे यह पंखा, यह लाईट, ट्रेन, हवाई जहाज़ वग़ैरह, ये चीज़ें इसलिये बिद्अ़त नहीं हैं कि इनको कोई भी दीन का हिस्सा और लाज़िम और ज़रूरी नहीं समझता, और दीन के जिन कामों को अन्जाम देने का अल्लाह और अल्लाह के रसूल ने कोई ख़ास तरीक़ा नहीं बतलाया, उन कामों को जिस तरह चाहें अन्जाम दे सकते हैं, लेकिन अगर उन कामों के लिये अपनी तरफ़ से कोई ख़ास तरीक़ा मुक़र्रर कर लिया जाये, और उसी तरीक़े को लाज़िम और ज़रूरी क़रार दे दिया जाये तो वह बिद्अ़त बन जायेगा। यह बात अगर ज़ेहन में रहे तो इस सिलसिले में पैदा होने वाले तमाम शुब्हात दूर हो जायेंगे। अल्लाह तआ़ला हमको बिद्अ़त से बचने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, और दीन की सही समझ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

"وآخر دعوانا ان الحمد للہ رب العالمین۔